ऐयाश मुर्दे

लेखक

डा रांगेय राघव

किताब महल इलाहाबाद

विषय सूची

देवदासी

उस समय मन्दिर निर्जन हो चुका था। निस्तब्धता सनसना रही थी। बाहर घोर अन्धकार था। आकाश में बिजली कड़क रही थी। उस युवक ने तलवार को टेका और उठ खड़ा हुआ। भीतर सब काम कर चुकने पर पुजारी ने सोचा कि अब शीघ्र ही उसे प्रतिमा के चरणों पर शीश रखकर सोने जाना चाहिए।

पल्लव राज के इस विशाल मन्दिर में कामाक्षी का यह भव्य स्वरूप देखने के लिए दक्षिण पथ के अनेक भागों से लोग आ आकर एकत्रित होते थे। तीन सौ वर्ष पहले सातवाहनों के अन्त पर सम्राट् वि[illegible] ने पल्लव साम्राज्य को स्वतन्त्र कर दिया था। उनके उत्तराधिकारी आज कदम्बों और गांगेयों के भी प्रभु थे। पेलार नदी के पास काञ्ची का भव्य नगर भुवन विख्यात था। राज प्रासाद के विराट अलिन्दों में दिन में अगरु धूम जलता रात्रि में दीपाधारों से प्रकाश जगमगाता। बाजार हाट में सुदूर जावा सुमात्रा के व्यापारी आ आकर बैठते। समुद्र तीर पर अनेक सफेद पाल वाले जहाज़ खड़े रहते प्रकाश स्तम्भों से रात को किरण फूट फूटकर अथाह सागर की चञ्चल जलराशि पर खेल उठतीं। महेन्द्र के समान विक्रमी सम्राट् सिंहविष्णु के चरणों पर आज प्राचीन चोल और पाण्ड्य के रत्नजटित मुकुट रखे थे चालुक्य राज ने मैत्री का कर बढ़ा दिया था। सम्राट सिंहविष्णु युवावस्था को आज से अनेक वर्ष पहले पार कर चुके थे। राजकुमार महेन्द्र वर्मा की सन्त अप्पारस्वामी के प्रति श्रद्धा होना प्रजा में प्रसिद्ध हो चुका था। क्योंकि वह पिता की आज्ञा के बिना ही नगर के ईशान कोण में शैव मन्दिर बनवा रहे थे।

पुजारी रत्नगिरि ने इधर उधर देख भक्ति से प्रतिमा को प्रणाम

किया और सोने चला गया। प्राय आधी रात बीत गयी। आकाश में बादल गरज रहे थे। मन्दिर का विशाल प्राङ्गण पानी से भीग गया था। उसी समय बिजली बड़े वेग से कड़क उठी। मन्दिर का विशाल गोपुर अन्धकार में एक बार चमक उठा। युवक तलवार लिये कुछ देर खड़ा रहा फिर बाह्य परिवेष्टि को लाँघकर भीतर अलिन्द में आ गया। वह एक स्तम्भ के पीछे हो गया और अन्धकार में कुछ देखने का प्रयत्न करने लगा।

किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखकर धीरे से कहा— आ गये रङ्गभद्र ?

रङ्गभद्र ने मुड़कर कहा— तुम बुलातीं और मैं न आता रुक्मिणी ! देवदासी का कहना तो भगवान् भी नहीं टाल सकते फिर मैं तो साधारण मनुष्य हूँ।

तुम सचमुच बड़े साहसी हो कुमार ! देवदासी ने धीरे से कहा। युवक ने उसका यह दीर्घ निश्वास भी सुना। उसने उद्वेग से उसका हाथ पकड़ लिया और कहा— रुक्मिणी मैं कब तक तुम्हारी अवहेलना में तड़पता रहूँगा ? कब तक मैं उस भविष्य के सागर में लहरों की दया पर अपना पोत भटकाता रहूँगा ? आज प्राय एक वर्ष बीत गया। अब मुझे फिर सिंहल लौट जाना होगा। अब के मैं सिंहल के बहुमूल्य मोती काशी भेजने का व्यापार करना चाहता हूँ। चलोगी मेरे साथ ?

देवदासी ने कुछ नहीं कहा। वह चुपचाप देखती रही। युवक ने फिर कहा— सुन्दरी तुम किस चिन्ता में डूब गयी हो ? धन की कमी नहीं धर्म की कमी नहीं अधिकार की कमी नहीं प्रेम की कमी नहीं और तुम रूपशालिनी हो तो फिर मुझे रूप की कमी नहीं—फिर तुम्हें कौन सी चिन्ता खाये जा रही है ?

देवदासी काँप उठी। उसने धीरे से कहा— धीरे कुमार धीरे कहीं देवता न सुन लें। मैं जाती हूँ।

वह सचमुच एकदम चली गयी और युवक के कण्ठ में उसका स्वर अटक कर रह गया।

मन्दिर का विशाल अलिन्द सूना हो गया। युवक लौट चला।

—२—

दूसरे दिन पुजारी ने पूजा समाप्त करके बाह्य प्रवेशद्वार के पास आकर देखा सूर्य्यमणि भक्ति से नमस्कार कर रही थी। उसने गद्‌गद् होकर उसे आशीर्वाद दिया। सूर्य्यमणि के श्याम मख पर उस स्वर्ण मुकुट की हल्की प्रभा छिटक कर उसे किंचित् हरिताभ बना रही थी। उसके सफ़ेद चीनाशुक में वह सुघर अङ्ग-संगठन किसी चतुर शिल्पी की कला का अदभुत प्रमाण लगता था। रत्नों और आभूषणों से लदी वह कुमारी मानसरोवर के मांसल इन्दीवर सी पुलक उठी। उसके विशाल नयनों की कोरा में शतदल के कांपते दलों की लालिमा चपल चितवन की विद्युत् वाहिनि तृष्णा को सहला रही थी। उसने कहा—देव आप आजकल मुझे कभी रामायण नहीं सुनाते? पहले तो आपका स्वर गूजता था रुक्मिणी नृत्य करती थी समस्त मन्दिर गूज उठता था माता कामाक्षी की प्रतिमा के अधरों पर मुस्कान छा जाती थी!

बेटी पुजारी ने मन्दस्मित से कहा—रत्नगिरि तो तत्पर है किन्तु तू जब से राजमाता की सेवा में जाने लगी है तब से तुझे देव सेवा का समय ही कहाँ मिलता है? अब तो तू सेनापति के पुत्र धनञ्जय की पत्नी होने जा रही है न?

हाँ भगवन्! सूर्य्यमणि ने अपने पाँव के अगूठे को लाज से देखते हुए कहा—लेकिन मैं आज रामायण सुने बिना नहीं जाऊँगी।

अरे, तेरा हठ नहीं गया पगली! रत्नगिरि ने हर्षित होते कहा। और फिर उसने आवाज़ दी—रुक्मिणी!

रुक्मिणी स्तम्भ के पीछे से निकलकर आ गयी।

वृद्ध पुजारी ने कहा— बेटी सूर्य्यमणि रामायण सुनना चाहती है।

ओह रुक्मिणी ने पुलकते हुए कहा— मुझसे ही क्यों न कह दिया ? अभी लो।

कुछ ही देर बाद उस अलिन्द में लोगों की एक भीड़ इकट्ठी हो गयी। सूर्य्यमणि ने देखा धनञ्जय भी खड़ा था।

वृद्ध रत्नगिरि ने स्वस्तिवाचन किया और मृदङ्ग पर थाप पड़ी। उधर देवदासी रुक्मणी का नूपुर बज उठा। द्रिम द्रिम के उस अप्रतिहत नाद पर यौवन से स्फीत कमल चरण का मंथर चलन स्त भा से टकराकर समस्त अंतराल में काँप उठा। युवक धनञ्जय के नयन गड़ गये। देवदासी आज मेनका-सा नृत्य कर रही थी। रत्नगिरि गाने लगे। उनके ग भीर स्वर से लोगों के हृदयों में एक पवित्र भावना छा गयी। नर्त्तकी के अङ्गचालन का मादक उल्लास धनञ्जय की धमनी धमनी में डोल उठा। सूर्य्यमणि ने एकाएक दृष्टि उठाकर देखा धनञ्जय म त्र मुग्ध सा लोलुप दृष्टि से देवदासी के उच्छृङ्खल यौवन को खा रहा था। वह चञ्चल हो गयी। शङ्का और ईर्ष्या ने उसके हृदय पर आघात किया। देवदासी नृत्य करती रही रत्नगिरि गाता रहा और सूर्य्यमणि ने देखा धनञ्जय के नयनों के पक्ष्म गिरना भूल गये थे। वह धीरे से उठी और धनञ्जय के पास गयी। धनञ्जय ने उसे मुड़कर भी नहीं देखा। सूर्य्यमणि के लिए समस्त सौन्दय विष हो गया। वह एकाएक चिल्ला उठी— रोक दो यह नृत्य ! यह नृत्य रोक दो ! नहीं नहीं यह नृ य नहीं है !

देवदासी विभोर होकर नाच रही थी। एकाएक उसके पैर ठिठक गये जैसे किसी ने उस पर वज्र का आघात किया हो। उसने देखा सूर्य्य मणि उसे ज्वलन्त नेत्रों से देख रही थी। रत्नगिरि गाना रोककर उठ खड़ा हुआ। एकत्रित जनसमुदाय कोलाहल करने लगा।

देवदासी क्रोध से पुकार उठी— देवदासी का अपमान करना

देवता का अपमान करना है मूर्ख लड़की ! यदि तेरे हृदय में पाप है तो तू मन्दिर छोड़कर चली जा

इससे पहले कि रत्नगिरि कुछ कहे रुक्मिणी परिक्रमा की ओर चल पड़ी। उन्मत्त सा धनञ्जय उसके पीछे चल दिया। सूर्य्यमणि कटे वृक्ष सी भूमि पर गिरकर रोने लगी। समुदाय तितर बितर होने लगा। रत्नगिरि कुछ भी नहीं समझा। इस प्रकार अकारण व्याघात से उसका चित्त सूर्य्यमणि से उदासीन हो गया। वह उठकर भीतर चला गया। सूर्य्य मणि स्तम्भ के किनारे रोती रही।

—३—

वृद्ध सिन्धुनाद कवि था। सूर्य्यमणि उसकी एकमात्र पुत्री थी। जब वह गाता था साम्राज्य का बड़े से बड़ा कठोर हृदय सेना का उच्च पदाधिकारी झूम उठता था। उसके गीतो को आज पल्लव ही नहीं चोल और पाण्ड्य के घर घर की स्त्रियाँ गातीं पुरुष मुग्ध होकर सुनते और सम्राट सिंहविष्णु उसे अपने भाई के समान प्यार करते। देव दासियाँ उसके गीता पर जिस तन्मयता से नृत्य करतीं उसे देखकर लगता जैसे वह सचमुच देवकन्या हों। उसके गीतों की प्रवाहमान लय प्राची से पश्चिम तक गगन में अनन्त वर्णों से भरी नीलिमा की छाया सी काँपती रहती और प्रेम और करुणा का वह स्रोत कहीं भी समाप्त नहीं होता कहीं भी जैसे विश्रांति को आवास न मिलता।

सिन्धुनाद इस समय वीणा के तारों पर उंगलियाँ फेरकर यौवन के खोये हुए स्वप्न का उत्ताल ढूंढ रहे थे। उनके शरीर पर बहुमूल्य रेशम मन्द मन्द वायु में फहरा रहा था। उनके प्रकोष्ठ की दीवारों पर सुदूर ताम्रलिप्ति के प्रसिद्ध चित्रकारों ने अद्भुत चित्र अंकित किये थे। स्फटिक के स्तम्भों पर दीपों का झिलमिल प्रकाश प्रतिध्वनित हो रहा था जैसे बादलों में बिजली चमक रही थी। मादक सुरभि वाही समीर जब अगरु धूम की कबरी खोलकर नृत्य करने लगता था तो दीवारों पर

छायाएँ मुद्रा बनाने लगतीं और वीणा के करुण स्वर रुमझुम करते वायु की लहर-लहर पर गा उठते।

सिंधुनाद इस समय दमयन्ती का विलाप गा रहे थे। उनकी यह कविता अजर अमर हो जायेगी। आज उनके भाव सीमा में नहा थे। नल चला गया है। दमयन्ती पेड़ पेड़ से पूछ रही है मृग मृगी कातर होकर रो पड़े हैं आकाश में प्रतिपदा का चंद्र उग आया है सघन वनस्पति पर उसकी विलोल मुखरा किरणें कांप रही हैं जैसे सागर पर फेन काँप रहे हों जैसे श्यामा सुंदरी के कर्णफूलों की आभा से कपोलों पर प्रकाश रणरण करता अवगुण्ठन खींच रहा हो।

सिंधुनाद तन्मय होकर विभोर हो गये। एकाएक भारी भारी श्वास लेती सूर्य्यमणि ने प्रवेश किया और चुपचाप पास बैठकर सुनने लगी।

दमयन्ती उस समय आकाश के तारों से पुकार पुकार कर पूछ रही थी—हे नील असीम के बुद्बुदों ! हे अनंत कबरी के शीशफूलो ! कहाँ है वह मेरे हृदय की एकमात्र सांत्वना ?

सूर्य्यमणि रो उठी। वृद्ध का स्वप्न टूट गया। गीत के आवर्त्तों में पड़कर सूर्य्यमणि के टूटे प्यार की भग्न नौका झटके खाने लगी। वह पिता की गोद में सिर रखकर रोने लगी। वृद्ध ने एक हाथ से वीणा को हटा दिया और फिर उसने कहा—क्या हुआ वत्से ? पहले उसने समझा शायद गीत को सुनकर रो रही है। सूर्य्यमणि ने कुछ नहा कहा। वह रोती रही। उसके मुख की पत्र-लेखा बिगड़ गयी। वृद्ध ने उसका सिर उठाया। वेदना से उसका मुख कातर हो उठा था। वृद्ध का हृदय विह्वल हो उठा। उसने कहा—पुत्री तुझे किस बात का शोक है ? मैंने आज तक कभी तेरी इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य नहीं किया। आज तक तू ही मेरे जीवन का एकमात्र सहारा रही है। फिर तेरे नयनों में यह व्याकुल अश्रु किसलिए ? करुण रात्रि की भाँति तेरे इन पङ्कज दलों पर यह नीहार कण क्यों ?

सूर्य्यमणि ने कुछ उत्तर नहीं दिया। वह रोती रही। उस समय कवि को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे साक्षात् कामाक्षी आज ग्लपथित कण्ठ से उच्छ्वास रुद्ध सी आत्तमना सिसक उठी थी। उसके नयनों में आँसू छा गये। देर तक दोनों कुछ न बोले। सिन्धुनाद अपनी पुत्री के सिर पर हाथ फेरते रहे जैसे उन्होंने कविता को सहला दिया था। सूर्य्यमणि के सघन सुचिक्कण केशों पर वृद्ध का वात्सल्य से भरा आर्द्र श्वास ऊष्मा से भरकर बिखर गया। सूर्य्यमणि का हृदय उद्वेग से बारंबार ठोकर खाकर गिर जाता और आँसू बह बह आते।

वृद्ध ने आंदोलित होकर कहा— सूर्य्ये कह न? क्या कष्ट है तुझे जो पावस की नदी की भाँति तेरे आँसू अज्ञातवास करने निकले जा रहे हैं?

सूर्य्यमणि ने सिर उठाया। आँखों में आँसू चमक रहे थे जैसे हीरक के चषक में वारुणी छलक रही थी। डबडबाते अश्रु प्रभात के उज्ज्वल प्रकाश के समान काँप रहे थे अथवा जैसे सीप में मोती जगमगा उठे हों।

सूर्य्यमणि वृद्ध ने फिर कहा— पल्लव के इस समुद्र पर्य्यंत साम्राज्य में मैं तेरे अतिरिक्त किसी को भी इतना भाग्यशाली नहीं गिनता था। आज तेरी आँखों में यह अश्रु क्यों? सिन्धुनाद ने वही किया जो तूने चाहा। जिसके लिए राजकुमारियाँ लालायित थीं उस कामदेव के सदृश लावण्य मनोहर धनञ्जय की तू पत्नी होनेवाली है फिर तुझे कैसा दुःख?

सूर्य्यमणि ने धीरे से कहा— पिता वह मेरी उपेक्षा कर रहा है। आज देवमन्दिर में एक साधारण नर्त्तकी के पीछे पागल सा घूम रहा था। मैं हृदय की साक्षी करके कहती हूँ उसने मुझे एकबार भी मुड़ कर नहीं देखा।

यह नहीं हो सकता सूर्य्यमणि यह नहीं हो सकता। वृद्ध सिन्धुनाद उठ खड़े हुए। किंतु उन्होंने कहा— प्रेम में बल नहीं चल सकता। मैं जानता हूँ धनञ्जय युवक है। यौवन प्रेम के अतिरिक्त लोभ में भी

पड़ सकता है। किन्तु बल प्रयोग भी तो नहीं किया जा सकता। मैं उसे समझाऊंगा पुत्री इतनी व्याकुल न हो।

नहीं पिता उच्छ्वसित सूर्यमणि ने कहा—नर्तकी मुझसे भी सुन्दर है। उसका रङ्ग तुहिन सा श्वेत कमल सा लालिम रेशम सा चिकना है और सागर सा गम्भीर रूप है। उसमें अनावृत यौवन है मादकता में वह मेनका जैसी है। उसके नयनों में त्रिभुवन काँपते हैं मेखला की प्रभा से उसकी मन्द मन्द गति में भुवनमोहिनी वशीकरण की शक्ति आ जाती है। उसकी कोमल बाहु जब नृत्य करने में लचकती हैं तब स्वर्ग का सुख जैसे तुला पर टंग जाता है। उसके केशों की सुरभि से देवमन्दिर कमल वन की भाँति सुगंधित रहता है उसकी मांसल गरिमा पर चीनांशुक ऐसे दिखायी देता है जैसे शरद् के प्रसन्न आकाश में धवल स्वर्ग गङ्गा का मुखरित प्रवाह हो!

सिन्धुनाद हठात् बोल उठे—सूर्य्यमणि वह कौन है?

सूर्यमणि ने पराजित स्वर में कहा—पिता वह देवदासी रुक्मिणी है।

देवदासी रुक्मिणी! उनके मुख से आश्चर्य से निकल गया।

हाँ पुजारी रत्नगिरि की पुत्री रुक्मिणी।

ओह! कहकर कवि सिंधुनाद बैठ गये जैसे एकाएक चलते चलते महानद थम जाय और समस्त लहरों का कलकल नाद क्षण भर के लिए रोककर स्तब्ध हो जाय। उन्होंने कहा—सूर्य्यमणि तू जा। मुझे सोचने दे।

सूर्य्यमणि चकित सी लौट आयी। वृद्ध सिंधुनाद को कुछ भी नहीं सूझा। वह चुपचाप वैसे ही बैठे शून्य दृष्टि से सामने जलते दीपाधार में काँपती शिखाओं को देखते रहे।

—४—

रात्रि के निरावरण नीलाकाश में सहस्रों नक्षत्र टिमटिमाने लगे।

पुजारी रत्नगिरि सोच में पड गया। उसके वृद्ध मुख पर चिंता की रेखाएँ खिच गयीं। कुछ देर वह टहलता रहा। वृद्ध सिधुनाद ने कहा— तुम जानते हो रत्नगिरि सब कुछ जानते हो। पर देवदासी के प्रति धनञ्जय का हृदय आकर्षित है यह तुम भी नहीं जानते मुझे इसका विस्मय है।

तुम भी वृद्ध हो गये हो सिधुनाद! जीवन भर जिसने अटूट विश्वामित्र सा दर्प कभी नीचा नहीं होने दिया जिसके पवित्र जीवन से संसार विस्मित हो उठा था जिसके सामने सम्राट सिंहविष्णु एक साधारण नागरिक की भाँति सिर झुकाकर खड़ा रहता है उसकी बात पर तुम संदेह कर रहे हो? जिसने तुम्हारे जीवन के महानतम पाप को छिपाने के लिये अपने युग युग के संचित तप और यश को करा दिया जिसने ब्रह्मचारी होकर भी केवल तुम्हारी मित्रता के लिए रुक्मिणी को अपनी पुत्री कहकर प्रसिद्ध कर दिया उसकी बात पर तुम अविश्वास कर रहे हो?

सिधुनाद ने कम्पित कण्ठ के कहा— मित्र यह तुम क्या कह रहे हो?

रत्नगिरि ने कहा— तुम मेरे बाल्य सखा ही नहीं गुरुभाई भी हो। तुम कवि हो। सौंदर्य को छलना ही तुम्हारे अन्तस्तल की अंतिम प्रेरणा है। जिस दिन तुमने राजकुमारी इंदिरा को देखा था उसी दिन मैंने तुमसे कहा था कि तुम भूल कर रहे हो। किन्तु तुमने कुछ भी नहीं सुना। आज से बीस वर्ष पहले जब तुम रुक्मिणी को गोद में लेकर आये थे मैंने उसे बिना हिचकिचाये गोद में उठा लिया था। राजकुमारी इंदिरा आज राजमाता इंदिरा है। आज संसार उसके पुण्य की गाथा गा रहा है। वह नहीं जानती कि उसका पाप आज भी जीवित है। उससे कह चुका हूँ कि रुक्मिणी मर चुकी है। किन्तु सिधुनाद आज जब वह पाप मानव-सत्ता के परम पुण्य के रूप में मुझे एकमात्र

सान्त्वना दे रहा है तुम उस पर लाञ्छना लगा रहे हो ? रुक्मिणी की पवित्रता तुषारधौत शतदल के समान है देवता में उसकी भक्ति सुमेरु के समान है। उसने अपना तन मन धन केवल देवता की सेवा में अर्पित कर दिया है। वह मनुष्य से प्रेम कर सकती। मैं उसे नहीं दे सकता। देवी कामाक्षी की शपथ है मैं उसे नहीं दे सकता।

तब तो सूर्य्यमणि रो-रो कर मर जायगी ! सिन्धुनाद ने करुण स्वर से कहा— बोलो रत्नगिरि मेरा इस संसार में और कौन है ? किस लिये मैं इतनी माया ममता को परवश सा आज भी सहेजे बैठा हूँ। यश नहीं चाहिए धन नहीं चाहिये। सांसारिक भोगों से मैं तृप्त हो चुका हूँ। देवदासी रुक्मिणी को कुछ दिन के लिये तुम छिपा नहीं सकते ? धनञ्जय उसके पीछे पागल हो रहा है। यदि यह दीपशिखा उसके सामने रहेगी तो वह शलभ की भाँति परिभ्रमण करके अपने पंख जला लेगा। देव दासी से कभी भी उसका विवाह नहीं हो सकता। फिर सूर्यमणि के जीवन पर आघात किस लिए ?

रत्नगिरि गम्भीर स्वर से चिल्ला उठा— सिन्धुनाद रुक्मिणी भी तुम्हारी पुत्री है। क्या तुम एक पुत्री के लिए दूसरी का अहित करना चाहते हो ? जब संसार में तुम्हें राजकुमारी इंदिरा से बढ़कर कुछ भी नहीं था उस समय रुक्मिणी ही तुम्हारी संतान थी। क्या अब तुमको उससे तनिक भी स्नेह नहीं ? क्या संसार के नियमों में तुम्हारा हृदय इतना कायर हो गया है कि यदि संसार नहीं कह सकता तो तुम भी उसे पुत्री नहीं मान सकते ?

सिन्धुनाद उद्भ्रांत से इधर उधर घूमने लगे। उनके मुख पर आशङ्का काँप रही थी। वे दो पाषाणों के बीच में भिंच गये थे। उन्होंने झुककर कहा— तो रत्नगिरि देवदासी को मुझे दे दो। मैं सामान्य के नियमों को ठोकर मार कर देवता का अपमान करके अपने प्राणों का

मोह छोड़कर उसे अपनी पुत्री घोषित करूंगा और उसका कहीं विवाह कर दूंगा।

रत्नगिरि ने धीरे से कहा— यह नहीं हो सकता सि धुनाद !

तुम डरते हो रत्नगिरि ? सि धुनाद ने आगे ब कर कहा— राज माता इंदिरा का सती व डूब जायगा ? पाड्य चोल और चालुक्य देशा में पल्लवराज के कुन्म की निन्दा के गीत गाये जायगे ? सि धुनाद का पाप प्रकट हो जायगा ? रत्नगिरि की घोर मि या सर्य्य की तरह जगमगा उठेगी इसलिए ?

नहीं रत्नगिरि ने कहा— रुक्मिणी फिर से पाप में लिप्त नहीं हो सकती। वह देवता को नि काम रूप से अर्पित हो चुकी है। वह लौटाइ नहीं जा सकती। उसका जीवन धर्म का एक महान् छंद है उसको अपौरुषेय कहकर ही गाया जा सकता है। वह कोइ साधारण हाग्य में नाचने वाली स्त्री नहीं है वह कलाओं में पारङ्गत होकर पुरुषा से पुष्कल के लिये विलास करनेवाली गणिका नहीं है। वह उत्सर्ग कर चुकी है अपना स्त्रीत्व अपना मातृ व आज म कुमारी रहने के लिए। वह नहीं लौट सकती। वह देवता की सम्पत्ति है। सि धुनाद तुम कर्त्य अकार्य का भेद नहीं समझ पा रहे हो। तभी तुम कविता का प्रथम चरण प्रेम भूल गये हो। जाओ लौट जाओ ! देवदासी तुम सबसे अस्पृश्य आकाश मन्दाकिनी का कमल है। उसे तुम नहीं पा सकते।

सि धुनाद आत्त से बैठ गये। उनसे कुछ भी नहीं कहा गया। उन्हें चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा छाता हुआ दिखने लगा। उनके सामने सर्य्यमणि का आतुर स्वरूप बार बार घूम गया जो उनकी प्रतीक्षा करती होगी जिसे नहीं मालूम कि रुक्मिणी उसी की बहिन है। जिस पिता की कीर्ति से आज पल्लव सामा य में स्थित सरस्वती का अञ्चल श्वेत से भी अधिक उज्ज्वल हो उठा था उसी का पाप वह कैसे सुन सकेगी। कैसे सह सकेगी वह यह घोर अंधकार की गाथा ?

वह कुछ भी नहीं सोच सके। एक दीर्घ निश्वास छोड़कर वे मंदिर से बाहर चल दिये और बाहर खड़े स्वर्ण रथ पर जा बैठे। सारथि ने रथ हाँक दिया। वृद्ध सि‌‌‌ुनाद की आँखों में आँसू भर आये। उनके हृदय में आँधी चल रही थी।

रात्रि के घनघोर अंधकार में एक छाया-सी चलने लगी। दूसरी ओर से दूसरी छाया का अङ्गचालन हुआ। एक ने दूसरे के पास आकर कहा— कौन? रङ्गभद्र तुम आ गये?

हाँ देवी! रङ्गभद्र ने धीरे से कहा— क्या तुम तत्पर हो?

रुक्मिणी ने कुछ नहीं कहा। रंगभद्र बोला— देवि! यहाँ तुम्हारा मान तब हो सकता है जब तुम अन्धे के फूल के समान अपनी गंध स्वयं नहीं पहिचान पाओगी। तुम्हारी मनुष्यता के हनन पर तुम्हारा यह स्वर्ग है। किन्तु क्या तुम्हारे हृदय में कोई कोमलता शेष नहीं है? क्या केवल पाषाण हो? किन्तु कामाक्षी के मंदिर में प्रस्तर गाते हैं प्राचीरें बोलती हैं। एक तुम हो जो अपने जीवन को देव सेवा की छलना में बिताये जा रही हो। कभी किसी से दो पल प्रेम की बात नहीं तुम तो स्त्रीत्व के प्रारम्भिक चिह्न तक भूल गयी हो। किसलिए यह सब रुक्मिणी?

देवता के लिये रंगभद्र। क्या यह सब त्याग करना मेरे लिए पाप नहीं होगा?

पाप? रंगभद्र ने हंसकर कहा— पाप यह नहीं है कि जीते जागते मनुष्य को एक कठपुतली बना दिया है? उससे उसकी दृष्टि छीनकर दूसरों को लूटने के लिए उसे नयन दे दिये हैं उससे उसके हृदय का अपहरण करके उसे दूसरों के हृदयों पर दस्युवृत्ति करने के लिए छोड़ दिया है? यदि मनुष्य को झूठे प्रलोभन देकर उसे मनुष्य नहीं रहने दिया तो इससे बढ़कर और कौन सा पुण्य होगा?

रंगभद्र! पिता ने तो देवसेवा को संसार का सबसे बड़ा सुख बताया है। फिर तुम क्या कह रहे हो? मैं तुम्हारे मुख से पाप को बोलता

हुआ सुनकर कांप उठती हू ! किन्तु न जाने तुम जो कहते हो अनाचक ही क्यों मेरे हृदय पर आघात कर उठता है। मैं नहीं जानती तुम मुझे इतने अच्छे क्यों लगते हो ?

रंगभद्र का मुख प्रफुल्लित हो गया उसने कहा— रुक्मिणी वह स्त्री नहीं जो अपने प्रेमी के आलिङ्गन में बद्ध होकर विभोर नहीं हो सकती जो आँखों में आँसू खोकर एक बार कलकण्ठ से उसे अपना स्वामी कहने को उद्यत नहीं हो सकती। कहाँ है तुम्हारे जीवन की नीरव हाहाकार करती वेदना का अन्त कुमारी ? जिस देवता के पीछे तुम पागल हो रही हो क्या कभी उसने तुम्हारे हृदय पर हाथ रख कर उसकी धड़कन को सुना ? क्या बसंत के मलयानिल में पुंसकोकिल की कुहू सुनकर कभी तुम्हारे हृदय में हूक नहीं उठी ? बोलो देवदासी ! यदि प्रेम पाप है तो किसलिए कालिदास का नाम आज प्रात स्मरणीय है ? किसलिए इस समस्त भूलोक में प्राणी एक दूसरे के लिए कातर हैं ? यदि प्रेम पाप है तो तुम्हें क्या आजीवन देवता से प्रेम रखने का दुरभिमान सिखाया गया है ?

देवदासी सोच में पड गयी। रङ्गभद्र उन्मत्त-सा कहता रहा— क्या यह माधवी रजनी की अनन्त सुलगन शून्य में केवल हाहा खाने के लिए है ? तुम्हारा यह अनिन्दित रूप जिसको आज संसार उपेक्षा के भयावह गर्त्त में डाले बेसुध है किस लिए यौवन की भुजाए फैलाकर हृदय में उतरता चला जाता है ? पल्लव सामान्य की सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी नहीं जानती कि यौवन क्या है ? नहीं है ज्वालामुखियों में वह ताप नहीं है आकाश के नक्षत्रों में वह रूप जो तुम्हारे श्वास में है जो तुम्हारे नयनों में है ? काञ्ची की कुल नारियों के रूप का गर्व तुम्हारी अनन्त रूपराशि के सामने धूल के तुल्य है देवी !

देवदासी ने कहा— यही तो सेनापति तनय धनंजय कहते थे।

धनञ्जय ?' रङ्गभद्र ने काँपते स्वर से पूछा— क्या वह आया था ? तुम्हें कब मिला ?

देवदासी ने सिर उठाकर कहा— कल दिन में नृत्य हुआ था। सूर्य्यमणि ने अचानक नृ-य रोक दिया। उससे रोषित होकर मैं भीतर चली गयी। पीछे-पीछे ही वह भी आ गया।

फिर ? रङ्गभद्र ने आशङ्कित होकर पूछा।

फिर वह कहने लगे—सुन्दरी तुम्हारे सामने सूर्य्यमणि कुछ भी नहीं है। मैं उसे तनिक भी नहीं चाहता। मैं तो तुमसे प्रेम करता हू। संसार में मेरी कोइ अभिलाषा नहीं केवल तुमको प्राप्त करना चाहता हू।

रङ्गभ ने उ सुक होकर आवेग से पूछा— और देवदासी तुमने क्या कहा ?

रुक्मिणी ने उत्तर दिया— और देवदासी ने क्या कहा यह भी जानना चाहते हो ? मैंने कहा—तुम मूर्ख ही नहीं पतित हो। एक देवदासी से तुम्हें ऐसी बात करते लज्जा नहीं आती ? क्या तुम अपने को राजवंश को उ-चारित करने का साहस करते हो ? तु हारे वाक्यों में भीषण हलाहल है जिससे देवमन्दिर की ईंट ईंट मूर्छित होती जा रही हैं। तुम नारायण की पवित्र विभूति को अपमानित करने का ुस्साहस कर रहे हो ? जिससे तुम बात कर रहे हो वह साधारण स्त्री नहीं एक देवदासी है।

उसका श्वास फूल गया। वह चुप हो गयी। रङ्गभद्र म-त्रमुग्ध सा उसकी ओर देख रहा था। उसने कहा— धन्य हो तुम देवदासी ! तुम प्रेम करना जानती हो। कि-तु जिस पाषाण को तुम जीवन का सर्वस्व बनाती हो वह आत्मा का हनन है। मनुष्य की चरमशान्ति शुष्क ज्ञान नहीं भक्ति है। वह भक्ति नहीं जिसमें त्याग का दम्भ हो देवदासी ! मैं तुम्हें व्यर्थ ही यह जीवन नष्ट नहीं करने दूगा। कहो रुक्मिणी तुम मुझसे प्रेम करती हो ?

रुक्मिणी ने कुछ नहीं कहा। अंधकार में ही उसके हाथ ने रङ्गभद्र के दृढ़ हाथ को पकड़ लिया। रङ्गभद्र न उसे अपने पास खींच लिया। दोनों देर तक एक दूसरे की आँखों में झाँकते रहे। रङ्गभद्र ने धीरे से कहा— तुम्हारे चरण पर जीवन का समस्त वैभव उठाकर भिक्षा माँगेगा। तुम्हारे पाँव मेरे हृदय पर चलगे। तुम पल्लव साम्राज्य की सबसे बड़ी धनवती सर्वश्रेष्ठ सुंदरी सबसे अधिक भाग्यशालिनी स्त्री होगी रुक्मिणी ! असमय का यह वैराग्य जैनियों को शोभा दे सकता है जो अपने शरीर को कष्ट देना ही जीवन का निर्वाण समझने की भूल करते हैं। तुम वैकुण्ठ की लक्ष्मी हो। काशी में मोती बेचकर मैं दक्षिण पथ का सबसे धनवान व्यक्ति हो जाऊँगा। भूल जाओ यह पारमित सीमाओं के बन्धनों को ही अंतिम सत्य समझने की कल्मषभरी छलना। तुम देवदासी नहीं हो नारी हो। स्त्रीत्व का अधिकार तुमसे कोई नहीं छीन सकता।

देवदासी का हृदय धड़क उठा। उसका कण्ठ वाष्पस्फीत हो गया। अंधकार में दूर बहुत दूर कुछ हल्के से तारे टिमटिमा रहे थे। और कुछ नहीं। विशाल प्राङ्गण दीर्घ स्तम्भ वक्राकार अलिंद—द्वार सब अंधकार में एक हो गये थे। निर्जनता से चारों ओर वायु कोलाहल-सा मचा रही थी। देवदासी की आशङ्का मन ही मन भयभीत हो गयी। उसने अपना हाथ रङ्गभद्र के वक्ष पर रख दिया और विभोर सी खड़ी रही। रङ्गभद्र ने कहा— परसों मैं सिंहलद्वीप जा रहा हूँ। प्रतिज्ञा करो कि तुम मेरे साथ पोत पर आरूढ़ होकर मेरी अर्द्धाङ्गिनी के रूप में चलोगी। परसों काञ्ची के देव मन्दिर में महोत्सव होगा। उस दिन लोग अपने अपने काम में संलग्न होंगे। किसी को भी अधिक चिंता नहीं होगी। हम तुम परिक्रमा के पीछे वाली पुष्करिणी के पास मिलगे और तुम निर्भीक पाप की भावना से हीन मेरे साथ चली चलोगी क्योंकि तुम मुझे प्रेम करती हो।

देवदासी ने अपना सिर रङ्गभद्र के सुदृढ़ वक्षस्थल पर टेक दिया। उसकी आँखें बंद हो गईं और मुह से धीरे से उ छ्वसित हुआ—मैं प्रतिज्ञा करती हू रङ्गभद्र मैं चलूगी। तुमने मेरी नीरवता में जो वीणा बजायी है उससे मेरा र ध्र र ध्र गूज रहा है। मैं अवश्य चलूँगी।

रङ्गभद्र ने अंधकार में उसके केशा को चूम लिया। देवदासी लाज से मुस्करा उठी।

—६—

राजमाता इंदिरा उद्यानमन्दिर में वि णु के चरणों पर सहस्र शत दल कमला का धीरे धीरे विसर्जन कर रही थी। उनका हृदय पवित्र और स्निग्ध था। जब वे पूजा समाप्त करके उठीं उ हान दखा सूर्य्यमणि उदास सी सामने खड़ी थी। राजमाता के मुख पर करुण प्रभा फैल गयी। उन्होंन कहा—सूर्य्यमणि आज तू इतनी उदास क्यों लगती है? श्याम मेघ की तरल छाया आज तेरे नयनों में आश्रमहीना-सी क्यों काँप रही है? आज तू निदाघ के कानन की भाँति क्यां यह दीर्घ निश्वास छोड़ रही है? सिकता पर चञ्चल क्रीड़ा करनवाली लहर के समान तेरी स्मित अ ज एकदम ही कहाँ लुप्त हो गयी?

सूर्य्यमणि ने सिर झुका लिया। राजमाता ने स्नेह से फिर कहा—महाकवि की तनया को ऐसी कौन सी पीड़ा व्याकुल कर उठी है? बोल बेटी!

सूर्य्यमणि ने कहा—कुछ नहीं माता ऐसे ही आज कुछ चित्त में अनबूझ-सी ग्लानि छा गयी थी।

राजमाता चुप हो गयीं। उन्हें याद आया कि एक दिन वह भी सि धु नाद के प्रेम में ऐसी ही व्याकुल हो उठी थीं। आज बीस वर्ष बीत गये। वह अब चालीस वर्ष की थीं। सि धुनाद पचास से ऊपर था।

उ होंने मन ही मन अपने उस पाप को भूलने के लिए नारायण का स्मरण किया। हृदय निर्मल हो गया। आज वे राजमाता थीं। उनके

पवित्र आचरणों पर दक्षिणापथ को गव हो सकता था। उनके पति ने अपार विक्रम से चोलराज के दाँत खट्टे कर दिये थे। सम्राट सिंहविष्णु ने तभी से विधवा को अपने संरक्षण में ले लिया था। उन्होंने कहा—

सूर्य्यमणि तेरा विवाह कब का निश्चित हुआ है?

सूर्य्यमणि ने मुह फेरकर उत्तर दिया— बसन्त पञ्चमी को —और वह वहाँ से चली गयी।

एक दासी ने झुककर कहा— महाकव आये हैं देवी!

महाकव! राजमाता न विस्मय से सिर उठाकर पूछा।

हाँ देवी! दासी ने सिर झुकाकर उत्तर दिया।

उनको उद्यान में ही ले आओ।

दासी चली गयी राजमाता शङ्कित होकर इधर उधर घूमने लगीं। उनका हृदय भीतर ही भीतर काँप उठा। आज वह उस व्यक्ति को बीस वर्ष बाद फिर देख ी जिसकी स्मृति भी उनके जीवन का एक महान् पाप है।

इसी समय वृद्ध सिंधुनाद ने दासी के साथ प्रवेश किया। राजमाता इन्दिरा न उन्हें आगे बढ़कर स्वागत दिया। एक सङ्गमर्मर की चौकी पर सिन्धुनाद बैठ गये। दासी चली गयी। राजमाता न दृष्टि उठाकर देखा और फिर उनका शीश झुक गया। सिन्धुनाद के नयनों में आज वही चमक थी जो बीस वर्ष पहले उनके सवनाश का कारण बन गयी थी। उन्होंने सारंगपाणि का मन ही मन फिर स्मरण किया और कहा—

कवि आज आपने कैसे कष्ट किया?

सिंधुनाद ने धीरे धीरे कहना प्रारम्भ किया— एक दिन अनेक वष पहले हम तुम इसी उद्यान में अपना सब खो बैठे थे। किन्तु उस दिन भी तुमने मुझे अपना सब कुछ दिया था। आज मैं फिर तुमसे तुम्हारा सब कुछ माँगने आया हू।

राजमाता ने कहा— कवि मैं कुछ भी नहीं समझी। तुम मुझसे

क्या लेना चाहते हो ? सूर्यमणि के लिए मैंने स्वयं धनजंय जैसा उपयुक्त नर खोज दिया है फिर और तुम मुझसे क्या माँगना चाहते हो ?

सिन्धुनाद ने कहा—देवी धनञ्जय एक देवदासी की ओर आकृष्ट है। वह सूर्यमणि की उपेक्षा कर रहा है।

राजमाता निःप्रभ हँसी हँस उठीं। उन्होंने कहा—तो इतने मर्माहत क्या हो कवि ! एक बात कहूँ बुरा तो न मानोगे ?"

नहीं देवी आज मैं सभी कुछ सुनूँगा।

तो सिन्धुनाद राजमाता ने कहा—देवसेवा के लिए अर्पित इन सहस्रों बालिकाओं के जीवन में और एक साधारण गणिका के जीवन में भेद ही क्या है ? साम्राज्य का धर्म भले ही इसे स्वीकार न करे किन्तु जिन सामन्तों के यहाँ नगर की प्रजा की ललनाएं कुछ दिन दासी बनने आती हैं और अपने यौवन की भेंट देकर लौट जाती हैं उन सामन्तों के यहाँ क्या देवदासियाँ वेश्या ही नहीं होतीं ? क्षमा करो कवि दिन में वे देवसेवा करती हैं रात को छिपकर नरुप सेवा ! कवि यौवन कभी भी सत्पथ पर नहीं चल सकता। उसकी ठोकर से विक्षत उँगलियों का रक्त सदा के लिये पथ पर छूट जाता है। फिर तुम्हें इतनी चिन्ता क्या ? कौन है वह देवदासी जो धनञ्जय के रूप की अवहेलना कर सकेगी ? कौन है वह साधारण नर्तकी जो धनञ्जय के बल और यश के अंक में सब कुछ खोल न देगी ? दो दिन की यह भूल मिटा लेने दो उन्हें। जब हमारा समय था तब हम भी तो पीछे नहीं हटे। धनजय का यह लोभ एक आलिंगन में प्रवाहित हो जायगा। और पुरुष के लिए तो कोई पवित्रता नहीं वह तो अनेक स्त्रियों में मत्त गजराज की भाँति क्रीड़ा कर सकता है। वसन्त पञ्चमी को यदि वह सूर्यमणि के साथ अग्नि की प्रदक्षिणा न करे पुजारी फिर से पुरुषस्य भाग्य का उन्माद न गुंजादें तो आकर इस पापिनी से जो मन आये कहना—जो विवाह के पहले माता हो चुकी थी किन्तु जिसके छल से आज भी साम्राज्य उसकी पवित्रता

के सम्मुख वैदेही और अनुसया को तुच्छ समझने लगा हूं। बोला सिंधुनाद नारी का मोल ही क्या है? पुरुषों के हाथों खेलने वाली कठपुतली पुरुष भूमि पर मरता है वह आकाश को चूमने का प्रयत्न करती है। यही तो है सब से बड़ी दासी गृहस्वामिनी का रूप—जिसकी सत्ता अपने आप में कुछ नहीं!

देवी! सिन्धुनाद ने क्षुब्ध होकर कहा— बीस वर्ष पहले मैंने कहा था मर्यादाओं का संकोच जीवन की वास्तविकता नहीं है। आओ हम तुम इस देश को छोड़कर कहीं चले जाय। किन्तु तुमने स्वीकार नहीं किया।

लेकिन कवि राजमाता ने कहा—पाप तो मिट गया पाप की स्मृति अवश्य हृदय में चुभती है। किन्तु कभी कभी जब न हारी कविता पढ़ती हूं तब लगता है कि वह पाप नहीं था यह परवश जीवन सबसे बड़ा पाप है।

पाप! देवी—सिंधुनाद ने कहा— मेरे तुम्हारे जीवन का पाप ही आज फिर इस समस्त वैभव को भस्म कर देना चाहता है। मैं इसी से कांप रहा हूं। तुम देवदासी को साधारण वेश्या कहने तक में नहीं झिझकीं तो सुनो कि जिस साधारण नर्तकी की पवित्रता को रुदते देखकर भी तुम्हारा गर्व कुण्ठित नहीं होता वह तुम्हारी औरस पुत्री है। सूर्यमणि तुम्हारे प्रेमी की पुत्री है किन्तु देवदासी रुक्मिणी तुम्हारी पुत्री है तुम्हारे यौवन तरु का प्रथम पुष्प है तुम्हारे जीवन सागर में प्रतिबिम्बित होने वाली प्रथम बालारुण की दीप्ति है।

राजमाता ने कांपते हुए कहा— किन्तु रत्नगिरि ने तो मुझसे कहा था वह मर चुकी है।

रत्नगिरि नहीं जानता था कि एक दिन बलशाली साम्राज्य के एक विशाल स्तम्भ सेनापति का पुत्र उसके पीछे व्याकुल हो उठेगा। सहस्रों देवदासियों के बीच उसने उसे छिपा दिया था। किन्तु यदि धनंजय

उसकी पवित्रता को अपनी उच्छृङ्खलता में विध्वस्त करेगा रत्नगिरि उसे कभी भी नहीं सह सकेगा। उसने कठोर तप से अपना जीवन बिताया है। उसने दूसरों की भूलों को सरल चित्त से क्षमा किया है। उसे रुक्मिणी से पुत्री का सा स्नेह हो गया है। जिसने आज म अखण्ड स्फटिक जैसा धवल ब्रह्म तेजस अपने चारों ओर प्रकाशित किया है वह क्रोध से पल्लव सामाज्य को खण्ड खण्ड कर देगा। राजमाता वह वैभव और सुख को इन दीवारों की नींव में पलते पाप को समूल उखाड़ कर फक देगा। उसके दुर्वासा के से अग्नि क्रोध को ठण्ढा कर सके ऐसा साहस ऐसी पवित्रता जिसमें है? प्रजा क्या कहेगी? देवता की पवित्र सम्पत्ति पर वह कभी पदाघात नहीं सह सकेगा। राजमाता मेरा मन भय से कांप उठता है।

राजमाता सिहर कर खड़ी हो गयीं। उन्होंने कहा—कवि चलो। मैं रत्नगिरि से मिलना चाहती हू। देवदासी मेरी पुत्री है। उसे मैं अपने पास ले आऊँगी। वह मेरे शरीर का सञ्चय है। रत्नगिरि माता की आज्ञा की उपेक्षा नहीं करेगा। मेरे वक्षस्थल में एक स्नेह कांप रहा है। मेरी पुत्री भुवन सु दरी है? वह मे ी है? मैं उसे देखना चाहती हू कवि!

सि धुनाद उठ खड़े हुए। उ होंने कहा—र नगिरि पाषाण है देवी! उसके हृदय में एक सोता है और वह केवल देवदासी रुक्मिणी के लिए है। वह उसकी पवित्रता पर मुग्ध है। जिस दिन उसे उसमें अपवित्रता की ग ध आयेगी वह अपने हाथ से उसका वध करके देव प्रतिमा के चरणों पर उसे समर्पित करके आ मघात कर लेगा। आ म घात का पाप भी उसके सामने देवता के प्रति विश्वासघात की तुलना में कुछ नहीं। वह कठोर तपस्वी है। ममता के झूठे आवरण से उसकी आँखें कभी नहीं चौंधतीं। आज जो माता बनकर जा रही हो वह तुम्हारे मातृ-स्नेह को ठुकरा देगा। वह पूछेगा कहाँ था यह प्रेम उस दिन जब क्षुध आर्त शिशु को स्तन से लगाने के स्थान पर तुमने रातों रात बाहर

कर दिया था। एक राजकुमारी को तुमने पाप बना दिया और जब मैंने पाप को भगवान् की छाया बना दिया है तुम फिर उसे अपवित्र करना चाहती हो ?

राजमाता ने कहा— फिर क्या होगा कवि ?

सिन्धुनाद ने कहा— रथ बाहर खड़ा है देवी चलिए।

राजमाता ने आवाज़ दी— नीला!

दासी ने आकर शीश झुकाया।

राजमाता ने कहा— शीघ्र ही रथ तैयार कराओ।

जो आज्ञा कहकर दासी चली गयी।

थोड़ी देर बाद राज मार्ग पर दो बहुमूल्य रथ दौड़ने लगे। एक पर महाकवि थे दूसरे पर राजमाता। रथ राजमन्दिर के बाहर रुक गये। दोनों उतर पड़े।

जब वे भीतर पहुँचे उन्होंने देखा रत्नगिरि सूर्यमणि के सिर पर हाथ रखकर कह रहा है— पुत्री यह संसार अत्यन्त कुटिल है। सत्य का उन्मीलन आज के संसार में प्रलय का सूत्रपात हो जायेगा। मैं तुझे कुछ भी बताना नहीं चाहता। किन्तु तू पवित्र है। तेरी पवित्रता की रक्षा करना तुझे सत्यपथ पर चलाना तेरे जीवन को श्रेष्ठ और मनोहर बनाना मेरा कर्तव्य है। मैं तेरी सदा सहायता करूँगा। तेरे सुखों के लिए मैं कुछ भी उठा नहीं रखूँगा। तुझे डरने का कोई कारण नहीं। धनञ्जय को लाचार होकर तुझसे प्रेम ही नहीं पवित्र परिणय करना होगा। महोत्सव के बाद मैं देवदासी रुक्मिणी को लेकर काशी चला जाऊँगा। मैं तुझे अपने ब्राह्मणत्व की साक्षी देकर यह शपथ करता हूँ।

राजमाता ने दौड़कर रोते हुए पुजारी के चरण पकड़ लिये। सिन्धु नाद गद्गद्-से रोने लगे। सूर्यमणि कुछ भी नहीं समझी।

अविचलित स्वर से रत्नगिरि ने कहा— परसों राजमाता! परसों कवि! कल महोत्सव है। अंतिम बार कल मैं कामाक्षी को अपने हाथों

से पूजा करूगा। कल मैं अपने जीवन के सारे पापा के लिए समस्त शात्त से देवता के चरणों पर क्षमा माँगूगा। मैं जीवन की इस तुका छिपी से ऊब गया हू कवि! मैं कहीं दूर चला जाना चाहता हू। अप राध का सबसे बड़ा प्रतिदान ब्राह्मण की क्षमा है। ब्राह्मण वह नहीं है जो अपनी पवित्रता की स्वर्ण और राजमद के सामने बलि दे दे ब्राह्मण वह है जो पाप को पुण्य बना दे पुण्य को साक्षात् नारायण बना दे। उठो राजमाता उठो! राजमाता को यदि एक पुजारी के चरणा पर लोग देखेंगे तो विस्मय करगे।

राजमाता के मुख से निकला—तुम मनुष्य नहीं हो रत्नगिरि! तुम देवता हो।

रत्नगिरि ने कहा—नहीं राजमाता! मैं केवल देवता का एक पुजारीमात्र हूँ।

सयमणि आश्चर्य चकित-सी देखती रही। पुजारी मुस्करा रहा था।

—७—

राजमन्दिर की शोभा आज अनुपम थी। द्वार द्वार पर आमपल्लव बाँधे गये थे। स्थान-स्थान पर घट स्थापित करके केले के मासगर्भा वृक्ष लगाये गये थे। समस्त मन्दिर गन्ध से सुवासित था। सम्राट सिंहविष्णु आज अपने पूरे वैभव के साथ आये थे। एक ऊचे मण्डप में उनका स्वर्ण सिंहासन दमक रहा था। कुमारपादीय युवराजा के बाद यथायोग्य आसनों पर सामन्तगण आकर बैठ रहे थे। कुलीन स्त्रियाँ एक ओर एकत्रित हो रही थीं। राजकुमार महेन्द्रवर्मा चुपचाप अपने आसन पर बैठे आते जाते मनुष्यों को देख रहे थे। श्यामा सुन्दरियों की किल कारियाँ गवाक्षों में से झकारती वायु के साथ बाहर निकल जातीं और उनके अङ्गचालन पर विभिन्न आभूषणों की मधुर ध्वनि फूट निकलती। योद्धाओं के भारी चरणों से आहत चमकती भूमि विक्षुब्ध हो उठती और उनके हास्य तरल स्वरों में मादकता विलोल छाया बनकर प्रभा से

दीप्त दंत पंक्तियों में छिप जाती। मेखलाओं की मादक मंदिर क्वणन ध्वनि ग्रीवा की द्रिमि क द्रिमिक हुङ्कार ननकर चंदन लेपित स्त । के उभार के झुलन पर ताल दे रही थी।

एक विराट स्तम्भ के पीछे देवदासी शकमणी प्रतिक्षा कर रही थी। रङ्गभद्र पास आ गया। देवदासी ने कहा—नृ य के बा मैं भीतर जाकर पहले वस्त्र बदलूंगी फिर पुष्करिणी के पास जाऊंगी। तुम प्राय एक प्रहर के बाद वहाँ पहुंच जाना। क्या सब तैयार हैं?

रङ्गभद्र ने धीरे से कहा— तुम्ह चिन्ता करने की को आवश्यकता नहीं देवी! पेलार नदी पर श्रेष्ठि रङ्गभद्र के अमू य वस्त्रों से भरे चौबीस पोत खड़े हैं। बस हमारे पहुंचने का विल ब है। कल हम स्वतन्त्र होंगे।

अच्छा अब मैं जाती हू। और वह भीतर चली गयी। रगभद्र कुछ देर वहा खड़ा रहा और फिर भीड़ में मिल गया। प्रसाधन प्राय समाप्त हो चुका था। बाहर वाद्य आदि लिए सब स्थान साजत क गायक आ गये थे। नृ य प्रार भ होने वाला था। सब सामने के प की ओर देख रहे थे। धीरे धीरे यवनिका उठने लगी। जनसमुदाय स्तब्ध होकर देखने लगा।

अनन्य सुन्दरी देवदा ी को देखकर सबके नयन चकाचौंध हो गये। वह साक्षात् उर्वसी-सी अङ्गचालन कर रही थी। मृदंग का निघोष प्रति वनित हो उठा। नर्तकी की नूपुर ध्वनि का मधुर प्रवाह सनकर सभा चित्रलिखित-सी देखती रही। आज वह अद्भुत नृ य कर रही थी। उसके अंग अंग में मदन ुकार रहा था रति कोमल कण्ठ से अपना अजस्र रूप बहाये दे रही थी। उसके प्रवाल से अध ा पर उन्मा की मोहक ग ध तड़प रही थी। उसके विशा नित बों को देखकर महादेव का सहस्रों वर्षों का तप आज हाथ खोलकर चि ला उठा ा।

एकाएक नूपुर मिलकर बज उठे। नृत्य तीव्र गतिमय हो गया।

सभा स्तंभित सी बैठी रह गयी। उन्होंने देवदासी को देखा जैसे प्रलय के अनन्तर वसुधरा बाहर आ रही थी। मृगमद का टीका उसके स्निग्ध वर्ण पर स्वर्ण की भाँति दमक रहा था।

आज नृत्य में विभोर वह हीरक की किरन उस मणिकुम्भि रङ्ग मञ्च पर ऐसे डोल रही थी जैसे शिव के ललाट पर चन्द्र की स्निग्ध रश्मि कैलाश के शिखरों पर आलोड़ित हो रही हो जैसे वीणा पर उंगलियाँ द्रुतगति से झंकारमुखर होकर तन्मय हो गयी हों। उसका उन्नत वक्षस्थल यौवन का अपराजित गर्व बनकर अपनी पीवर मांसल सुकोमलता में चंदन से लिप्त ऐसा लग रहा था ज्यों युगचन्द्र पर चाँदनी बार बार झूम झूम कर अपने आपको भूल जाती हो। वह इस प्रकार अपनी मादकता में अपने आप खो गयी जैसे मन्दाकिनी में परिमल खाकर कलकण्ठ निनादित कूजन में राजहंसिनी स्वयं आपको भूलकर मृदुल लहरियों पर अपने रेशम सदृश पंखों को खोलकर क्रीड़ा करने लगती है। क्षण भर को प्रतीत होने लगा मानों नर्तकी के साथ समस्त वसुमती आज स्वर्ग की ओर उड़ जायेगी और भारालस वासना का यह मंदिर उत्साह वारुणी की झूममें अपना अनन्त विसर्जन कर देगा।

नृत्य रुक गया। सब अविश्वास से चारों ओर देख उठे। सम्राट सिंहविष्णु ने गद्‌गद् होकर कहा—पुजारी तुम धन्य हो। देवदासी तुम्हारी पुत्री है?

हाँ सम्राट! पुजारी ने गर्व से सिर झुका लिया।

राजमाता इन्दिरा और महाकवि सिंधुनाद के नयनों में आनन्द के अश्रु छा गये। सूर्यमणि मयार्त-सी मौन बैठी रही। देवदासी ने एक बार देवता को झुककर प्रणाम किया और गर्व से सिर उठा लिया। उस समय उसके मुख पर स्वर्गीय आभा खेल उठी। रङ्गभद्र हर्षित होकर देखता रहा। धनञ्जय अपने स्थान से उठ गया और अंधकार में कहीं खो गया।

सम्राट ने फिर कहा—कवि रुक्मिणी पर पल्लव को अभिमान है। क्या तुम्हारे हृदय में इस रूप को देखकर सरस्वती का संगीत नहीं उमड़ता?

सिंधुनाद ने कहा—मेरा कवित्व रूप की इस अपार राशि को देखकर विक्षुब्ध हो उठा है। मैं असमर्थ हूं।

मन्थरगति से चलती देवदासी ने प्रांगण पार करके बाह्य-परिक्रमा को लांघकर भीतरी परिक्रमा में पांव रखा। उसी समय उसने सुना—

सुन्दरी!

उसके पांव ठिठक गये। सामने ही धनंजय खड़ा था। उसके नयनों से वासना ने अवगुण्ठन हटा दिया। वह लोलुप दृष्टि से उसकी ओर देख रहा था।

देवदासी ने कहा—क्या है सेनापति तनय? धनञ्जय मन्त्रमुग्ध-सा उसे देखता रहा। देवदासी ने फिर कहा—क्या है कुमार? आप क्यों मुझे निष्कारण घूर रहे हैं?

धनञ्जय उच्छ्वसित स्वर में कहा—देवी मैं तुम्हें प्यार करता हूँ।

धनञ्जय! देवदासी हुंकार उठी। बाहर प्रांगण में उस समय कोई कलकण्ठ से प्रेम का मनोहर और करुण गीत गा रहा था। धनञ्जय फिर भी देखता रहा। देवदासी ने आगे चलने को पग उठाया। नूपुर बज उठा। धनञ्जय को लगा जैसे रति का विजयी डमरू आकाश वसुंधरा और पाताल में एक घोष भरता हुआ गूँज उठा। वह पागल हो उठा। और धनञ्जय ने आगे बढ़कर उसके कन्धों को पकड़ लिया। देवदासी क्रुद्ध-सी चिल्ला उठी—धनञ्जय तुम दुस्साहस कर रहे हो।

धनञ्जय व्याकुल होकर बोला—रुक्मिणी तुम भूल रही हो। मैं तुम्हारी पवित्रता से धोखा नहीं खा सकता। मैंने तुम्हें उस युवक से छिप कर बातें करते देखा है। मेरे हृदय में आग जल रही है। आज तुम्हारे

नृत्य ने हवि म डालकर उसे धधका दिया है। सुन्दरी आज म तुम्हें नहीं छोड़ सकता।

देवदासी काँप उठी। उसने कहा—तुम पागल हो गये हो धनञ्जय! मैं तुमसे भीख माँगती हूँ। मुझे छोड़ दो।

किन्तु धनञ्जय हँस उठा। उसने उसे खींचकर अपनी छाती से लगाकर उसके सुन्दर मुख को चूम लिया। देवदासी क्रोध से उसके मुह पर हाथ से आघात कर उठी। विक्षुब्ध धनञ्जय को एक धक्का मारकर भागने लगी। धनञ्जय उसे पीछे से पकड़कर चिल्ला उठा—मैं तुझे नहा जाने दूगा स्त्री! तुझे मेरी यास बुझानी ही होगी। धनञ्जय आज तक कभी स्त्री से अपमानित नहीं हुआ।

नहीं! नहीं! नीच पशु! मैं चिल्ला चिल्लाकर सम्राट को बुला दूगी तू मुझ पर बलात्कार नहीं कर सकता।

धनञ्जय ने हँसकर कहा—तो तू चिल्लाकर ही देख ले।

देवदासी के मुह खोलते ही उसकी कठोर उङ्गलियो ने उसकी कोमल ग्रीवा को कस लिया और वह दाबते हुए कहने लगा—चिल्ला! जितनी शक्ति हो उतना चिल्ला चिल्लाकर आकाश सिर पर उठा ले। देखें कान तेरी रक्षा के लिए आता है।

धनञ्जय ने उन्माद में भर कर पूरी शक्ति से उसका गला दबा दिया। अपने बोलने में वह रुक्मिणी का आर्त्तस्वर नहीं सुन सका। देवदासी का शरीर झूल गया। धनञ्जय ने अपने हाथ खींच लिए। देवदासी का मृत शरीर पृथ्वी पर धड़ाम से गिर गया। धनञ्जय व्याकुल सा देखता रहा। भय से उसका शरीर जड़ हो गया। यह उसने क्या किया?

इसी समय एक कठोर स्वर सुनायी दिया—धनञ्जय तूने स्त्री की हत्या की है? क्योंकि वह तेरे प्रलोभन में नहीं फँस सकी? कुलांगार!

धनञ्जय काँप उठा। उसने मुड़कर देखा। पुजारी रत्नगिरि द्वार पर खड़ा था। धनञ्जय लड़खड़ा उठा। रत्नगिरि हँसकर कहा—भूल गया

अपना समस्त बल और वैभव के अत्याचार का बर्बर रूप ! स्त्री की हत्या करके भागना चाहता है ! तू एक देवदासी की पवित्रता को कलुषित करना चाहता था क्योंकि तुझे सेनापति का पुत्र होने का गर्व था ? तेरी शक्ति के सामने देवता का अपमान एक साधारण वस्तु है ? तेरे बल के सामने एक पवित्र नारी का सतीत्व कुछ भी नहीं ? धिक्कार है ऐसे भव को धिक्कार है ऐसे सामान्य को ! ब्राह्मण तुझे शाप देता है

किन्तु एकाएक पुजारी की जिह्वा रुक गयी। मस्तक में तीन नार कुछ चोटें कर उठा। पुजारी ने कहा— मैं सूर्यमणि को वचन दे चुका हूं पापी। जा भाग जा। अन्यथा अभी यहाँ भीड़ हो जाय गी और तू पकड़ा जायगा। तूने अनेक हृदयों का सर्वनाश कर दिया। किन्तु तेरे लिए जैसे युद्धभूमि में यश के लिए अनेक हत्या करना है वैसे ही एक यह भी सही। वहाँ तू अनेक स्त्रिया को धन और भूमि के लिए विधवा बनाता यहाँ तूने ब्राह्मण और देवता की सम्पत्ति पर पदाघात किया है।

धनञ्जय वज्राहत सा खड़ा रहा। पुजारी ने उसे धकेलकर बाहर कर दिया। उसने पास जाकर देखा देवदासी की आँखें उलट गया थीं जिह्वा बाहर निकल आयी थी। धनञ्जय ने पीछे से उसका गला घोंट दिया था। तभी उसके नयनों में कोई चिह्न नहीं था।

कैसा कठोर होगा उसका हृदय जो इस फूल सी बालिका की हत्या कर सका सूर्यमणि एक हत्यारे से विवाह करेगी ? और वह देखता रहेगा ? किन्तु राजमाता का मान सिन्धुनाद की उज्ज्वल देदीप्यमान कीर्ति !

वृद्ध शव पर रो उठा। उसने कहा— उन्हें क्षमा कर दे रुक्मणी ! सिन्धुनाद तेरा पिता है राजमाता इन्दिरा तेरी माता है सूर्यमणि तेरे पिता की पुत्री है और मैं सूर्यमणि को वचन दे चुका हूं। तू बिल्कुल पवित्र है आकाश की शरद पूर्णिमा की ज्योत्स्ना से भी अधिक श्वेत ! उन्हें क्षमा कर पुत्री ! मैंने तुझे बचपन से पाला था अपना वैराग्य मैंने

तेरे कारण त्याग दिया। क्षमा कर रुक्मिणी! ब्राह्मण देवता और देवदासी को सब कुछ खोकर भी क्षमा करना चाहिए पुत्री!

उसने देवदासी के शरीर को स्पर्श करके ऊपर हाथ करके कहा—देवता नारायण कामाक्षी! देवदासी को स्वर्ग में बुला लो। वह बिल्कुल पवित्र है। पुजारी उठा। उसने अपने आँसू पोंछ लिये और बाहर निकल आया। बाहर कोई वीणा बजा रहा था। रत्नगिरि कहा—मैंने देवदासी रुक्मिणी की हत्या की है। मैंने देवदासी रुक्मिणी को गला घोंटकर मार डाला है। भीतर परिक्रमा में उसका शव पड़ा है।

गीत रुक गया। वीणा की सिसक बन्द हो गयी। महा सम्राट् सिंहविष्णु हठात् उठ खड़े हुए। उनके उठते ही समस्त सभा हड़बड़ा कर खड़ी हो गयी। चारों ओर निस्तब्धता छा गयी। प्राङ्गण का बिल्लौर का मध्य भाग एक उदासीनता और किंकर्त्तव्य विमूढ़ता से स्तब्ध हो गया। महोत्सव रुक गया। स्त्रियों के आभूषण चुप हो गये पुरुषों के नयन विस्मय से खुल गये। प्राचीन राजमन्दिर की विशाल प्राचीरें विक्षुब्ध हो गयीं।

कुछ देर तक सब चुपचाप देखते रहे। सम्राट ने कहा—कौन? वही जिसने अभी अभी अप्सराओं का सा नृत्य किया था?

हाँ वही सम्राट! रत्नगिरि ने दूर से उत्तर दिया और प्राङ्गण की ओर बढ़ चला।

चारों ओर कोलाहल मच उठा—पुजारी रत्नगिरि ने अपनी पुत्री की हत्या कर दी! ब्राह्मण होकर उसने पवित्र देवता की सम्पत्ति को मार डाला! 'जन्म से जिसे उसने पाला उसी पर हाथ उठाया? उसने निरपराधिनी स्त्री का ध्वंस कर दिया? ब्राह्मण ने आज यह घोर पाप किया! रत्नगिरि ने पल्लव के गौरव वृक्ष को फल और फूलों से लदा देखकर भी कुठार चला दिया? प्राङ्गण में आकर अकेला रत्नगिरि मुसका रहा। उसको चारों ओर से सम्राट राजकुमार सामन्तों

नागरिका कुलीन ललनाओं और जनसमुदाय ने घेर लिया। सब कुछ न कुछ उसके विरुद्ध कह रहे थे। सम्राट् कुछ सोच रहे थे। किसी को भी विश्वास न था। पुजारी रत्नगिरि साम्राज्य का सबसे पवित्र ब्राह्मण था। चारों ओर से प्रश्नों की भरमार होती रही। जनसमुदाय विक्षुब्ध होकर उसे धिक्कार रहा था। सामन्तों की भृकुटि खिंच गयी थी। सब उसे क्रुद्ध-दृष्टि से घृणा से व्याकुल होकर देख रहे थे किन्तु पुजारी रत्नगिरि निर्भीक खड़ा रहा। रङ्गभद्र ने उसके पास जाकर कहा—

पुजारी! तुमने रुक्मिणी को मार डाला? तुमने उसके मनुष्य होने के प्रयत्न को देखकर उसका बध कर दिया? ब्राह्मण! तुम युग युग तक रौरव की यातना भोगोगे। तुमने एक मनुष्य को पशु बनाना चाहा था और जब उसने मनुष्य होने का प्रयत्न किया तुमने उसे कुचल दिया? क्योंकि वह मेरे साथ भागनेवाली थी? राजकुमार महेन्द्रवर्मा ने आगे बढ़कर कहा— ब्राह्मण होने से तुम अवध्य हो पुजारी। किन्तु ब्राह्मण आज तक पशु बलि देते थे तुमने नरमेध किया है। मैं आज उस धर्म के नाम पर पूछता हूँ क्या वैष्णव भक्ति में पिता पुत्री की हत्या करके नहीं मर सकता? रङ्गभद्र की ओर दिखाकर सम्राट सिंहविष्णु ने कहा—

यदि यह युवक सत्य कहता है तो पुजारी का कोई दोष नहीं। उसने देवता की सम्पत्ति को अपवित्र होते देखकर उसका ध्वंस करके पवित्र भागवत धर्म की रक्षा कर दी। रत्नगिरि! बोलो कहो देवदासी अनाचारिणी थी?

रत्नगिरि ने अविचलित स्वर से कहा— यह युवक झूठ बोलता है। मैंने इसे कभी भी उससे बात करते नहीं देखा। देवदासी सदा अकलुष पवित्र और पुण्य से भी मधुर थी। उसकी आत्मा प्रभात के नीहार की भाँति उज्ज्वल कल्मषहीन थी।

सम्राट सिंहविष्णु ने क्रोध से कहा— तब तू ब्राह्मण नहीं है रत्नगिरि तू चाण्डाल है। अपनी पुत्री को निष्कारण मारकर तू पत्थर की तरह

मेरे सामने खड़ा है। राजकुमार महेन्द्र वर्मा सच कहता है कि ब्राह्मण को अवध्य कहना धर्म का सबसे बड़ा दुराचार है।

र न गरि ने कहा— सम्राट रत्नगिरि पुत्री की हत्या करके अब ब्राह्मण नहीं रहा। वह हत्यारा है।

इ ी समय राजमाता धीरे धीरे रत्नगिरि के सम्मुख आ खड़ी हुई। उनकी आँखों में अश्रु छा रहे थे जिनमें वा सल्य और भय मिश्रित घृणा चमक रही थी। उन्होने कहा— पुजारी सच कहो पुत्री को तुमने ही मारा है?

पुजारी ने कुछ जवाब नहीं दिया। राजमाता फूट फूटकर रो उठीं। उनका हृदय टुकड़े-टुकड़े हो रहा था। उन्होंने कहा— तुम रक्षक नहीं हो तुम हिंस्र पशु हो। ज म से तुमने उसे पाला, फिर क्या इसी अन्त का तुमने उसके ि ये निर्णय किया था? पैदा होते ही क्यों न मार दिया पिशाच स्वर्ग की उस अमूल्य पवित्र प्रतिमा का तुमने अन्त कर दिया तु हें क्या मालूम मेरे हृदय की वेदना

उनका कण्ठ रुध गया। पुजारी ने उनकी ओर देखा। वह रोती रोती पीछे हट गया। आगे आकर कवि सि धुनाद ने कहा— पजारी य तुमने क्या किया सच कहो तुमने यह हत्या क्यों की? तुम तो उसे लेकर काशी जा रहे थे! रत्नगिरि तुमने क्या यही मित्रता दिखायी है? आजीवन प वित्र रहे हो तम? तुमने स्त्री हत्या ही नहीं की तुमने देवदासी की ह या की है! ब्राह्मण होने के कारण तु हारी ह या नहीं की जा सकती क्या इसी से तुमने ऐसा किया? आजतक तो तुमने कभी अपने अधिकारों का दुरुपयोग नहीं किया? क्या देवदासी पापिनी थी?

उस समय रत्नगिरि ने ह ्ढ स्वर से कहा— नहीं कवि!

स धुनाद की आँखों में आँसू छा गये। उसने धीरे से कहा— तुमने सबसे बड़ा पाप किया है। तुमने अनेक हृदयों पर ठोकर मारकर चूर कर दिया है। तुम मेरे मित्र हो। रत्नगिरि क्या तुम अब जीवन

भर अपने इस भीषण पाप की ज्वाला में जीवित ही नहीं मर जाओगे? कैसे सह सकोगे यह सब ब्राह्मण? कि तु तुम अब सब कुछ सह सकोगे वज्र हृदय! तुमने ह या की है। तुमने विश्वासघात किया है। तुमने इस वृद्ध का हृदय बिलकुल ध्वस्त कर दिया है। क्या चिता की भस्म को अपने पापी नयनों से घूर रहे हो? रत्नगिरि यह तुमने क्या किया?

पुजारी ने नीचे का होंठ दाँत से काट लिया और चुपचाप खड़ा रहा।

सम्राट सिंहविष्णु ने कहा— ब्राह्मण को राजमन्दिर से बाहर निकाल दो उसको पल्लव साम्राज्य से निर्वासित कर दो। मैं आज्ञा देता हू कि पल्लव का एक भी नागरिक नैनिक अथवा जो कोइ भी हो ब्राह्मण को एक मुट्ठी अन्न न दे एक बूद पानी न दे और इसके पाप से पूर्ण मुख को देखकर चिल्ला उठे—नारायण! नारायण!!

समस्त समुदाय पुकार उठा— नारायण! नारायण!!

सम्राट सिंहविष्णु ने फिर कहा— मन्दिर को यज्ञ से पवित्र करना होगा। यहाँ ब्राह्मण के वेश में एक चाण्डाल रहता था। इसे निकाल दो।

रत्नगिरि धीरे से मन्दिर के बाहर निकल गया। सहस्रों हृदय एक स्वर से उसे धिक्कार उठे।

—८—

उस समय मन्दिर निर्जन हो चुका था। निस्तब्धता सनसना रही थी। नागरिक समुदाय अपने अपने घरों को लौट चुका था। दीप बुझ चुके थे। घोर नीरवता छा रही थी। स्तम्भ के सहारे खड़े युवक की तन्द्रा टूट गयी। वह धीरे धीरे बाहर आया और पेलार नदी की ओर चल पड़ा।

प्रभात का मधुर प्रकाश सिकता पर डोलने लगा। धीवरों की वंशी की करुण लहरियाँ सिन्धु मिलन के लिए अधीर ऊर्मियों पर फहरने

लगीं। सहसा युवक ने पोत पर चढ़कर पुकारा— कदम्ब! सेवक ने झुककर कहा— प्रभु!

हमारे पास कितन पोत हैं? युवक ने अविचलित स्वर से पूछा।

चौबीस प्रभु! सेवक न विनीत उत्तर दिया।

इनकी सम्पत्ति बाँट दो कदम्ब! काञ्ची की भूखी प्रजा को वह सब दान कर दो।

प्रभु! कदम्ब न विस्मय से कहा।

विस्मय न करो कदम्ब! आज महाश्रेष्ठि रत्नभद्र प्राणों का व्यापार करन सिंहल जा रहा है। जिस मोती को खोजन वह महासमुद्र में गोता मारन जा रहा था वह उसे भीषण से भीषण समुद्र का म थन करके भी अब नहीं मिल सकता।

प्रभु! सेवक न फिर निवेदन किया—'स्वामी का चित्त आज कुछ अस्थिर है।

नहीं कदम्ब! रत्नभद्र अब कभी विचलित नहीं हो सकता। जिस धन को मैं आज एकत्रित करने जा रहा था आज उसी धन और अधिकार के मद न मुझे आमरण जीवित ही जलन का महान् वरदान दिया है। रत्नभद्र कभी भी अब काञ्ची की अभिशप्त नगरी को नहीं लौटेगा। पल्लव साम्राज्य का यह भीषण नरमेध आज पाषाणों के चरणों को अपन रक्त से रग चुका है। मैं इससे घृणा करता हू कदम्ब! मै इससे जी भर कर घृणा करता हू।

कदम्ब चला गया। युवक थोड़ी देर तक खड़ा रहा और फिर सहसा ही पुकार उठा—'माँझी पोत को बहने दो।

कठोर मास-पेशियों वाले नाविकों की पतवारा न अथाह नदी की लहरों को काटना प्रारम्भ किया। फेन उठकर पोत के किनारे पर छींटे मारनें लगे। अकेला पोत सागर की ओर बह चला। निराधार अनन्त जलराशि पर डगमगाता काँपता भयभीत होता। पाल हवा से भरकर

फैल गये । उज्ज्वल प्रकाश लहरों पर भागने लगा। तीर दूर छूट गये। पोत की गति तीव्र होने लगी।

रङ्गभद्र एक बार ज़ोर से हँस उठा और फिर सिर थामकर अर्द्ध मूर्छित सा बैठ गया। वह न जाने कौन सा मोती ढूंढने जा रहा था? चारों ओर महानद का ऊर्म्मिजाल अट्टहास कर उठता था और ऊर्ज्जस्वित प्रतिध्वनि आकाश में मंडराने लगती थी।

प्रवाह पर पोत मन्थर गति से बहा जा रहा था। दूर सुदूर केवल जलराशि के अतिरिक्त आज चारों ओर कहीं भी कुछ न था। क्षितिज जैसे सन्निपात में कुछ मर्मर कर रहे थे और रङ्गभद्र बैठा रहा, बैठा रहा। विश्रांत पराजित विध्वस्त ... अवसाद का टूटा हुआ स्तम्भ अभिलाषाओं की धधकती भस्म का उन्माद ... ।

पेड़

पंडित सालिगराम को अपनी छोटी सी हवेली बहुत प्यारी थी। उन्होंने अपनी गरीबी से जीवन भर संघर्ष करके भी उसे अपने हाथों से बाहर नहीं जाने दिया था। चाहे घर कितना भी पुराना क्यों न हो किन्तु फिर भी पुरखों की शान था। आखिर वे उसी में पले थे। उन्होंने उसी में घुटने चलना प्रारंभ किया था, उसी में चलना सीखा था और जीना तो था ही मरना भी प्राय उसी घर में निश्चित था। घर के सामने ही एक छोटा सा मैदान था। कहने को तो वह वास्तव में पंडितजी की ही जमीन थी किंतु उन्होंने अपनी रहमदिली के कारण उसके चारों ओर कभी काँटे नहीं बिछवाये। गाँव के बच्चे आते। आज़ादी से गोदी के बच्चों को धूल में खेलने को छोड़ कर बड़े बड़े बच्चे मैदान के बीच में खड़े बड़े से बरगद के पेड़ के नीचे छाया में

कबड्डी खेलते। अकसर चाँदनी रातों में डू डू डू डू की आवाज गूंजा करती। कभी कभी पंडितजी की रात में नींद खुल खुल जाती जब कोई लड़का खम ठोक कर पूरी आवाज से चिल्लाता—

मेरी मूछें लाल लाल

चल कबड्डी आल ताल ।

किंतु पंडितजी ने कभी क्रोध नहीं किया। उनके पुरखों ने इसी छाया के लिये वह पेड़ लगाया था। गाँव के लोगों से यह छिपा नहीं था कि जिस पेड़ का एक छोटा-सा पौधा मात्र लाकर उनके पुरखों ने अपना स जी उगाने की जगह लगाया था वही अब इतना फल फूल कर खूब फैल गया है। इसी की जड़ अपने आप इतनी फैल गई हैं कि जमीन का सारा रस चूस लिया है। अब उस जमीन में दिन रात अंधेरा सा छाया रहता है। पेड़ की डालिया में अनेक पंछी रहते हैं। कौन नहीं जानता इन पंछियों की बान कि चरसी यार किसके दम लगाये खिसके। आज यहाँ हैं कल वहाँ। सिर्फ मतलब के यार हैं।

उस जमीन में सब्जी की भली चलाइ घास तक ढग से नहीं उग सकती। उल्टी बरगद की जटाओं ने लौटकर अपनी मजबूत हथेलियों को धरती में घुसा दिया है कि पूरा महल-सा लगने लगा है। एक दिन पंडितजी के पुरखा ने इसी छाया के लिये तो उसे वहाँ भरकर पनपने के लिए छोड़ दिया था।

पण्डितजी को कभी वह पेड़ नहीं अखरा। सदा उसकी हरियाली का वैभव देखकर उनकी आँखें ठंडी होती रही हैं।

और पण्डितजी देखते कि गूलरों के गिरने पर बच्चों का जमघट आकर इकट्ठा हो जाता। सब ओर शोर करते। और गाँवों के महरबान जमीनदार को तो जैसे उस पेड़ से खास प्रेम था। दसहरे पर जब गद्दी होती तो वे उस शाम को इसी पेड़ के नीचे अपना दरबार करते। आस पास के गाँवों तक से लोग उन्हें भेंट देने आते। भला वे राजा

आदमी। पेड़ क्या हुआ उन्होंने उसे गाँव वालों के लिए भगवान का अवतार बना दिया।

पेड़ भी एक ही कमाल का था। जगह जगह उसमें खोखले हैं। शायद जगह जगह उसमें साँप हैं। और उसके अरमानों की थाह नहीं। वामन की विराट रूप की भाँति तीन डगों में ही सारे संसार को नाप लेना चाहता है। आकाश पाताल और धरती। ऊपर भी फैलता नीचे भी उतरता है और धरती को भी जकड़ता चला जाता है। जैसे पृथ्वी को सभालने वाले हाथियों में एक की संख्या बढ़ गई हो। हवेली की बगल में पेड़ की इस सघनता से एक सुनसान बियाबान की सी नीरवता छा गई है। और शायद अब वह दिखाई भी नहीं देती। पेड़ ही पेड़ छा गया है।

और रात को जब अंधेरा फैल जाता है तब उस सन्नाटे में हवा के तेज झोंकों में जब पेड़ खड़खड़ाता है तब लगता है जैसे कोई भयानक दैत्य अपने शिकार पर टूट पड़ने के पहले भयानक आकार को हिला रहा हो।

पण्डितजी की छोटी बच्ची भय से आँख मीच लेती और अपनी माँ की छाती से चिपट जाती। पण्डितजी यह भी देखते किंतु कभी इस बात पर ध्यान नहीं देते क्योंकि उन्होंने सदा ही अपने पूर्वजों की बुद्धि पर विश्वास किया है और इतना किया है कि अपने पर तो कभी किया ही नहीं

—२—

पण्डितानी सुबह उठकर नहाती हैं। दिन में नहाती हैं साँझ को नहाती हैं। किंतु फिर भी उन्हें कोई साफ सुथरा नहीं कह सकता जैसे वह पानी एक चकने घड़े पर गिरता है फिसल जाता है।

पण्डितजी बैठे पूजा कर रहे थे। एकाएक बाहर शोर मच उठा। पण्डितजी की पूजा में व्याघात पड़ गया। शोर बढ़ता ही जा रहा था। कुछ समझ में नहीं आया। इसी समय कुछ लड़के उनकी छोटी

बच्ची को उठाकर भीतर लाये। लड़कों की आकृति सहमी हुइ थी। डर डरते लाकर उन्होंने उसे उनके सामने रख दिया।

पण्डितजी ने देखा बच्ची की नाक से खून बह रहा था। सारी देह नीली पड़ गइ थी।

उन्होंने मर्माल स्वर में पूछा—क्या हुआ इसे ?

कंठ अवरुद्ध हो गया वे और कुछ भी नहीं कह सके।

एक लड़के ने सहमी हुइ आवाज में कहा बरगद के नीचे झाडियों में से कोई साप काट गया। काट गया ? उन्होंने चीखकर पूछा।

लड़कों ने कोइ उत्तर नहीं दिया। सब ने सिर झुका लिया। इस कोलाहल को सुनकर पण्डितानी भींगे कपड़े पहने ही बाहर आ गइ और बच्ची की यह हालत देखकर उससे चिपट गई और जोर जोर से रोने लगी।

पंडितजी किंकर्त्तव्यविमूढ़ से खड़े रहे। वे कुछ भी नहीं समझ सके कि उन्हें क्या करना चाहिये ?

और धीरे धीरे अड़ोस पड़ोस के अनेक किसान आ आकर इकट्ठे होने लगे।

पंडितानी का करुण क्रंदन सबके हृदय को हिला देता है। ऐसा कौन सा पाप किया था कि जिसके सामने उठना चाहिये था वही आज अपने सामने से उठा जा रहा है और हम चुपचाप देख रहे हैं।

पण्डितजी सुनते थे और उनकी आंखों में कोइ तरलता नहीं थी।

पहली बार उन्होंने बरगद की ओर आंख उठाइ जैसे अपने किसी विराट शत्रु की ओर देखा हो। वे देर तक उसे घूरते रहे।

यही है वह पुरखों का जो दैन्य आज संतान को ही खा जाना चाहता है।

और पहली ही बार उन्होंने अनुभव किया कि उनके घर की भी कोई बचत नहीं।

इधर ही झुका आ रहा है। आज उनकी हवेली गिरेगी कल करीम का मकान गिरेगा फिर बस्ती के सारे मकानों पर उल्लू बोलेंगे। और तब भी यह दैत्य का सा बरगद अपनी जटाओं के अंकुश भूमि में गाड़कर खड़ा रहेगा जैसे सारी जमीन इसी के बाप की है।

विक्षोभ से उनका गला रुँध गया। उन्होंने एक बार जोर से अपनी मुट्ठियाँ भींच लीं और देखा पंडितानी का हृदय टुकड़े टुकड़े होकर आसुओं की राह बहा जा रहा था। उन्होंने बच्ची को गोद में धर लिया था और तरह तरह के विलाप कर रही थी। रुदन की वह भयानक कठोरता उनके मन में ऐसे ही उतर गई जैसे साप उनकी बच्ची को खा कर फिर उस पेड़ के खोखले में छिप गया होगा।

उन्होंने बड़ी देर तक निश्चय किया फिर धीरे से कहा—रोने से क्या अब वह लौट आयेगी?

पंडितानी ने लाज से आज माथे पर घूघट नहीं सरकाया क्योंकि इस समय वह बहू नहीं माँ थी।

लोगों ने पंखे बाधकर बच्ची को उस पर सुला दिया और पंडितानी चिल्ला उठी—धीरे बाँधो मेरी बच्ची को धीरे कि कहीं उसको लग न जाये।

पंडितजी का हृदय भीतर ही भीतर काँप उठा और उनकी आँखों से आँसू की दो लाचार बूंदें धीरे से गालों पर बहती हुई भूमि पर टपक कर उनके मन की अथाह वेदना को लिख गई

—२—

पंडितजी का निश्चय निश्चय था। करीम की राय तो पहले ही थी कि बरगद काट दिया जाये। कौन सा लाभ है उससे? इधर बड़ी देह रखकर देता क्या है गूलर जो न खाने के न उगलने के फूले की सी आँख न खूबसूरती की न देखने की।

पंडितजी ने कहा इसी बरगद को मेरे पुरखा ने आपके पुरखों ने

अपना समझ कर पाला था। आशा की थी कि एक दिन इसकी छाया होगी। आसमान से होने वाले अनेक वारों से यह हमें बचायेगा। लेकिन भइया करीम यही होना था क्या ?

कौन सुनेगा तुम्हारी पुकारों को पंडितजी करीम ने सोचते हुए कहा—यह बरगद उतनी ही आन रखता है जितने फल फूल सके। इसे भला मतलब कि हम आप जी रहे हैं या मर गये। इसके तो कोई इंसान के से कान हैं नहीं।

लेकिन पंडितजी ने तड़पकर कहा — दुनिया भर के जहर को अपने आप में भर लेने के लिये इसकी छाती में जगह की कमी नहीं।

करीम ने हंसकर कहा—आप भी कैसी बात करते हो ? जानते हो रात को कैसी नशीली हवा में सोना पड़ता है हमें ? और भइया यह तो इस पेड़ की आदत है। जहाँ बोओगे वहीं जड़ फैलायेगा। कोइ नहीं रोक सकता।

नहीं कैसे रोक सकता ? इसे मैं कटवा दूंगा। पंडितजी ने विक्षुब्ध होकर कहा।

तुम करीम ने विस्मय से पूछा— पंडित होकर पेड़ कटवा दोगे ? धरम करम सब छोड़ दोगे ?

धर्म पंडितजी ने आसन बदल कर कहा— धर्म का नाम न लेना करीम ! मेरी बच्ची का खून है इसके सिर पर। इस पर हत्या का दोष है। जाने कितनों के बच्चे अभी और काटेगा ? और कमबख्त का हौसला देखो। अब इसका जाल इतना फैल गया है कि हमारे ही घर को ढहा देना चाहता है। मेरे बाद तुम्हारी ही बारी है करीम

करीम ने हाथ उठाकर कहा— अल्लाह रहम कर। पंडितजी ! कहीं के न रहेंगे। इसे कटाना ही पड़ेगा।

पंडितजी को कुछ सन्तोष हुआ। मन की जलन पर कुछ शीतल लेप हुआ। तब एक आदमी तो साथ है। पुरखे तभी तक अच्छे हैं जब

तक पितर हैं पानी दे दिया लेकर चले गये यह क्या कि अपन ही बच्चों पर भूत बनकर सवार और रोज रोज गङ्गा नहान के खर्चे की धमकी दे रहे हैं। अरे अगर जिन्दा ही नहा खावेंगे तो इन कमबख्तों को कौन चरायेगा?

पंडितजी उठ पड़े। घर आकर पंडितानी से कहा। उनकी आँखा में आँसू और होठों पर एक फीकी मुसकराहट छा गइ। किंतु हृदय में एक शका भीतर ही भीतर काँप उठी। फिर भी उन्होंने कुछ कहा नहा।

गाँव भर में पेड से एक दहशत छा गइ। ब चा ने पेड़ के नीचे खेलना ब द कर दिया। जैसे वह फूहड़ की तलैया का दूसरा भूत हो गया।

पेड के नीचे का मैदान नीरव हो गया। अब उसमें कभी कभी कोइ कोई अकेली गिलहरी भागती हुई दिखाइ देती है। और फिर शाखा में जाकर छिप जाती है। अब कोई मसाफिर उसके नीच नहीं लेटना। क्या जाने कब साप आये और सोते के कान में म तर प जाये?

पंडितजी का निश्चय गाँव में एक अचरज फैलाता हुआ फैल गया। लोगों के हृदय में उनके साहस उनके जीवन के प्रति एक अज्ञात श्रद्धा जाग्रत हो गइ।

—४—

मजदूर पेड काटने लगे। गाँव के अनेक अनेक लोग आते देखने और इधर उधर की बात करके चले जाते। सचमुच अब पेड़ से प्रत्येक को एक न एक शिकायत थी जो आज तक किसी ने प्रकट नहीं की। आज सब ही को उस पेड से एक निहित घृणा थी। हमारे सीने पर ऐसा खड़ा था जैसे मूँग में मुगदर।

एकाएक जमींदार के कारिंदे ने कहा—पंडित जी पा लागन।

खुश रहो भइया खुश रहो। पंडितजी ने कहा—कहो कैसे आये?

सरकार ने याद फरमाया है।

चलता हूं पंडितजी उठ खड़े हुए।

हजूर कारिन्दे ने कहा—एक बात और है।

क्या बात है? पण्डितजी ने भौं सिकोड़कर उत्सुकता से पूछा।

सरकार पेड़ का काटना बंद करवाना चाहिए।

पेड़ कटना क्या? पंडितजी ने एकदम टकरा कर गिरते हुए व्यक्ति की सी चीख निकाली।

हाँ सरकार

नहीं हो सकता यह। पेड़ तो कट कर ही रहेगा। जमीं मेरी है मालिक का इसमें क्या उजर है?

सोच लीजिये पंडित कारिंदे ने आँख मटका कर कहा।

सोच लिया है सब। न जाने पंडितजी में इतना साहस कहाँ से आ गया?

सुनने वाले सहम से खड़े रहे। कारिंदा चला गया। पंडितजी ने कहा—काटो पेड़। यह तो कट कर ही रहेगा।

मजदूर फिर काटने लगे। अचानक एक दर्दनाक चीख। क्या हुआ? पंडितजी ने पुकार कर पूछा।

एक मजदूर शाख पर से नीचे टपक पड़ा। उसे सांप ने काट लिया था वह मर रहा था। मजदूर कूद-कूदकर भागने लगे। पंडितजी ने चिल्लाकर कहा—कहाँ जा रहे हो आज इसकी एक एक जड़ उखाड़ कर फेंक दो वर्ना कल यह सारी बस्ती को वीरान बना देना। डरो नहीं। और पेड़ से मुड़कर कहा—ओ राक्षस तेरी एक एक डाल में मौत का भीषण ज़हर है आज मैं तेरी बोटी बोटी काट डालूंगा।

लोगों ने मजदूरों को घेर लिया था। वे कुछ नहीं समझ पा रहे थे। कोलाहल मचने लगा था।

एकाएक पंडितजी ने सुना—देखा? तेरे पाप का फल। दूसरों को खाने लगा है। तूने धरम की जड़ पर वार किया है।

पण्डितजी चौंक उठे। उन्होंने कहा—मालिक! इसने दो खून किये हैं।

'खून इसने किये हैं कि तेरे पाप, तेरे पिछले जनम के पाप ने?' जमींदार साहब ने कहा। पंडितजी ने तड़पकर कहा—और इसने हमारे घर की रोशनी बंद कर दी है इसने हमारे घर में अंधेरा कर दिया है इसने अपने भयानक गड्ढों से हमें खंडहर बनाने का इरादा किया है इसने हमारे बच्चों को डसा है मैं आज इसे काटे बिना नहीं रहूँगा।

कहते हुए पंडित सालिगराम ने जमीन पर पड़ी हुई कुल्हाड़ी को उठा लिया।

जमींदार साहब ने कहा — देख पागल न बन। देखता नहीं मेरे साथ कौन हैं?

पंडितजी ने देखा। पुलिस के सिपाही थे। जमींदार साहब ने मुसकरा कर देखा। पंडितजी चिल्ला कर कहने लगे— मालिक जमीन मेरी है।

खामोश जमींदार ने चिल्लाकर उत्तर दिया— कैसे है तेरी जमीन? जिस जमीन पर हमने दरबार किया है वह तेरी कहाँ है? आज तू उसे काट रहा है जिसकी छाया में हमने राज किया है। कल तू हम पर हाथ उठायेगा।

मगर यह धरती बगावत कर रही है वह मेरी हो गई है। पंडितजी ने कुल्हाड़ा उठाकर कहा— मैं इसे जरूर काटूंगा।

जड़ पर कुल्हाड़ा पड़ते ही पंडितजी मूर्छित होकर गिर गये। उनके सिर पर ज़मींदार के गुर्गों के लट्ठ बज उठे।

और बरगद अपने चरणों पर बली का रक्त फैलाये ऐसा लगता था जैसे अश्वमेध के उठते धुएं में एक दिन साम्राज्य की पिपासा से तृप्त समुद्रगुप्त हुआ होगा।

गाजी

आ रे के प्राचीन नगर में बाजार के ऊपर एक बड़ी लाल मस्जिद है। कहा जाता है यह मुगलों के ज़माने में एक भव्य स्थान था। अनेकानेक युग बदल गए हैं किन्तु हाथ मुंह धोकर जब अस्सी बरस का बूढ़ा इमाम सामने लड़कों को बिठा कर पढ़ाने लगता है तब उसके होठों पर एक कम्पन छा जाती है और लगता है कि वह व्याकुल हो उठा है और नहीं जानता कि अन्तर की उस हलचल को छिपाने के लिए वह क्या करे ? बूढ़े का मुख अनेक ऋतुओं के थपेड़े सह-सहकर झुर्रियों से भर गया है किन्तु उसकी सफेद दाढ़ी को देख बाजार के गुण्डों का भी सिर अज्ञात श्रद्धा से झुक जाता है। वृद्ध के शरीर पर उसका लम्बा मटमैला ढीला ढाला सा कुर्ता झूला करता है। अब उसके कोई कहीं नहीं है। सुबह की ठण्डी हवा में जब उसका अजां का स्वर गूंजने लगता है तब पानवाले रऊफ का पिंजरे में बन्द तोता टें टें कर उठता है मानो वह भी उसकी याद में बोल उठता है जिसको इमाम अपने उस लम्बे पथ से याद कर रहा है जिसका प्रत्येक पल काफिले के एक एक ऊँट की तरह जिन्दगी के रेगिस्तान पर चलता चला आया है। और गंभीर कण्ठ का वह स्वर थोड़ी देर तक चारों ओर चक्कर मार और उस निस्तब्धता में कांप फिर एक भारी भाफ़ की तरह उड़कर आसमान में लटक जाता है।

इस्लामी होटल में नीचे भाड़ लगने लगी। आने वाले दोनों पठान चाय पीने लगते और होटल का लड़का कभी उनको घूरता और दबी ज़बान में कभी-कभी मज़ाक करने की भी कोशिश करता। किन्तु जब बाज़ार की वह घोर हलचल भी मस्जिद की सीढ़ियों पर शोर

मचाती हुई चलने लगती तो बरबस ही उसका मुंह बन्द हो जाता और वह चुपचाप दबे पाँव लौट जाती। कभी कदा आसमान में हवाई जहाज उड़ते, कभी कदा नीचे कसाई की दुकान से गोश्त के कच्चे टुकड़े काटने का शब्द आता और फिर कभी कभी दो तीन दुकान छोड़ कर जो दुमंजिले पर एक छत है वहाँ बही खाते लेकर बाज़ार के बनिये आकर इकट्ठे होते और सट्टा होता। किन्तु वृद्ध इन बातों में कभी दिलचस्पी नहीं लेता। सोचता यह तो सब देखा हुआ है। इसमें है ही क्या?

लड़के सामने बैठ झूम झूम कर पढ़ते। वृद्ध इमाम बैठा-बैठा देखता रहता कि लड़कों के कोमल कण्ठों की काँपती आवाज शीशे की तरह झनझनाती हुई मस्जिद के लाल पत्थरों से टकरा उठती और वृद्ध एक लम्बी साँस खींच कर ऊपर देखने लगता। उस समय लड़के कुछ देर को आपस में ऊधम कर लेते और फिर वही सिर हिलाना हिल हिल कर पढ़ना। और जीवन की नवीनता ऐसे शुल मचाने लगती जैसे बाग में बहार चहक उठती है लहरों में चंचल कोलाहल होने लगता है।

वृद्ध ने अपने हाथ धोकर मुंह धोया और सीढ़ी से नीचे उतर चला। रज्जफ की बूढ़ी झुकी माँ ने देखा और कहा— आज कहाँ चले?

कहीं नहीं —वृद्ध ने कहा और छज्जे पर ही बैठ गया।

कसाई अपनी मैली चादर ओढ़ कर दुकान में ऊंध रहा था। बाजार पर दोपहर की थकान छाने लगी थी। एक आध तवायफ दिन में ही बाहर छज्जे पर आ बैठी थी और बाजार में आते जातों से आँखों के खेल कर रही थी। कभी-कभी जब वह बनावटी अगड़ाई लेने लगती तो सामने दर्जी की दूकान से लड़कों की नजर उधर ही अटक जाती और फिर वे बगलों में हाथ दबा कर भद्दे ढंग से हँसते। कुछ

फौजी सड़क पर से चक्कर लगाते हुए उसकी ओर सतृष्ण नयनों से देखते ।

बूढ़ी न कहा — इमामपाक कहो अब भी खुदा हम पर मेहरबानी क्या नहीं करता

इस्लामी होटल में शीरीं फरहाद का नाटक ग्रामोफोन पर बज रहा था। उसका स्वर कभी कभी इधर भी थिरकने लगता और फिर तालियों की खनखनाहट होती। वृद्ध न एक बार अपनी सफेद दाढ़ी पर हाथ फेरा और कहा— रऊफ की माँ खुदा क्या करता है यह तो हम लोग जो गुनाहों में डूबे हुए हैं। इतनी आसानी से नहीं समझ सकते।

दुरुस्त है —ज बार साइकिल का ट्यूब तसले के पानी में घुमाते हुए कहा। वह देख रहा था कि कहीं पञ्चर तो नहीं रह गया है ?

वृद्धा ने पोपले मुह से एक बार कुछ कहना चाहा किन्तु फिर कुछ सोच कर रुक गई। रऊफ न घुटनों पर जोर देकर कहा— अब कल से देखना क्या लुत्फ आएगा। कहते हैं दो छटाक गेहू का राशन मिलेगा और । वह कठोर हँसी हस पड़ा जिसमें एक नहीं अनेक वेदनाओं की घुटन लुट गई और लुटेरा आसमान तक अपने डंके की चोट को गुंजा कर इन्सान का गला घोंटने लगा।

वृद्धा न कहा— अल्लाह रहम करे। हमारे जमाने में फकीर को भी बुला बुला कर खैरात दी जाती थी बेटा।

कसाइ जो जाग कर सुन रहा था कह उठा — यानी भिखारियों को पाला जाता था। अंगरेजों का रहम है अम्मी अब हिन्दुस्तान को भिखारियों की कोई जरूरत नहीं। उन्हें भूखों मार दो।

जब्बार ने एक दम जोश से उठते हुए कहा— और यह भिखारियों की बला हटाने के लिए सबको ही भिखारी बना दिया। जिस मुल्क में

कोई खायगा वहीं तो भूखे की आह लगेगी ? वह भी हसा आर वातावरण पर एक ह कापन छा गया।

रऊफ की मां न खखार कर थूका और मुह में त माकू डालत हुए कहा— बेटा एक वह भी दिन था जब हमारी मां कहती थीं कि ये फिरंगी ।

रऊफ न चौंक कर जरा कठोर स्वर से एक दम टोक दिया— अम्मी !

वृद्धा फिर मुस्करा उठी जैसे कुछ नहीं हुआ। बात बदल गई। वृद्धा न कहा— अभी कितनी और है इमामपाक ?

इमाम ने बिना उसकी तरफ देखे ही कहा— कितनी भी हो मुझ तो वह काम दिया है उसन जिसके लिए एक दिन किले के बुर्ज में बादशाह तडपा करता था।

वृद्ध की बात कितनी गहरा से छा गई यह वृद्धा के अतिरिक्त और कोई नहीं समझा क्योंकि जिस दिन की बूढ़ा कह रहा था सिवा वृद्धा के उस दुनिया की छाया के निकट और कोई नहीं था।

आर शीरीं फरहाद का वह नाटक अब भी बज रहा था। उसमें गलत इतिहास था लेकिन इन्सान की वह भयानक ताकत जिसन बारूद से नहीं बेलच से चट्टानों को निचोड़ कर पानी निकाल दिया था जसे कोई सल्तनत के फरेब में से सचाई का आब निकाल ले।

सांझ की धूप मस्जिद के ऊँचे गुम्बद पर ठण्डी होकर लेटी लेटी सरकने लगी थी। इमाम न कहा— उन दिनों शाहशाह औरंगजेब कुछ बेचैन रहा करते थे। उन्होंन सिक्खों के गुरु को कैद कर लिया। और जानते हो उस पीर न कैद की घड़ी में कैदखाना की खिड़की से क्या देखा ?

छोटे छोटे बच्चों न उत्सुकता से कहा— क्या देखा इमामपाक ?

वृद्ध न कहा— उसन देखा दूर समुन्दर पर फिरंगियों के कुछ

जहाज खड़े थे। हिन्दुस्तान से व्यापार करने आए थे। सौदागरों को शाहंशाह ने रहम करके रहने के लिए जमीन दी थी। और उसने देखा जहाजों के सफेद सफेद पाल हवा से भर कर फूल उठे थे।

बच्चों का ध्यान एकत्र हो गया। उन्होंने यह भी नहीं देखा कि गुम्बज पर अब एक कौआ आकर बैठ गया है और अपनी गर्दन को देखने के लिए ऐसे घुमा रहा है जैसे उसे एक ही आँख से दिखाई देता है। और दिन होता तो यूसुफ जरूर मोहसिन की बगल में कुहनी मार कर उसे दिखाता और फिर दोनों उस तरफ ललचाई आँखों से देखते। हसन ने कहा— फिर?

फिर —इमाम ने गम्भीर स्वर में कहा— उस पीर ने कहा कि एक दिन ऐसा आयगा जब हमारे झगड़ों से बेईमान फायदा उठायेंगे और सारे हिन्दुस्तान पर ये सफेद पाल एक किनारे से दूसरे किनारे तक छा जायगे।

इसी वक्त अस्पताल की सड़क पर बहुत से लोगों के गले से इंक्लाब जिन्दाबाद सुनाई दिया। बच्चों के रोंगटे खड़े हो गये। वृद्ध सिहर उठा। उसने भर्राए गले से कहा— बच्चो मैं अस्सी बरस का बूढ़ा हू लेकिन उन दोनों सतरों को कभी नहीं भूल पाता जो मुगलों के आखरी चिराग शाहंशाह बहादुरशाह के मुह से उनके आखिरी दिनों में रंगून के कैदखाने में निकल पड़ी थीं ।

बादशाह और कैद?—बड़ी बड़ी आँखें उठाकर मोहसिन ने साश्चर्य पूछा।

'हाँ बेटा फिरंगियों ने उनके ६ बेटों के सिर काट भालों की नोक पर टाग कर उनका तोहफा उनके बुढ़ापे के सामने पेश किया था। वृद्ध की आँखें भर आईं जैसे भीतर सारी नसें अब फट पड़ना चाहती हों उनमें से रक्त के स्थान पर अरमानों की भस्म निकलने को आतुर हो—

वह भस्म जिसमें जगह जगह अबुझ अङ्गारे निकल कर गि पड़ेगे और उनकी दहक से पत्थर भी पानी की तरह पिघल उठेगे।

ब च्चे स्त ध थे। उनकी आँखों में वही नफरत थी जो जुल्म और बबरता के विरुद्ध हि दुस्तान के हर ब च्चे की आँखों में पीढ़ी दर पीढ़ी इसी तरह सुलगा करेगी। मानो उ हें गुस्सा इसका नहीं कि विदेशियों न यह भी किया था वरन् क्रोध इस बात का है कि सरे बाजार बेचने वाली यह तवायफ अपन आपको पारस कहती है और चाहती है कि हम भी इसे कुबूल कर ल कि इसकी माप जोख ही इसानियत का पमाना है। कि तु नासमझ ब च्चे खामोश थे। वद्ध इमाम न ही कहा— उस वक्त बादशाह ने अपने दिल की उस आधी में से एक पैगाम दिया था—

ग़ाज़िया में बू रहेगी जब तलक इमान की
तख्ते लंदन तक चलेगी तेग़ हि दुस्तान की!

वृद्ध के होंठ काँप उठ। फिर इन्कलाब जिन्दाबाद की आवाज थहर उठी। चुनाव का जमाना था। काग्रस लीग कम्युनिस्ट और न जाने कौन-कौन सी पार्टियाँ अपना अपना जोर आजमा रही थीं क्योकि गोरी सरकार ने कहा ६ कि वह हिन्दुस्तान को आज़ाद कर देना चाहती है! वृद्ध न सुना। हसन कह उठा— इमामपाक फिर हिन्दू मुसलमान आपस में क्या लड़ते हैं? अब क्या अंगरेजा का राज नहीं है?

है क्या नहीं लेकिन लोग तो अपनी अपनी खुदगर्जिया में उलझे हुए हैं। उ हें क्या पड़ी कि गरीबों की क्या हालत है?

हसन कुछ समझ नहीं सका। उसन फिर कहा— इमामपाक बादशाह ने तो कहा था कि जब तक ग़ाज़िया में इमान की बू रहेगी ।

शाबाश! वृद्ध न कहा— लेकिन कहाँ है इमान की बू? मैं चाहता हूँ कि तुम में से हर एक में इमान की बू हो तुम में से हर एक ग़ाज़ी बन। उस दिन भी बादशाह के तख्त के लिये हि दुओं ने तलवार उठाई थी। आज से पच्चीस वर्ष पहले/एक बार फिर भाई भाई मिल

कर उठे थे तब खूनी के पाँव डगमगाने लगे थे। लेकिन बदकिस्मती से फिर फूट पड़ गई। वृद्ध का स्वर तीखा हो गया। उसने कहा—बच्चो रसूले इलाही का पैगाम सुन कर गुलाम आजाद होते थे। आज आज़ादी को पैरों से कुचल कर हम मुसलमान बनने का दावा नहीं कर सकते।

मोहसिन ने पूछा—लेकिन अब्बा तो कहते थे कि पाकिस्तान के बिना हम अंगरेजों से नहीं लड़ेंगे।

नहीं बेटा वृद्ध ने कहा—पाकिस्तान तो अंगरेजों के हाथ में गुलाम है। तुम्हारा घर तुम्हारा है पाकिस्तान की भीख माँगते हो? और वह भी एक भूखे गुलाम से? उसे कोई तुमसे नहीं छीन सकता अगर तुम आजादी के लिए खून बहाने को तैयार हो जाओ क्योंकि जो तुम्हारा है उसको अपना न समझने की बात कमजोरिए जज्बात है दिमागी गुलामी है।

मोहसिन खामोश हो गया। वृद्ध ने फिर कहा—मैं चाहता हूं तुम अभी से जुल्मों से नफरत करने लगो। तुम्हारे खून की हर बूंद में बिजली की तरह यह ख्याल दौड़ा करे कि तुम इन्सान होने के पहले गुलाम हो। तुम्हें याद रहे कि तुम्हारी कोई हस्ती नहीं क्योंकि तुम्हारा रहनुमा आज वह है जिसके सामने तुम्हारी जान की कोई कीमत नहीं। बच्चों का जैसे खून जम गया था। वृद्ध ने धीरे से बात पलट कर कहा—हाँ बेटा हसन सुनाओ तो हौले हौले जरा—पहले आती थीं ।

और हसन गालिब के अशआर सुनाने लगा।

इमाम के विद्यार्थी उसी मुहल्ले के लड़के थे जो बारह बरस तक के होने पर भी इमाम के बुढ़ापे के सामने बिल्कुल बच्चा जैसे थे। किसी का बाप बटन बेचता था किसी का जिल्दसाज़ था तो किसी का किसी कारखाने में काम करता था। सब ही गन्दे रहते और उर्दू सीखते किन्तु शिक्षा का उनके सामने कोई ठोस महत्त्व हो ऐसी गलती उन दिनों

की गोरी सरकार ने कभी उनके पक्ष में नहा की। मस्जिद के नीच ही दीवट कबाड़िए की दुकान थी। उसका छोटा-सा लड़का चंदू वहीं सब बच्चों के साथ खेला करता था।

मोहसिन चाकू से कलम बनाते बनात उससे बात कर रहा था। चदू कभी हसता कभी उछलता और कभी कभी सनी दुकान पर भा दृष्टि डाल लेता। दीवट मुहल्लों से टूटी फूटी बोतलें खरीदने गया हुआ था। मोहसिन ने कहा— अबे चंदू वह जो है हसन ? मैंन साले को दो झापड़ दिए।

चदू उस समय मोहसिन की छोटी बहन के कान पकड़कर उसे उठाकर दिल्ली दिखा रहा था और उधर अधिक त मय था। मोहसिन न उसके ध्यान न देने से चि कर कहा— क्यों बे कबाड़िए साले सुनता ही नहा। दूगा अभी एक हाथ।

चदू भला कब सुननवाला था। उसन कहा— अबे जा जा देख लिये तुझ जैसे सैकड़ों।

अबके न कहियो उल्लू के पटठे वना ।

वर्ना क्या ? चंदू अकड़ कर सामन खड़ा हो गया।

अब तो मोहसिन फस गया। आन का मामला था। उसने कहा— देख मान जा।

अबे जा चंदू न घृणा से मुख विकृत करके कहा। इसी समय मोहसिन को एक झटका सा लगा और चाकू से उगली जरा कट गइ। खून बह निकला। चोट साधारण थी किन्तु रक्त की लाली न उसे एक हमले का भयानक रूप दे दिया। दूसरे ही पल मोहसिन का चाकू उठा और च दू के अगूठे से खून टपक पड़ा ! इसके बाद यह दे वह दे और चाकू छिटक कर दूर जा गिरा और दोनों सड़क की धूल में एक दूसरे को पटखें देने लगे और दोनों ही नाली की तरफ कलामैंडियाँ खाते हुए लुढ़क चले।

इसी समय जब्बार के बड़े से हाथ ने चंदू का गला पकड़ कर उसे माहासन मे अलग कर दिया और चंदू न सुना— क्या बे साले कहाँ है तेरा बाप ? तोड़ दूगा सा ो की हड्डिया ।

क्या हुआ? कसाइ ने दुकान से ही पूछा— कौन है ?

कोई हि दू लौंडा है । —रजफ ने बीड़ी का कश बाहर छोड़ कर कहा ।

और हिन्दू शब्द सुनकर बाजार के दो एक राहगीर ठिठक गए ! एक ने आगे बढ़कर कहा— क्या है ? क्या मारते हो उसे ?

ज नार ने चन्दू का हाथ तो छोड़ दिया और अकड़ कर बोला— क्या तुम कौन होते हो उसके ? आ गए बड़े हिमायती बन के !

होश मे बोलना —राहगीर ने लाग न्स कर कहा— समझा होगा यह तुम्हारा मुहल्ला है । मगर हि दुओं का खून कोइ मर नहीं गया है समझे ।

इसी समय एक गम्भीर स्वर ने उनको रोक दिया । इमाम की दीर्घ काया बीच में थी । उसके हाथ में वही खून से भीगा हुआ चाकू था । बोला— किस लिए लड़ते हो बावलो ? उसका स्वर काँप उठा ।

ज बार ने चेत कर कहा— लौंडे का खून बहा है यह ।

किसका खून बहा है ? —इमाम का प्रश्न ग भीर आवरण सा सब के हृदया पर छा गया । उस छोटी-सी भीड़ का क लाहल थम गया और सबकी उ सुक आँखें उस पर गई । इमाम ने कहा— तड़प रहा था अभी तुम्हारा हिन्दू खून ! उबल रहा था तुम्हारा इस्लामी खून ।

जब्बार, बता सकते हो इस चाकू पर कितना खून हिन्दू है और कितना मुसलमान ?

सुनने वालों के सिर झुक गए । इमाम ने कहा—बेवकूफो जिनके पीछे लड़ते हो वे क्या कर रहे हैं देखो और जरा आँखें खोलकर देखो ।

सब ने देखा—उस समय मोहसिन की छोटी बहन अपने न हे हाथों

से कुर्त्ता उठाकर चन्दू की आँख पोंछ रही थी मानों समस्त मानवीय वेदना घुमड़ आई हो जैसे एक गुलाम ने दूसरे गुलाम की मर्यादा को अपनी संकीर्णता को ठोकर मारकर पहचान लिया हो !

भीड़ छँट चली। इमाम वहीं खड़ा रहा। जब वह लौटकर मस्जिद में पहुचा हसन को लगा जैसे वह रो पड़ेगा। कुछ देर तक नीरवता छाई रही। फिर हसन ने पतली आवाज में धीरे से कहा— इमामपाक।

वृद्ध के मुह से निकला— बेटा ! एक दिन आगरे के इसी बाजार में गोरे सौदागरों ने हिन्दुओं और मुसलमानों के गला में फन्दे लगा कर फासी पर लटकाया था लेकिन लोग शायद भूल गए हैं ।

हसन ने कहा— लेकिन हम नहीं भूलगे इमामपाक !

'तू नहीं भूलेगा ? वृद्ध ने गद्गद स्वर से कहा— तू सचमुच नहीं भूलेगा ? तब तब अल्लाह अस्सी बरस बाद आज इन्सान में ईमान की बू आ रही ! और वह रो पडा।

उस रात हसन सो नहीं सका। शहर में लोगों में एक सनसनी थी। कोई कहता था—घटिया में लूट मच जायगी कोई कहता था—शहर में शीघ्र ही भयानक दङ्गा होगा। सामने के मुन्शी जी कहते थे—उन्होंने अखबार में पढ़ा है कि जंग खत्म हो गया है मगर हर मुल्क में बलवे हो रहे हैं। सरकार की घबराहट दिन पर दिन बढ़ रही है। कुछ समझ में नहीं आता कि क्या होने वाला है। बारह-तेरह बरस का हसन अधिक कुछ नहीं समझा मगर बहादुरशाह की दोनों सतर उसके दिमाग में गुंज रही थीं। घर घर तहलका मच रहा था। राशन घटा कर रोज का दो छटांक कर दिया गया था क्योंकि सरकार ज्यादा का इन्तजाम नहीं कर सकती।

दूसरे दिन अलस्सुबह इमाम ने देखा हसन हाथ में एक कागज लिए खड़ा था। इमाम ने मुस्करा कर कहा— पढ़ो। और हसन की काँपती हुई आवाज गूंज उठी

शहीदों के खून में हुंकार उसकी गूंजती
जिसने मर कर भी न इज्जत मुल्क की कुर्बान की।
गाजियों में बू रहेगी जब तलक ईमान की
तख्ते-लंदन तक चलेगी तेग हिन्दुस्तान की।
फिर बुला हमको रहा है दूर से वह कोहेनूर
जुल्म का बदला तो क्या नोचेंगे तेरी शान भी।
हंगी तेरे देख लगे कान-से कानून हैं!
अब फरिश्ता बन रहा है देख लो शैतान भी!
भूख से हम मर रहे हैं राह के कुत्ते बने
मौत के नुस्खे बने हैं वह तेरे फरमान भी!
तख्तो ताजों की अंधेरी आज धरती से मिटे
गरजते मजदूर हम मजलूम देख किसान भी!
तेग चंगेजी न कर सकती कभी इंसाफ है
एक हैं हम टेक दे घुटने यहाँ तूफान भी।
बादलों में बिजलियाँ टूटी तड़पती जो बधीं
लरजतीं हैं मिल बगावत का बनीं उन्वान सी।
सल्तनत के धन पै हिन्दी पिट के अब फौलाद है
देख हर गोशे में जागी आबरू इंसान की!

हसन का स्वर रुक गया। वृद्ध तन्मय होकर बैठा था। उसने विस्मय से सिर उठा कर पूछा— यह तू ने कहा है हसन?

हसन के अभिमान को चोट पहुंची। उसने कहा— क्या मैं नहीं कह सकता, इमामपाक?

रदीफ और क़ाफ़िये की कुछ गलतियाँ हैं मगर वह कोई बात नहीं। लेकिन मुझे यकीन नहीं आ रहा। अल्लाह सच कहे? क्या हिन्दुस्तान के बच्चों को अब बचपन भी नसीब न होगा? क्या उनमें भी

तू ने यह आग भर दी है ? क्या यह गुलामी आज इन्सान को पत्थर बना देना चाहती है ?

वृद्ध उद्भ्रांत होकर मस्जिद में टहलने लगा। आज बिसाती के बेटे ने उस तख्त को ललकारा है जिस पर बैठने वाले का नाम सुनकर हिन्दुस्तान के बड़े-बड़े राजा व नवाब कुत्तों की तरह दुम हिलाते हैं क्योंकि उनके दिलों में ईमान नहीं रहा है—क्योंकि दौलत और ऐश का कोई ईमान नहीं है। ईमान है तो सिर्फ गुलाम का क्योंकि वह पेट का ईमान है। वृद्ध को लगा जैसे पत्थर का हर एक टुकड़ा अपनी जगह से उखड़ कर छिटक जायगा। आज जो यह लड़का अभी अभी आग उगल रहा था उस पर जैसे कानून का खूनी दरिन्दा झपट कर उसे मार डालेगा और इन्सान के खून से भीगे हुए होंठ चाट कर कहेगा— यह तहजीब और तमद्दुन की इन्तहा है। इसके आगे कोई मजहब नहीं कोई सुख नहीं।

वृद्ध कांप उठा। उसने घुटने टेक हाथ बांध कर कहा— अल्लाह मुझे माफ कर। मैंने कोई गुनाह नहीं किया मैंने राह पर दम तोड़ते हुए गिलबिले कीड़े से सिर्फ यह कहा है कि तू इन्सान है रोटी पाना तेरा अख्तियार है। जो भी तेरे मुंह से तेरी रोटी छीनता है वह जल्लाद है। उसे तू कभी भी माफ न कर क्योंकि तू उससे न सिर्फ अपने ऊपर जुल्म करता है बल्कि सांप के जहर की तरह बढ़ने वाले गुनाहों के अंधेरे को फैल जाने के लिए अपना उजाला भी समेट लेता है और वह दिन आ जाता है जब उस अंधेरे में तेरे उजाले का बेड़ा ऐसे गर्क हो जाता है जैसे दलदल में राहगीर और फिर तू घुट घुट मरने लगता है।

हसन चुपचाप सुनता रहा। वृद्ध उठ खड़ा हुआ। उसने स्नेह से आगे बढ़ कर हसन के सिर पर हाथ फेरा और कहा— बेटा शाबाश लेकिन तेरा बाप कहेगा कि इमाम ने मेरे घर के चिराग को कितने बड़े तूफान के बीच रख दिया।

हमन ने अपनी मासूम आँखों से देखा और हठात् ही उसके मुह से निकला— लेकिन मैं किसी से नहीं डरता इमामपाक।

इमाम ने सुना और मन ही मन काँप उठा।

शहर में हड़ताल थी। चारों ओर दुकान बिलकुल बंद थीं। कुछ कालेज के लड़के सिगरेटों के लिए सड़कों पर चक्कर लगा रहे थे। दुकानदार दुकान बन्द कर-कर के सड़क पर आ इकट्ठे हुए थे। मजदूरों और गरीबों की टोलियाँ इधर उधर घूमती हुई इन्कलाब जिन्दाबाद के नारे लगातीं कभी महात्मा गांधी की जय बोलतीं। उनके लिए गांधी का मतलब व्यक्ति से नहीं किन्तु अपनी आजादी के लिए लड़ने की भावना के प्रतीक से था। बच्चों के झुण्ड जगह जगह नारे लगाते हुए घूम रहे थे। राजनीतिक पार्टियों के जगह-जगह एलान हो रहे थे। आज हर कोई बाहर था क्योंकि रोटी की राजनीति थी और सबका पेट पुकार उठा था।

तीन बजते बजते लोग जुलूस के लिए इकट्ठे होने लगे हर मुहल्ले में से क्रान्ति की धारा बही और जाकर एक जगह समुद्र बनाने लगी। आज मजदूर गरीब मध्यवर्ग हिन्दू मुसलमान बच्चे बूढ़े औरत वगैरह सब ही जूलूस में एक बन कर शामिल हुए थे। वे राजनीतिक पार्टियाँ जो कल तक नहीं मिलती थीं आज उन्हें जनता के उस अपार समूह में अपने अपने झण्डे लेकर स्वयं आना पड़ा था क्योंकि भारत के प्रत्येक व्यक्ति के सामने एक ही प्रश्न था। कल जब नगर में स्वतन्त्रता दिवस मनाया गया था पार्टियों के अलग अलग जुलूस निकले थे और पुलिस ने सबको तितर बितर कर दिया था किन्तु आज रोटी-दिवस था और सब एक थे।

जुलूस के उस भीम प्रवाह ने दूर दूर तक बाजार को ढँक दिया और जब सहस्रों वज्र कण्ठों से 'इन्कलाब जिन्दाबाद' का स्वर गूँजने लगा तब पत्थर की सड़क अपना कण्ठ खोल कर मानों चौंक-सी

उठीं और दीवारा पर जा कर स्वर जैसे अंकुश मार कर उन्हें गुलामी की नींद से जगाने के लिये झकझोर उठा। घोड़ा पर बन्दूकधारी पुलीस चक्कर लगा रही थी। नाके नाके पर स्पशल आम्ड कान्स्टेबलरा का सशस्त्र पहरा था। किन्तु लोग चिल्ला रहे थे— अंगरेजी सरकार का नाश हो! निकम्मी सरकार को बदल दो! राशन को बढ़ाना होगा! आध सेर गेहू लेके रहेंगे। और पुलीस उस बढ़ते हुए बर्त्त जसे जुलूस को देख भीतर ही भीतर कांप उठी थी। किस पर करेगा जालिम अपना राज क्योंकि आज गुलाम अपने सारे भेद छोड़ कर वह माग रहे हैं जिसको न देने के लिए अत्याचारी ने धर्म की दीवार उठाई है।

इमाम अपने छोटे-छोटे विद्यार्थिया को लकर मास्जद पर खड़ा खड़ा उस विराट जन समूह को गुजरते हुए देख रहा था। एकाएक भीड़ में किसी ने आवाज लगा — अखण्ड हिन्दुस्तान! उधर से आवाज लगी— पाकिस्तान ले के रहेंगे! भीड़ में शोर मच उठा। कोइ भी संयत नहीं रह सका। मुसलमाना ने कहा— आप अपना जुलूस आगे निकालिए। हिन्दुओं ने कहा— आप अपने नारा को बदल दीजिए।

पुलिस मौका देख कर इस समय भीड़ तितर बितर करने की फिराक में थी। एकाएक सहस्रा सिर मस्जिद की ओर उठ गए। इमाम हाथ उठा कर कह रहा था— अभाग गुलामो देखा नहीं था जब थोड़ी ही देर पहले तुम सब एक हो कर जा रहे थे तब वह नादिरशाही पुलिस भीगी बिल्ली की तरह दुम दबाए खड़ी थी और अब उसके हाथ में फिर पासा आ जायगा। हिन्दू और मुसलमान होने की वजह से तुम गुलाम नहीं हो रोटी के गुलाम हो। अगर पेट के बल पर भी तुम एक नहीं हो सकते तो दुनियाँ में तुम कभी एक नहीं हो सकते—यानी कभी आजाद नहीं हो सकते। रोटी की सियासत आज तुम सबकी सियासत है। तुम वेदा और कुरआन की नई जिल्दें चढ़ाने के लिए लड़ रहे

हो या अपने अपने ? भरने के लिए ? अरे जब तक गुलाम हो तब तक एक होकर ?कार उठो भूल जाओ अपने सारे भेद भाव

हसन ने स्त ध जन-समाज पर गर्म सीसा ?ला दिया— इ क़ाब !

जन समाज चिल्ला उठा— ज़ि दाबाद ! और जुलूस ब?ने लगा। रोटी के लिए यह च?ान जैसी भीड आज हराम की टाँगे झुकने के लिए ?? रही थी। जिसकी जितनी रोटी ह उसे कोइ छी ? नहीं सकता। लेकिन जो सबकी रो?ी को छीन रहा है ?

और आवाज गूँज रही थी— जालिम ह सरकार विदेशी। इमाम ने आगे ब कर कहा— हसन ! हसन स्त ध था जैसे उसके भीतर ?न इतनी तेजी से दौड़ रहा हो कि अब बोलना भी असम्भव हो गया था। इमाम ने उसके सिर पर हाथ रख कर कहा— कसम खा कि जब ?ब यह दोना बवकूफ भाइ लड़गे तब तब त इन्हें याद दिलाएगा ?क तूफान की नाव के मुसाफिरा की पहली लड़ाइ पानी के धोखे से है।

हसन की आँखों में प्रकाश था मानो ?ीवन का जाने कौन सा न?ा अध्याय आज सामने खुलता चला जा रहा था। इमाम ने ही फिर कहा— आज जो गुलामी को मि?ाने का सब से बड़ा जंग नहीं छेड़ता वह मजहब का दुश्मन है। असली गुलामी ह कि हम सब उस जालिम क राज्य में भूखे हैं। हम उसके इसलिए दुश्मन नहीं कि उसकी चमड़ी गोरी है क्योंकि वह सैकड़ा काल कुत्ता के गलों में पटट डाल कर हम पर लड़ता रहा है बल्कि इसलिए कि उसके तख्त में हीरे नहीं हैं हमारे ?धमुँहे बच्चों की आँख निकाल कर उस पर जड़ दी गई हैं और वे हमारी तरफ घूर रही हैं हमें मला रही हैं।

रात हो गइ थी। जुलूस ऐसा निकला था जैसा आज तक आगरे में कभी नहीं निकला। पुलिस दबी-दबी सी खड़ी थी। वह जब वार करना चाहती थी उससे पहले ही इमाम ने उसे रोक दिया था। अमन की गुलामी को आज आज़ादी के एके के अमन न हरा दिया था।

हसन चुपचाप खड़ा था। मोहसिन ने उसे हिला कर कहा— इमामपाक कहाँ हैं हसन? हसन नहीं बोला। मोहसिन ने फिर कहा इमाम बुजुर्ग कहाँ हैं हसन

इसी समय इमाम ने प्रवेश किया। वह गम्भीर था। मोहसिन ने चिल्ला कर कहा— इमामपाक आप कहाँ चले गए थे?

इमाम ने भर्राए स्वर से कहा— बेटा पुलिसवाले मुझे धमकाने के लिए कोतवाली पकड़ कर ले गए थे। कहते थे मैंने कल दंगा करवा दिया होता। वह तो पुलिस थी इसलिए लोग दब गए। वे कहते थे कि मैंने मस्जिद में से बगावत का नारा लगाया था उनके बादशाह के खिलाफ। खुदा के इबादत खाने की वजह से उन्होंने मुझे नहीं पकड़ा।

हसन ने रुष्ट हो कर कहा— नहीं कहेंगे कि कल उनके होश फाख्ता थे। जालिम के घुटने कितने कमजोर हैं? उनकी दुकान का सौदा जाली सिक्कों के बल पर ही चलता है। दो आने का रुपया सोलह आने में चला कर रईस बनता है! उसके कोई खुदा नहीं उसका मजहब लूट है।

इमाम ने हर्षित हो कर कहा— क्या दे दे वह आजादी हम क्या उसके इकलौते बेटे हैं? अरे वह मर कर भी ऐसी वसीयत कर जाय इतनी भी उसमें इन्सानियत नहीं है। वह तो दरिन्दा है—खूरेज़।

हसन और मोहसिन सुन रहे थे। उनका खून तड़प रहा था और इमाम कह रहा था— क्योंकि उनमें इमान की बू नहीं बची है।

अनुवर्त्तिनी

[१]

वृद्ध कौसुभ ने उद्वेलित होकर पूछा— अरे क्या हुआ कुछ मुझे भी तो बताओ। अरे कोई कुछ बताता क्यों नहीं?

'कौन ? कौसभ भिक्षु तुम हो ? संघस्थविर ने चलते चलते रुक कर कहा— आज विजनतीरा के संघ का नाम फिर से चमक उठा है।

पास खड़े युवक भिक्षु अनागारिक ने चिल्लाकर कहा— मेधावी आनन्द भिक्षु विजयी हुए हैं। उनकी अद्भुत वाक शक्ति प्रचुर प्रमाण अकाट्य तर्क से बालनाथ की समस्त योगसिद्धि ऐसे उड़ गयी जैसे गधे के सिर से सींग।

आनन्द जीत गये ? वृद्ध ने गद्‌गद् होकर कहा— ीत गये आनन्द ! भगवान् तुम्हारा आशीर्वाद चाहिए ! संघस्थविर आर्य घ का नाम अमर है।

संघस्थविर ने कहा— आनन्द पर संघ को गर्व है भिक्षु कौसुभ ! वह मेरा शिष्य है। वह प्रकाण्ड मेधावी है। जिस समय आनन्द बोलने को खड़ा हुआ एक ओर वज्रयान के महासुखवादी सिद्ध दूसरी ओर गोरक्ष के अनुयायी यो ी बैठे थे। उन्होंने बहुत कुछ कहा। सिद्धों ने प्रज्ञा और उपाय को बखेर दिया। शून्य विज्ञान और महासुख के विवेचन से जन-सभा को मन्त्रमुग्ध कर दिया। ध्यानी बुद्धों बोधिसत्त्वों युगनद्ध स्वरूपों से उन्होंने सब कुछ एकदम सिर में उतार देना चाहा। इन पतितों में कुछ जो शैव हो गये हैं उन्होंने भी बहुत कुछ प्रमाणित करने का प्रयत्न किया किन्तु न सक्षम तन्त्र काम आया न साधना ही। वे केवल अशिक्षितों मूर्खों को परास्त कर सकते हैं। आनन्द ने जब बोलना प्रारम्भ किया एकदम नीरवता छा गयी। उसने कहा— अन्तसाधना अन्तसाधना का मार्ग बाह्य आडम्बर नहीं है। तुम शरीर को कष्ट देकर समझते हो कि आत्मा पवित्र हो रही है ? तुम गुणों के स्थान पर गुण का प्रयोग न करके क्रिया व्यापार को सूक्ष्म और स्थूल में विभाजित करने का प्रयत्न करते हो ? भिक्षु कौसुभ उस समय सभा में ऐसा कोलाहल मचा जैसे किसी ने समुद्र का मंथन कर दिया हो। आनन्द फिर भी बोलता रहा। मैंने उसे वैशाली माधव

मिश्र से भी शास्त्रार्थ करते देखा है। किन्तु नहीं भिक्षु वह कुछ भी नहीं था। आज तो ऐसा खण्डन किया उसने कि मुझे महाप्रभु के प्रथम शिष्य आनन्द की आभा उसके चारों ओर फूटती हुई दिखायी दी। मुझे आनन्द पर गर्व है आर्य संघ को कृतज्ञ होना पड़ेगा उसका। उसने आज गौतम के नाम पर कलंक नहीं आने दिया।

वृद्ध कौसुभ ने आनन्द से विह्वल होकर कहा— संघस्थविर गौतम के इन बननें वाले अनुयायियों ने कितने भयानक पाप किये हैं। आज जब कि सब जगह से प्राय हीनयान मिट गया है विजनतीरा के संघ में हम अब भी पवित्र हैं। आर्यावर्त्त को विदेशियों ने सहस्रों वर्षों से छिन्न-भिन्न कर दिया है। विभिन्न धर्म आज धर्म की ओट में अनाचार फैला रहे हैं। कहते हैं सुदूर सागर तीर पर पश्चिम में यवन विजयी होकर अब अपने धर्म का बलपूर्वक प्रचार करने लगे हैं। उत्तर से अनेक अभियान करके भी उनका बल अभी ठण्डा नहीं हुआ। राजपुत्र परस्पर युद्ध कर रहे हैं। गौतम को लोग भूलते जा रहे हैं। प्राचीनावीति कहकर जन समाज सब कुछ खोता जा रहा है। आर्य आर्यावर्त्त में लोग एक दूसरे को अब आर्य भी नहीं कहते।

संघस्थविर ने कहा— वृद्ध भिक्षु गौतम का आशीर्वाद चाहिए। सब कुछ फिर प्राप्त होगा। खोया हुआ लौट आएगा। आज जो प्रशस्त ललाट धीरे धीरे उठ रहा है उससे फिर से राजा और प्रजा बौद्ध होंगे। चक्रवर्ती सम्राटों की छत्रछाया में आर्यावर्त्त फिर बौद्धों का केन्द्र हो जाएगा। वह देखो भिक्षु आनन्द आ गया।

तभी आनन्द ने आकर प्रणाम किया। कौत्सुभ ने गद्‌गद होकर आशीर्वाद दिया— वत्स तुम्हारी सदा जय हो।

महापण्डित वृद्ध भिक्षु के रहते मुझे कोई भय नहीं — आनन्द ने नम्र होकर कहा।

संघस्थविर मुस्करा दिये।

[२]

उन दिनों आर्यावर्त्त की शक्ति विभिन्न सामन्तों के हाथ में खंड खंड होकर उच्छृङ्खल हो उठी थी। पश्चिम के कुछ साधु आकर अपने अनोखे उपदेश देते फिरते थे। नित्य ही गोरख-पंथी और भैरवी साधुओं का उनसे समागम होता और वे साथ बैठकर खाते साथ ही मदिरा पीते समझ न आने वाली बातें कहते और प्रजा उनसे भयभीत होकर बात-बात में उनके सामने सिर झुका देती। देश में तीन ही वर्ग प्रधान थे। एक प्रजा दूसरा राजवंशीय समुदाय तीसरे यह साधु जो व्यक्तिगत महानिर्वाण की खोज में पागल हो रहे थे। भैरवी चक्रों और हठयोगियों की समाधियों को लोग सुनते और श्रद्धा करते थे। दुर्दमनीय गिरि कन्दराओं में युवक बैठकर बलि देते उनकी धूनी की लपटें आकाश को चूमने लगती और उस उन्माद में वे स्त्रियों की योनि पूजा करते। दर्शन और अभ्यास के इस अन्धकार भूत वितण्डावाद में आर्य संस्कृति की जड़ हिल रही थी। दक्षिण में उस प्रबल शक्ति से दिग्विजयी शङ्कर का गम्भीर गर्जन उठा था कि बौद्ध धर्म लड़खड़ा गया था। यवनों के आक्रमण की दिन पर दिन आशङ्का बढ़ती जा रही थी। अपार धनराशि लिये बौद्धों के संघाराम नगर के बाहर भविष्य की काली छाया में काँपते हुए अब भी कनिष्क और अशोक के भग्न स्तूपों में तथागत का नाम मात्र दुहरा लेते थे।

विजनतीरा नदी के किनारे ऊँघता हुआ वह संघ सन्ध्या की डूबती छायाओं में रङ्ग बिरङ्गा बहुत ही मनोहर सा दीख रहा था। बाहर ही विशाल फाटक पर प्रस्तर की मूर्त्तियाँ समय को देख स्तब्ध हो गयी थीं मानों उन्होंने उसे निर्भय होकर काट दिया था। अधेड़ आयु के संघ स्थविर वृद्ध भिक्षु बाहर खड़े कुछ सोच रहे थे। उनके पास ही आनन्द भिक्षु खड़ा था।

बात में उसकी कुछ सार अवश्य है आनन्द—कहते हुए बुद्ध भिक्षु ने आनन्द की ओर देखा।

आप सोच सकते हैं ऐसा आर्य मुझे तो कुछ समझ नहीं पड़ता। वज्रयान की यह अद्भुत पिपासा मुझे कभी सन्तुष्ट नहीं कर सकी। शून्य को विभान्य रूप देने के क्या हम अन्तरात्मा को धोखा नहीं देते?—आनन्द ने आकाश की ओर देखते हुए कहा। संघस्थविर मौन रहे। आनन्द ने फिर कहा—देव प्रच्छन्न बौद्ध के मिथ्या प्रचार से अनेक ब्राह्मणों को नये नये उपाय सूझने लगे हैं। नगर में एक यवन आया है जो अनेक उल्टी सीधी बात कहता फिरता है। वह तो सिद्धों से भी बढ़ गया है। मैं कुछ नहीं समझ पाता।

उसकी उत्तेजना देखकर संघस्थविर हँस दिये। उन्होंने कहा—आनन्द तुम अभी युवक हो।

आनन्द बिल्कुल नहीं समझा। उसके सोने के से चमकते रङ्ग पर काषाय का वर्ण प्रफुल्लित हो रहा था। कठोर संयम से उसका मुख दमदमाता था जिस पर सौम्य क्षमा का आर्य मौन उसे बहुत ही मनोहर बना देता था। एकाएक उसने एक सुन्दरी युवती को अपनी ओर आते देखा। आनन्द ने कहा—देव कोई स्त्री यहाँ आ रही है।

संघस्थविर ने देखा। स्त्री ने आकर प्रणाम किया।

संघस्थविर ने पूछा—शुभे तुम कौन हो? यहाँ किसलिए आई हो?

दीक्षा लेने आयी हूँ प्रभु। मैं विधवा हूँ—स्त्री ने उत्तर दिया।

गौतम के संघ में स्त्रियों की गणना अधिक होती जा रही है आर्ये! तुम भिक्षुणी होकर क्या करोगी?

मैं अपने वैधव्य का अन्धकार संयम के महाप्रभात में हीरे की तरह चमकता हुआ देखना चाहती हूँ प्रभु।

नारी ! —संघस्थविर के नयनों में एक कठोरता छा गयी— तुम मण्डित केश अलंकारावहीन कर दी जाओगी।

शिरोधाय

संघस्थविर ने आनन्द की ओर देखा। आनन्द का कुदन सा मुख गभीर था। वह स्त्री की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देख रहा था। स्त्री का प्रस्फुटित यौवन मचल रहा था जैसे नदी उफन कर बह जाना चाहती थी। उसके नीले दुकूल पर वह सफद कंचुक कालिंदी पर कांपते कमलों की भांति था जिसे छू छूकर समीरण अङ्गड़ाइ भर रहा था। स्त्री ने आनन्द को देखकर सिर झुका लिया।

संघस्थविर ने कहा— वत्स आनन्द भिक्षु कौत्सुभ के पास ले जाकर इसे दीक्षा दो।

आनन्द ने आज्ञा को सिर झुकाकर स्वीकार कर लिया। स्त्री उसके पीछे पीछे चलने लगी। आनन्द ने मुड़कर पूछा— आर्यें तुहारा नाम ?

स्त्री ने कहा— देव मेरा नाम नन्दिनी है।

कसकी पुत्री हो ?

मेरे पिता स्वग चले गये। मेरा पालन मेरी माता ने ही किया है। किंतु जब वे भी चल नसीं संसार में मेरा कोई भी सहारा नहीं रहा तब मं गौतम की शरण में आयी हू।

भिक्षु की उ सुकता बन्ती जा रही थी। उसने फिर पूछा— आर्यें क्या तुम्हारे पति के सम्बन्धियों ने भी तम्हें सघ में स मलित होने की स्वीकृति दे दी है ?

स्त्री ने उत्तर दिया— आर्य नंदिनी ने अपने पति का मुख भी नहीं देखा। जब वह छोटी थी तभी उसका विवाह एक दस वर्ष के बालक के साथ कर दिया गया था। माता तब पाटलिपुत्र में थी। एक दिन श्रेष्ठि सुदत्त के घर से लौटते समय सुना कि मेरे पति के घर कुछ दस्युओं ने आक्रमण किया और तभी मेरे पति चले गये। कहते हैं उस

दस वर्ष के बालक की वहीं क्षया कर दी गयी। माँ ने तभी से मुझे विधवा कहा है। उच्च कल की मर्यादा पालने का मैंने अपनी माता को उसकी मृत्यु शैया पर हाथ रखकर वचन दिया है।

आनन्दभिक्षु विचार मग्न हो गया। जैसे उसका हृदय किसी घोर चिन्ता में डूब गया। जब दोनों भग्न स्तूप के पार सरोवर के तीर पर पहुचे उन्होंने देखा नेत्रहीन वृद्ध कौ सुभ कछु गा रहा था। आनन्द ने सुना वह अश्वघोष के बुद्ध गृह त्याग के महावैराग्य के गीत गा रहा था। उसका हृदय एकदम शान्त हो गया।

उसने प्रणाम करके कहा— आर्य घस्थ वर ने देवी नन्दिनी को प्रव्रज्या ग्रहण करने को आपके पास भेजा है।

वृद्ध ने कहा— कौन ? न दनी ? शुभे मरे पास आओ।

वृद्ध ने स्नेह से कहा— यह केश नहीं रहेंगे यह अलंकार नहीं रहेंगे। न चदन लगा सकोगी न अङ्गराग न आलत्तक न कानों में कसुम रख सकोगी न

नन्दिनी ने काँपते स्वर में कहा— भिक्षु मैं तो अब भी यह सब नहीं कर सकती। मैं विधवा हू।

कि तु मन वश में रख सकेगी ?

प्रयत्न करूँगी भगवन् !

वृद्ध हसा। उसने कहा— आर्य गौतम ने कहा था कि स्त्रियाँ सघ में आकर संघ की आयु घटा रही हैं किन्तु जो भगवान् बुद्ध नहीं रोक सके वह मैं अ धा आँखों से ही नहीं मन से भी कैसे रोक सकता हू ? आओ मैं तु हें प्रव्रज्या ग्रहण कराऊँगा। आज तुम अनुवर्त्तिनी हो। बुद्धं शरणं सघं शरणं गच्छामि !

नन्दिनी ने नम्रता से शीश नत्र कर लिया। आन द चुपचाप देखता रहा। स ध्या के धूमिल वसन गहरे हो चुके थे।

[३]

आकाश में नारङ्गी उजाला फलने लगा। उन्मत्त समीरण नन्दिनी के मुख पर बज उठा। उसने अपने काषाय को हाथ से थाम लिया। अन्धे भिक्षु कौस्तुभ की पुकार गूज उठी— अनुवर्त्तिनी!

आयी बाबा —कहते हुए नन्दिनी ने पास जाकर उसकी लाठी को थाम लिया।

भिक्षु ने कहा— अनुवर्त्तिनी सङ्घ का वातावरण तुझ कैसा लगता है बेटी?

अनुवर्त्तिनी ने कहा— देव मेरा हृदय शात है मरी भावनाए स्थिर ह और मेरा चित्त अकलुप है।

वृद्ध ने प्रसन्न होकर कहा – भगवान् बुद्ध तेरी रक्षा करे!

अनुवर्त्तिनी उसके पास से चल पड़ी। स्तूप के पीछे भूमि पर कुछ लकीर खींचकर आनन्द भिक्षु गणना कर रहा था। उसके विशाल मस्तक पर चिन्ता की हल्की लहर सिकता पर मानो अपनी पद रेखा छोड़ गयी थी। अनुवर्त्तिनी उसे देखकर रुक गयी। आनन्द अपने आप कह उठा— यदि गणना सत्य है तो सघ का ध्वंस अब दूर नहीं है। नालन्द का जो भी ज्ञान अब तक सुरक्षित रह सका है उसका अन्त होने में विलम्ब नहीं रहा।

अनुवर्त्तिनी ने आगे बढ़कर कहा— आर्य सघ का ध्वंस! क्या कह रहे हैं आप?

'मैं झूठ नहीं कहता अनुवर्त्तिनी —भिक्षु आनन्द ने अपने दीप्त मुख को उसकी ओर मोड़कर कहा गणना नागार्जुन की विद्या कभी मिथ्या नहीं हो सकती।

'गणना! —अनुवर्त्तिनी ने शङ्कित स्वर में पूछा आप मेरा भविष्य बता सकेंगे?

आनन्द भिक्षु ने उसे बैठने का संकेत करके कहा— अपना बाँया हाथ दिखाओ।

नन्दिनी बाँया हाथ फैलाकर बैठ गयी। एकाएक हाथ पर से दृष्टि उठा कर उसके मुख पर गड़ाते हुए आनन्द ने कहा— आर्ये तुम तो विधवा नहीं हो। फिर यह कैसा छल?

नन्दिनी काँप उठी। उसने करुण स्वर में कहा— आर्य्य उपहास भी तो इतना निर्दय!

आनन्दभिक्षु ने गंभीर स्वर में कहा— आर्ये भिक्षु आनन्द स्त्री तो क्या पुरुष से भी उपहास नहीं करता। वह अनेक मेधावियों को दिन में दीपक जलाकर परास्त कर चुका है। किन्तु तम विधवा नहीं हो। मैं गौतम की शपथ खाकर कहता हू कि यदि गणना सत्य है सामुद्रिक शास्त्र सत्य है तो तुम विधवा नहीं हो।

नन्दिनी कुछ भी नहीं सोच सकी। वह उठकर खड़ी हो गयी। एक बार उसने आकाश की ओर शून्य दृष्टि से देखा। आनन्द भिक्षु ने देखा जैसे नीले आकाश में नवीन शतदलों की स्थिर निर्वात सृष्टि सी हो गयी। नन्दिनी चिन्तामग्न चल पड़ी।

संघस्थविर ध्यान में मग्न बैठे थे। उनका पका हुआ शरीर ताम्र वर्ण का हो गया था। नन्दिनी सामने जाकर श्रद्धा से शीश नतकर बैठ रही। जब संघस्थविर बुद्ध भिक्षु के नयन खुले उन्होंने देखा नन्दिनी सम्मुख ही प्रणाम कर रही थी। संघस्थविर देर तक देखते रहे। आज उनके हृदय में कामनाओं के वृक्ष के न जाने कहाँ से पत्त निकल कर खड़खड़ा उठे। उन्होंने मन ही मन त्रिपटक का स्मरण किया। नन्दनी ने कहा— आर्य चित्त का विकार दूर करने का संयम इतना दुख क्यों देता है जब उसका परिणाम केवल पवित्र शान्ति और सुख है?"

संघस्थविर ने कहा— वत्से संघर्ष से जन्म होता है। मनुष्य उसे करवट बदलकर ही नींद में पूरा विश्राम पाता है और वह करवट उसे

एक भ्रम सा प्रतीत होता है इसी प्रकार दुख हमें केवल दिखायी देता है। इस दुख की निवृत्ति ही मन की वास्तविक शान्ति है।

नन्दिनी ने फिर कहा— देव मनुष्य के जीवन की चरम सात्विक वृत्ति क्या है?

संघस्थविर ने विचलित स्वर को दबाते हुए कहा— सम्यक् ज्ञान का सम्यक् क्रिया से स यक मिलन कराना ही जीवन को सुचारू पथ पर अग्रसर करना है।

नन्दिनी उठ गयी। सघस्थविर ने फिर ध्यान लगाने का प्रयन्न किया कि तु वे असफल रहे। उन्होंने एक बार चारा ओर देखा और फिर काँप उठे। दूर नन्दिनी सिर झुकाये चली जा रही थी।

[४]

सन्ध्या के धूमिल अ धकार में चैत्यों पर दीपक जलने लगे। तथागत की विराट सौम्य मूर्ति के स मुख अनेक दीपाधारों में आलोक पुजीभूत होकर जगमगा उठा। अगरुधूम की काँपती लहरें स्नायवित कम्पन में झूमने लगीं घण्टे और शङ्ख बजने लगे।

संघराम के एक प्रकोष्ठ में संघस्थविर बुद्धभिक्षु बैठे कुछ यान कर रहे थे। धुधला दीपक जैसे सिर उठाकर अ धकार को देख-देखकर सिहर उठता था। एक ओर तालपत्र पर लिखी पुस्तक रखी थीं। बुद्धभिक्षु का हृदय आज कुछ अस्थिर था। कई बार प्रयत्न करने पर भी वह ध्यान नहीं लगा सके। उ होंने देखा दूर उपासिकाएं चली जा रही थीं। वे गौर से देखने लग। अन्त में उन्होंने देखा प्रशान्त गम्भीर नन्दिनी धीरे धीरे चल रही थी। भिक्षुणी होकर भी उसकी चाल की मादकता कम नहीं हुई थी क्योंकि यौवन के दो दुर्ग अपने वैभव के उफान में मंथर आवाहन में झूम उठते थे। उसके मासल शरीर से प्रभा फूट रही थी। एक क्षण के लिए संघस्थविर के हृदय में एक चौंधियाती ज्वाला सुलग उठी।

उन्होंने उठकर बाहर बैठे भिक्षु को बुलाकर कहा— जाओ भिक्षु आनन्द को बुला लाओ।

भिक्षु चला गया। संघस्थविर व्याकुल से घूमने लगे। उनकी छाया दीवारों पर काँपने लगी। थोड़ी देर बाद भिक्षु आनन्द ने आकर प्रणाम किया।

संघस्थविर ने बिना उत्तर दिये पुकारा— आनन्द!

देव! —आनन्द ने नम्र स्वर में कहा।

संघस्थविर शान्त हो गये उन्होंने कहा— वत्स आर्यसंघ को नित्य चुनौतियाँ दी जा रही हैं। तक्षशिला से खबर आयी है कि अनेक भिक्षुओं ने चीवर त्याग दिया। वे लोग अपनी प्रसन्नता से स्मात शैव हो गये हैं। ऐसे समय में हमें क्या करना चाहिए? संघ को किसी प्रकार बचाना होगा। भगवान गौतम के अनुयायी आज अपने अन्त करण के सम्मुख भयानक से भयानक पाप करते नहीं हिचकते।

भिक्षु आनन्द ने देखा संघस्थविर व्याकुल हो उठे थे। उसने कहा— आर्य्य मैं दस वर्ष की आयु से ही माता पिता से ही छीन लिया गया था। मुझे नहीं मालूम मेरे माता पिता हैं या नहीं। श्रेष्ठि धनदत्त ने मुझे गोद लिया था। तब से मैं संघ के लिए दान कर दिया गया हू। आज मुझे सघ में रहते हुए चौदह वर्ष बीत गये हैं। मैंने विद्याओं का मन्थन किया है। आपने अपने हाथ से मुझे ज्ञान का नवनीत खिलाया है। आज तक आपने बड़े बड़े वैष्णव शैव अथवा विभिन्न धर्मों से हसते हुए मुझे शास्त्रार्थ करने भेजा था। आपके विश्वास का प्रबल श्वास ही मेरे प्रतिद्वन्द्वी की टिमटिमाती दीपशिखा को बुझा देता था और दीपक की निर्जीव धूमराशि को उठते देखकर सब हँस देते थे। आर्य्यसंघ के प्रबल चालक यदि शत्रु को देख भय से काँप उठेंगे तो आर्यावर्त में वह आग लगेगी कि गौतम का प्रत्येक अनुयायी प्रत्येक मठ भस्म में मिल जायगा। क्षमा करें देव मैंने विजनतीरा के प्रबुद्ध

सघाराम के महायशस्वी आयु से अधिक ज्ञानी प्रकाड मेधावी सौम्य स यवादी सयमी सघस्थविर बुद्धभिक्षु को कभी भी चलती हवा में काँपते पत्त की तरह नहीं देखा था।

भिक्षु ! संघस्थविर चीख उठे। किन्तु आनन्द कहता गया भिक्षु के तन का ध्वंस एक प्राकृतिक नियम है कि तु मन का वंस एक अनाचार है मार के अंधकार की विजय है।

सघस्थविर ने कुछ नहीं कहा। वह बाहर देखने लगे। उपासिकाए लौट रही थीं। संघस्थविर की दृष्टि कहीं अटक गयी। आनन्द ने देखा—वह अनवर्त्तिनी थी। न दिनी ने एक बार भगवान् बुद्ध की महान् मूर्त्ति को सिर झुकाकर प्रणाम किया और फिर उपासिकाओं में मिल गयी जैसे अगरुधूम की लहर आपस में घुल मिल जाती हैं।

आनन्द मन ही मन उन्मत्त सा हिल उठा। आज उसके मस्तिष्क में एक नया प्रहार हो रहा था। नन्दिनी ! भिक्षु के सयम का सारा ममत्व क्षण भर उपेक्षा की ठोकर से निर्जीव सा पीछे हट गया। चौबीस बरस का वह रुका हुआ यौवन थपेड़े मारकर अंतस्तल के किसी कोने में पुकार उठा। सघस्थविर की व्याकुल दृष्टि में वह तृष्णा देखकर आनन्द का मन विक्षु ध हो उठा।

उसने कहा— आर्य्य !

संघस्थविर ने धीरे से कहा— वत्स !

आन ने धीरे से कहा— भगवन् ! आपका हृदय

संघस्थविर एकाएक मुड़कर खड़े हो गये। उ होंने आन द को कठोरता से देखा। किंतु आन द ने बिना हिचकिचाये कहा— देव प्रलोभन ही प्रकाश का क्षय है।

तुम मुझे शिक्षा दे रहे हो बालक ? सघस्थविर ने चौंककर कहा।

। प्रभु मैं बालक हूँ। आन द ने झुककर कहा।

सघस्थविर क्षण भर मौन रहे। फिर उ होंने ही कहा— आन द

तुम जाओ। मुझे सोचने दो। संघ की रक्षा करनी होगी। शत्रु बढ़ते आ रहे हैं।

आनन्द ने कहा— आर्य्य मनुष्य अपने भीतर के शत्रु से सबसे अधिक भय खाता है क्योंकि पतवार टूट जाने पर कोई नाव जल को नहीं काट सकती वह केवल लहरों की दया पर झटके खाती है।

और वह उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही तेजी से बाहर चला गया। संघस्थविर उद्भ्रांत से मोहाकुल से जड़ीभूत बैठे शून्य दृष्टि से आकाश की ओर देखते रहे। द्वार में से नीला अंधकार उस पर तारे सब काँप रहे थे। संघस्थविर ने विचलित होकर आँखों को बन्द कर लिया।

[५]

मेघों का गम्भीर गर्जन रात्रि की सनसनाती निस्तब्धता में व्याप गया और देर तक संघाराम गूंजता रहा। संघस्थविर व्याकुल-से प्रकोष्ठ में टहलने लगे। दीपक हवा से बुझ गया। उन्हें कुछ भी ज्ञात न हुआ।

मन ने कहा—बुद्धभिक्षु तुमको क्या हुआ? तुम जीवन के आदर्श को इतना नीचे गिरा गये? मैं समझता था अनुवत्तिनी के मोह जाल में साधारण भिक्षु कुरंग की तरह हतचेत होकर फँस जायगा किंतु भदन्त बुद्धभिक्षु?

किन्तु तभी कोई कह उठा—कमल को पाने के लिए कीचड़ में पाँव देना क्या कोई पाप है?

संघस्थविर बैठ गये। लोभ गम्भीर भाव से हँसने लगा।

संघस्थविर फिसला है किन्तु यह सँभलेगा भी क्योंकि गौतम का आशीर्वाद यही पुकार रहा है। किन्तु रोग तो साधारण नहीं है। मृत्यु ही एकमात्र उपाय है।

संघस्थविर मुस्करा उठे।

और जो यह समझते हैं कि आकर्षण पाप है वह अपने आपको धोखा देते हैं। लेकिन मैं नन्दिनी से प्रेम कर सकता हूं? संघस्थविर ज़ोर से कह उठे। स्वर वर्षा की ध्वनि में गिड़गिड़ाने लगा। वह और उत्तेजित होकर कह उठे—मनुष्य करने को क्या नहीं कर सकता? क्या नन्दिनी मेरी नहीं हो सकती? हो सकती है हो सकती है!

पाप की विकराल छाया समस्त नदी पर छाकर बाद ले आयी और संघस्थविर उन्माद में भर कर प्रकृति की अभिसार-लीला में अट्टहास कर उठे। प्रकोष्ठ का अङ्ग प्रत्यङ्ग गूँज उठा और प्रतिध्वनि करता अन्धकार भी हँसने लगा अट्टहास करने लगा। कुछ देर को वह सब कुछ भूल गये। उन्होंने मौन होकर सुना स्वर अब भी गूज रहा था। उनकी आँखों के सामने से नन्दिनी का रूप चमक उठा। वे विशाल नयन जिनके कोनों में लाजभरी अंगड़ाई लेती ललाई मांसल कमलों सी पँखुड़ी खोलकर अलोक फैला देती थीं उन्हें अंधकार में मानों देखने लगे। वह मादक विह्वल अङ्गस्पर्श का सुख उन्हें विष से भर गया। बिजली कौंध उठी।

किन्तु संघस्थविर ने कहा—बुद्धभिक्षु ने भी कभी प्रेम किया था? काषाय में वैराग्य है प्रेम नहीं। प्रेम है किन्तु सूर्य के प्रकाश-सा। ऐसी अनुवर्त्तिनी के स्थान करोड़ों अनुवर्त्तियों को अपनाने का पथ प्रदर्शित करने का भार उन पर आर्यसंघ ने डाला है।

संघस्थविर फिर हंस पड़े।

मैं अपने को धोखा दे रहा हूं। चाहे मोह चाहे वासना चाहे पाप अथवा कुछ भी हो बुद्धभिक्षु एक नारी के मांसल पयोधरों को देखकर व्याकुल हो उठा है। इस नश्वर अणुमाण्ड की एक मनोहर स्वर्गिक कल्पना!

संघस्थविर फिर उद्भ्रान्त से घूमनेलगे। उन्होंने कहा—कब तक अपने को बहलाओगे भिक्षु? तुम नन्दिनी के मोह में फस गये हो किंतु

तु हारा दम्भ तुम्हें भीतर ही भीतर खा रहा है। सत्य सत्य ही है और यदि सत्य को झुठाया जा सकता है तब भी सत्य का एक रूप दूसरे रूप से ढका नहीं जा सकता। संघस्थविर चुप हो गये। उन्होंने चारों ओर दृष्टि घुमाकर देखा। अंधकार ठण्ड से सिसक रहा था। बिन साँस लिये नभ से जलधर अविराम मूसलाधार वर्षा कर रहे थे। पृथ्वी पर से छींट उछल रही थीं। कभी कभी बिजली चमक जाती थी। प्रकोष्ठ में भी सीलन थी। ठडी हवा के झोंके भीतर घुस घुस आते थे। उनमें एक चिपकनीपन था।

एकाएक वासना ने अवगुण्ठन खींचकर कहा—नन्दिनी का सौन्दर्य बुद्धभिक्षु को प्रिय नहीं उसका वह मादक यौवन प्रिय नहीं। उसे चाहिए केवल नन्दिनी।

पुराने संयम ने मुह फेरकर पूछा—तब किसलिए भिक्षु?

क्योंकि मन उसे चाहता है।

और किसी उपासिका को नहीं चाहता? नारी के प्रति लोभ? आलिङ्गन की मादक तृष्णा पल भर शरीर से शरीर सटाकर ऊष्मा में झूम जाना त्याग के शव पर चुम्बन करना यही सब तुम्हारी प्यास है भदन्त बुद्धभिक्षु? माता के गर्भ से जन्म लिया था अनजाने। विद्या पढ़ी विवाह किया। अनिंद्य सुन्दरी पत्नी के स्वर्गवास होने पर शारीरिक विश्व की मोहजडित नश्वरता देखकर तुम यौवन में अपने आप भिक्षु बने थे। उसके बाद आज तक तुम स्त्री को भूल रहे हो। फिर आज इतने वर्ष बाद यह आग क्यों धधक उठी जिसके कसैले धूम्र से संघ घुटकर मर जायगा? आज तुम में यह प्यास क्यों जाग उठी?

संघस्थविर ने देखा। सामने मार खड़ा था। पीछे गौतम का हाथ अभय दे रहा था।

बिजली कड़कने लगी। विष अमृत बनकर कण्ठ में उतर गया।

प्रकाश सो रहा था हलचल सो रही थी। संघस्थविर पकार उठे— बुद्धं शरण धर्मं शरणं संघं शरणं गच्छामि ।

अ धकार निर्मल हो गया। पाप की भीपण प्राचीर ढह गयी। सघ थविर चौंक उठे। यह वह क्या सोच रहे थे? क्या कहते समस्त आर्यसंघ के भिक्षु कि बुद्धभिक्षु एक नारी के अङ्क में फँस जाने के लिए सब कुछ भूल गया जैसे की ा अंधकार में घुस जाती है। यह वह क्या कर रहे थे? इस वृद्धावस्था में यह किस न म का पाप अन्चेतन बनकर उन्ह पतन के महाखड्ड म लिये जा रहा था?

वे उठे और बुद्ध के मन्दिर की ओर चले। पानी में उनका शरीर बिल्कुल भीग गया। उन्होंने प्रतिमा के चरणा पर सिर टेक दिया और कहने लगे भगवान् मेरे पाप के कारण संघ पर कोई दोष नहीं आये। मैंने अनजाने ही यह पाप किया है। आपके आशीर्वाद से मैंने वृद्धावस्था को महाकलङ्क से बचा लिया है भगवान्! एक दिन आपने यौवन में मारको पराजत किया था आज उसी शक्ति उसी सय म का वरदान मुझे भी दा निर्विकार !

सघस्थविर रो उठे जैसे आज उनका हृदय पाषाणों को भेदकर बाहर आ जाने के लिए घोर सघर्ष कर रहा था।

आकाश में बादल गरजते रहे। सङ्घाराम निस्त ध सा सो रहा था। हवा के तेज़ झोकों में पानी छहर जाता था और अंधकार में तड़पने लगता था।

[६]

प्रभात की शीतल बेला में बादल फटने लगे और नीला आकाश बीच में से झाँकने लगा जैसे आज प्रकृति की उदासीनता को बढ़ाने के लिए ही भोर ने वस्त्र धारण किये थे। शीतल वायु बलहीन-सी चल रही थी। दूर क्षितिज पर प्रकाश फूट रहा था।

अंधा भिक्षु कौस्तुभ चैत्य में से निकल कर पुकार उठा– नन्दिनी!

नि य की भाँ त उसे आ। दूर ही से उत्तर नहीं मिला। न दिनी ने धीरे से पास आकर कहा— बाबा ?

हाँ वत्से ! स्नेह से अधा वृद्ध उसके सिर को छूने के लिए टटोलने लगा। अनुवर्त्तिनी झुक गयी। कोई कुछ न बोला। वृद्ध ने ही कहा— अनुवर्त्तिनी मुझे तड़ाग तक ले चलोगी ?

क्या नहा ले चलूँगी ? खिन्नता से नन्दिनी ने उत्तर दिया।

अनुवर्त्तिनी आज कुछ अपने को भूली-सी थी। आज उसके हृदय में अज्ञात आशङ्का हो रही थी। होंठ जुड़े थे आँखों में उदासी झाँक रही थी।

वृद्ध बोला— अनुवर्त्तिनी ?

भिक्षु ! अनुवर्त्तिनी ने कहा।

तू आज उदास सी लगती है मुझे। क्या आज सूर्य नि य की भाँति पूर्व से नहीं उग रहा ? नि य तो इतनी बात करती थी कि मैं सुनते सुनते थककर तुझे चुप करने का पथ खोजता था और आज तू बिल्कुल मौन है। इसका कारण क्या है ?

कुछ तो नहीं। क्या प्रत्येक वस्तु का कारण होना आवश्यक है ? अनुवर्त्तिनी ने कहा।

प्रत्येक क्रिया के परिणाम का मूल हेतु कारण ही है नन्दिनी। अनेक कारणों से अनेक कार्य होना अथवा इसके विपरीत भी सापेक्ष ससर्ग का ही आवश्यकीय रूप है।

क्या होगा कहकर भी ? अनुवर्त्तिनी दबीहुई सी कह उठी।

कहो न ? वृद्ध ने आग्रह किया।

बाबा ! आनन्द भिक्षु ने कहा था कि संघ के ध्वंस के दिन निकट आ रहे हैं।

यदि आ ही रहे हैं तो कौन रोक सकता है पगली ? भविष्य तो अपने हाथों में नहीं है।’

और मुझे योतिषी के मुख पर एक भय की रेखा दिखायी दी थी।

किसके ? भय ? क्या ? वृद्ध चौंक कर कई प्रश्न एक साथ पूछ बैठा।

शांति से नन्दिनी ने कहा— आनन्द भिक्षु ने मुझे बताया था और कहा था अदृष्ट यही कहता है।

किससे ? वृद्ध ने फिर पूछा।

यह तो उन्होंने नहीं बताया। अनभिज्ञ नन्दिनी ने उत्तर दिया। वृद्ध चुप हो गया मानों किसी गहरी चिंता में था। उसका ऐसा भाव देख कर अनुवर्त्तिनी बोल उठी— तुम ऐसे चुप क्यों हो गये ?

मेरा हृदय किसी अज्ञात प्रेरणा से दहल रहा है। वृद्ध ने अपनी सफ़ेद पुतली घुमाते हुए कहा। अनुवर्त्तिनी उस स्थान की निर्जनता तथा वीभत्सता देखकर भयभीत हो गयी। उसने वृद्ध का हाथ पकड़कर कहा— चलो यहाँ से मुझे डर लगता है।

डर की क्या बात है ? सत्य और शांति हमारे साथ हैं। गौतम का वरदहस्त हमारे शीश पर है। मार अपना कुछ नहीं कर सकता। तुम्हारे हृदय में कोई मोह तो नहीं है ? वृद्ध बात करते करते सहसा पूछ बैठा।

हाँ है अनुवर्त्तिनी झपती हुई बोली।

'क्या है ? वृद्ध ने अविचल भाव से पूछा।

भिक्षु आनन्द ने कहा था कि मैं विधवा नहीं हू। तभी से मेरे हृदय में एक तृष्णा एक स्वप्न की मादक छलना-सी जाग उठी है।

अनुवर्त्तिनी ! वृद्ध ने गम्भीर होकर कहा— तुमने मेरा उपदेश नहीं माना। तुम निर्मम नहीं हुई।

अनुवर्त्तिनी चौंक पड़ी। यह वह क्या प्रकट कर गयी ! उससे कुछ भी नहीं बोला गया। वृद्ध ने फिर कहा— अनुवर्त्तिनी गौतम को साक्षी करके कहो कि तुम उस कल्पित मनुष्य की मृग मरीचिका में

नहीं भटकोगी। आनन्द भिक्षु की गणना मिथ्या नहीं हो सकती किंतु क्या तुम वैधव्य के बल पर भिक्षुणी हो? क्या पति प्राप्त होने पर तुम लौट जाओगी? गौतम को समापत होकर तुम एक साधारण मनुष्य के पीछे भागोगी। कहो अनुवर्त्तिनी तुम इस चाञ्चल्य का प्रायश्चित करोगी?

करूंगी भिक्षु! मन्त्रमुग्ध अनुवर्त्तिनी ने उत्तर दिया। वह लाज से गड़ी जा रही थी।

अनुवर्त्तिनी आज मैं तुम्हें एक बात बताऊं सुनोगी? वृद्ध ने पूछा।

कहो न? नन्दिनी नम्र होकर बोली।

अनुवर्त्तिनी वृद्ध बोलने लगा तुमने संघ में एक हलचल मचा दी है। सघ का प्राण मानों माया में लिप्त हो चुका है। तथापि तुम भी फिसली हो? फिर आर्य्यसंघ के मान की रक्षा क्या यह अंधा करेगा?

वृद्ध अधिकाधिक चिन्तामग्न और गम्भीर होता जा रहा था। वह कहता गया— मानव के लिए राष्ट्र बदलेगा। अनुवर्त्तिनी यह मेरी भविष्यवाणी है। तुमको अपना स्वार्थ त्यागना पड़ेगा। तुम्हारा सुहाग कुछ नहीं। तुम्हारे लिए पुरुष कुछ क्षण के लिए एक घिनौना भेड़िया है। तुम उस पर से अपनी आसक्ति हटा लो। तुम महोल्लास के नीचे काषाय ग्रहण कर चुकी हो। फिर तुममें यह अहंकार क्यों? तुममें यह मादकता कैसे बची रह गई? तुम गौतम की पवित्र अनुवर्त्तिनी आज एक साधारण पुरुष की अनुवर्त्तिनी होने जा रही हो? क्या यह संघ के लिए लज्जा जनक बात नहीं? क्या तुम अपने को सत् चिंतन सत् कर्म्म करनेवाला समझती हो? अनुवर्त्तिनी फिर कहो कि तुम चञ्चल नहीं हो। तुम भिक्षुणी हो। तुम्हें गौतम के आठों उपदेश जीवन में पालन करने के लिए याद हैं। तुम गिरतों को उबारोगी। तुम गौतम पर पूरा पूरा विश्वास रखोगी और तुम्हें अपनी प्रतिज्ञा का पूरा-पूरा ध्यान रहेगा।

वृद्ध चुप हो गया। हवा में वृक्षों के पत्ते खड़खड़ा उठे। अनुवर्त्तिनी अपराधिनी की भाँति देखती रही। वह कुछ भी बोलने का साहस न कर सकी। वृद्ध ने कहा— अनुवर्त्तिनी एक बार गौतम की शरण में आओ।

अनुवर्त्तिनी काँपते स्वर से साहस करके बोली— बुद्धं शरणं धम्मं शरणं संघं शरणं गच्छामि।

वृद्ध हँस पड़ा। बोला— आया न साहस? अच्छा जो मैंने कहा उसे भी स्वीकार करो। तब संघ पर यह भयानक आघात न होगा।

अनुवर्त्तिनी ने साहस बटोरा। नीचे देखती हुई स्थिर स्वर से जो वृद्ध ने कहलाया धीरे धीरे दोहरा गयी।

वृद्ध ने कहा— बस इतना ही काफी है। और वह चिल्ला पड़ा— तथागत! तुम्हारे अनुवर्त्ती और अनुयायी तुम्हें भूलते जा रहे हैं उन्हें जगाओ भगवान्!

और वृद्ध बड़ी भयङ्करता से चीख उठा—बुद्धं शरणं धम्मं शरणं संघं शरणं गच्छामि! मानो आज वह अकेला ही आर्य्यसंघ का प्रतिनिधि बनकर बुद्धधर्म और संघ की शरण में जा रहा था। अनुवर्त्तिनी मुँह फाड़े अवाक् और भयभीत सी उसे देख रही थी। शब्द अभी भी गूँज रहे थे।

वृद्ध ने पहले-जैसे स्वर से कहा— चलो। अनुवर्त्तिनी ने उसका हाथ पकड़ लिया। प्रकृति में फिर भी नृत्य का सा जीवन नहीं था। आज मानों अदृष्ट की ऊष्मा चारों ओर तीव्र वेग से फैल रही थी। एकाएक अनुवर्त्तिनी बड़बड़ा उठी— बुद्धं शरणं, धम्मं शरणं संघं शरणं गच्छामि। वृद्ध हँस पड़ा। अनुवर्त्तिनी का हृदय माँज गया उत्फुल्ल हो गया पवित्र हो गया। उसने देखा—वृद्ध गम्भीर था।

उस समय भिक्षु जल्दी-जल्दी अपना काम समाप्त करके महाविहार की ओर जा रहे थे। अनुवर्त्तिनी और वृद्ध भी उधर ही चल दिये।

[७]

संघस्थविर ने सिर उठाकर पूछा— आनन्द भिक्षु कहो क्या कहते हो ?

आनन्द ने नि नभ मुख से कहा— आर्य मैं सघ का त्याग करने आया हूँ !

त्याग ! सघस्थविर चौंककर उठ खड़े हो गये— तुम भिक्षु आनन्द संघ का याग करने आये हो ? तुम चीवर उतार कर फेंक दोगे। चौदह वर्ष से जिसे मैंने भिक्षु होकर भी पिता की ममता से पाला है वही तुम आज मुझसे कहने की धृष्टता कर रहे हो कि तुम वासनाओं से पराजित होकर यह चीवर फाड़कर फक दोगे। जिसकी शांति से आज आर्य्यावर्त दाक्षिणात्य चीन यवद्वीप सारा संसार एक सूत्र में बध गये हैं सहस्रों जीवन जिसकी पवित्रता की छाया में साथक हो गये हैं उसी की गरिमा को ठुकरा कर तुम मार के सामने हतभाग से रो रहे हो !

सघस्थविर ! आनन्द का मुख सुन्दर हो उठा— मैं गृहस्थ का जीवन व्यतीत करना चाहता हू। मैं कोइ पाप तो नहीं कर रहा। भिक्षु गृहस्थ हो सकता है गृहस्थ से फिर भिक्षु हो सकता है।

नहीं आनन्द संघस्थविर ने फिर कहा— आज आर्य्यावत के प्रकाण्ड मेधावी विजनतीरा के संघाराम को सिर झुकाते हैं। आनन्द भिक्षु एक साधारण व्यक्ति नहीं। वह बुद्धभिक्षु का शिष्य अनेक विद्वानों को परास्त कर चुका है। उसके कठोर ानवाद ध र्मकीत्ति के से उज्ज्वल और अकाट्य प्रमाण हैं। आर्यसंघ के चारों ओर विपत्ति के बादल घिर रहे हैं। राजा अपना नहीं ह। ब्राह्मणों का प्रहार दिन पर दिन प्रबल होता जा रहा है। ।सद्धा का प्रजा पर प्रभाव बन्ता जा रहा है। चारा ओर भयानक था मुनायी देती हैं। नब यवना का आक्रमण प्राय होता रहता है। ब्राह्मणा ने जो विप लाया ह न धी धीरे भारी भक्त प्रजा में व्याप्त होता जा रहा ह। बर्बर यवना ने प पप नालाशला

और अनेक बौद्धविहारों को भस्मीभूत कर दिया है। आनन्दभिक्षु तुम चले जाओगे तो आर्य्यसंघ की रक्षा क्या मैं अकेला करूगा ? मैं जानना चाहता हू कि तुम स्त्री पर इतने आसक्त क्यों हो गये ?

आनन्द निर्विकार-सा खड़ा रहा। वह बोला— भदन्त मैं जीवन में आज रूप और मोह से पराजित हो गया हू। मैंने कभी भी जो नहीं देखा उसे आज देखना चाहता हू प्रभो ! यदि आर्य्यसंघ एक व्यक्ति पर निर्भर है तो वह अधिक जीवित नहीं रह सकता।

भिक्षु ! संघस्थविर चीख उठे— तुम सङ्घ का अपमान कर रहे हो।

नहीं भिक्षु !

तुमने मुझे भिक्षु कहा है ?

आनन्द हस पड़ा— अभिमान को ठेस पहुची है आर्य्य ! आज आप साधारण भिक्षु नहीं रहे न ? किन्तु मनुष्य सबसे ऊपर है। उसका सुख हम मठों और विहारों में बन्दी नहीं कर सकते।

संघस्थविर ने आगे बढ़कर कहा— आनन्द तुम स्त्री के आलिङ्गन को सुख कहते हो तुम्हें लज्जा नहीं आती ?

लज्जा ? आनन्द ने निर्भीक स्वर से कहा— आर्य्य क्या यशोधरा पाप है ? क्या राहुल का जन्महेतु पाप है ? मैं पूछता हू आज क्या मातृ गौरव पाप है ? नहीं संघस्थविर ! यौवन भिक्षु होकर रहने की आयु नहीं है।

पापात्मा संघस्थविर नें कहा— तुझे नारी के स्तनों में आज जीवन का स्वर्ग दिख रहा है ? तुझे उन बड़ी-बड़ी आँखों में जो अमृत दिख रहा है वह वास्तव में विष है। यौवन समाप्त हो जायगा बल क्षीण हो जायगा किन्तु आत्मा का ध्वंस होने पर तू कुत्ता की तरह तड़प कर मर जायगा।'

सङ्घस्थविर', आनन्द ने गम्भीर होकर कहा— यदि यौवन पाप है

तो प्रकृति ने उसे बनाया ही क्यों ? व्यवहार और प्रकृति का सम्बन्ध अटूट है। यह एक क्षण अपना इतना कठोर सत्य लिये है कि कोई भी उसे झुठा नहीं सकता। मैं जाना चाहता हूँ।

सङ्घस्थविर क्रुद्ध हो उठे। उन्होंने फूत्कार किया तुम नहीं जा सकते।

'क्यों ? आनन्द का स्वर खिंच गया।

श्रेष्ठि धनदत्त ने तुम्हें पालित पुत्र के रूप में संघ को अपने समस्त धन के साथ दान किया है। यदि तुम्हें मैं भी छोड़ दूं तो भी श्रेष्ठि धन दत्त नहीं छोड़ेगा। और वह कठोरता से हँस उठे।

आनन्द ने विक्षुब्ध होकर कहा— तब मैं एक असहाय दस वर्ष का बालक था। कुछ भी नहा जानता था। श्रेष्ठि धनदत्त ने जिस हाथ से मेरे मुख में अन्न डाला था उसी हाथ से मेरे जीवन का सारा सुख छीन लिया था। मेरी बलि पर निर्वाण की चाह करके क्या वह अपनी तृष्णा से मुक्त हो सकेगा ? संघस्थविर मैं मनुष्य हूं बलि का बकरा नहीं जो किसी के दान को स्वीकार करके धन की तरह निर्जीव सा अपना सिर झुका दूं। म अस्वीकार करता हूं। मैं किसी का पशु नहीं हूं।'

नराधम संघस्थविर चिल्ला उठा— आर्य्यसङ्घ तुझे कभी भी क्षमा नहीं करेगा। राजा को विवश होकर न्याय की ओर झुकना पड़ेगा। तू संघ नहीं छोड़ सकता।

न्याय ? आनन्द के होठा पर विद्रूप खेल उठा— मनुष्य को पशु बना देना आपका न्याय है। यदि यही आपकी गरिमा का यश है तो आर्य्यसङ्घ टुकड़े टुकड़े हो जायगा। गौतम के अंतिम पग चिह्न तक पवित्र आर्य्य भूमि से मिट जायेंगे।

चुप रहो। सङ्घस्थविर हाँफ उठे।

मैं निश्चय ही जाऊँगा बुद्धभिक्षु। तुम मुझे कारागार में रखवा

सकते हो तुम मुझे भागने से रोक सकते हो किन्तु मुझे भिक्षु के रूप में नहीं रख सकते।

क्रोध से संघस्थविर उसकी ओर बढ़ने लगे। उनकी मुट्ठियाँ बँध गयीं। आनन्दभिक्षु कहता रहा—मैं चला जाऊँगा मेरे साथ ही नन्दिनी जायगी।

नन्दिनी! सङ्घस्थविर के मुह से अकस्मात् निकल गया। उनके हाथ खुल गये। वह व्याकुल-से पूछ उठे—नन्दिनी जायगी?

आनन्द ठठाकर हस पड़ा। वह कहने लगा—क्या सङ्घस्थविर? नारी पाप है आलिङ्गन विष है? और नन्दिनी का नाम आते ही आप कैसे इतने व्याकुल हो उठे! नन्दिनी जायगी। मैं जानता हू आप उस पर आसक्त हैं। आप अपना सारा छद्म लगा कर भी उसे नहीं रोक सकते।

सङ्घस्थविर लौट गये। प्रकोष्ठ की दीवार की ओर मुँह करके उन्होंने कहा—आनन्द नन्दिनी एक आग है वह सङ्घ को भस्म कर देगी। उसे जाना ही होगा।

आनन्द उत्फुल्ल-सा पुकार उठा—सङ्घस्थविर की जय हो! उन्होंने आज एक सत्य कहा है क्योंकि उनके अभिमान के पङ्ख उस प्रखर ज्वाला में झुलस गये हैं।

सङ्घस्थविर ने कुछ नहीं कहा। वह वैसे ही उसकी ओर पीठ करके खड़े रहे। आनन्दभिक्षु ने देखा वह जैसे बिल्कुल थक गये थे। सङ्घ-स्थविर वहीं भूमि पर पराजित से बैठ गये। उनके चरणों के नीचे मेधावियों का ज्ञान तालपत्रों पर लिखा पड़ा था। किंतु वे चुप थे। किसी विकराल छाया ने उनके स्वर को अवरुद्ध कर दिया। भय और क्रोध से वह हाथों में मुह छिपा कर ले गये। आनन्द चला गया।

[८]

अनुवर्त्तिनी विशाल स्तम्भ के सहारे खड़ी होकर आरती के बाद

इधर उधर देखने लगी। भिक्षुगण अपने अपने कार्य में मग्न थे। अगरु धूम की गंध से वायुमंडल महक रहा था। उसी समय आनन्दभिक्षु ने उत्तेजित आवेश में प्रवेश किया और नन्दिनी से कहा— शुभे मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूं।

नन्दिनी ने कहा— मुझसे?

और वह विस्मित सी उसके साथ चल पड़ी। भग्न स्तूप के चारों ओर घास उग रही थी। दोनों वहीं बैठ गये। आनन्द का श्वास फूल रहा था। उसने एक बार चारों ओर देखा और कहा— नन्दिनी आज जो कुछ मैं तुम से कह रहा हूं तुम्हारा जीवन यौवन और भविष्य सब कुछ उसी पर निर्भर है।

नन्दिनी चकित हो गयी। उसने कहा— आर्य्य ऐसी क्या बात है मैं भी तो सुनूं।

आनन्दभिक्षु ने निर्भीक स्वर से कहा— देवी मैं तुम्हारा पति हूं।

अनुवर्त्तिनी किंकर्त्तव्यविमूढ़ सी बैठी रही। फिर एकाएक उसकी भृकुटि तन गयी। वह कठोर स्वर से बोली— भिक्षु तुम एक विधवा का नहीं एक उपासिका का अपमान कर रहे हो।

आनन्द फिर भी नहीं चौंका। उसने कहा— अकाल वैधव्य की यह छलना तुम्हारा एक घोर अज्ञान है जिसके कारण तुम पर्वत से उतरने का मार्ग न पाकर ऊपर से लुढ़कने के लिए तयार हो गयी हो।

अनुवर्त्तिनी क्रोध से चिल्ला उठी— तुम पागल हो गये हो भिक्षु!

आनन्द ने धैर्य्य से कहा— आर्य्यसंघ की कोई स्त्री तब तक उपासिका नहीं हो सकती जब तक उसका पति उसे आज्ञा नहीं दे दे।

और आप अनुवर्त्तिनी चिल्ला कर कह उठी— धनदत्त के पालित पुत्र जो संघ को दान कर दिये गये हैं आज्ञा देने योग्य कब से हो गये?"

अनुवर्त्तिनी मैं विद्रोही हूं। आनंद ने व्याकुल होकर कहा।

अनुवर्तिनी पागल की तरह हस उठी। उसने कहा— भिक्षु तुम मुझे पागल बना रहे हो ? क्या मैं सचमुच इतनी सुन्दर हू कि आर्य्यसंघ का मेधावी आनन्दभिक्षु सब कुछ त्याग कर मुझे प्राप्त करने के लिए इतना बड़ा असत्य गढ़ रहा है ? मेरी माता का नाम तो बताओ भिक्षु ?

आनन्द ने उसे तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर कहा— तुम्हारी माता का नाम चंद्रभागा था तुम्हारे पिता का अवलोकितेश्वर और मेरे पिता का नाम चन्द्रसेन था मेरी माता का विजनवती। दस वर्ष की आयु पर मुझे दस्यु पकड़ कर ले गये थे। उन्होंने मेरे माता पिता की हत्या कर दी थी। श्रेष्ठि धनदत्त ने मुझे एक दिन जान्हवी के तट पर पाया था। और तुम्हारे माता पिता का पुराना मित्र श्रेष्ठि सुदत्त मेरे पिता का भी पुराना मित्र था। और सुनना चाहती हो ?—कि तुम्हारे पिता जब उज्जयिनी से लौटकर मणिभद्र के यहाँ गये थे तभी उन्होने मेरा तुमसे विवाह किया था क्योंकि अवलोकितेश्वर चन्द्रसेन के सा। साथ वाली द्वीप से व्यापार करना चाहते थे तुम्हारी माता

भिक्षु अनुवर्त्तिनी सिर पकड़ कर रोने लगी— मैं नहीं जानती मैं क्या करूँ। भिक्षु तुम तुम मेरे ? नहीं नहीं। —फिर वह चुप हो ऊपर देख कर कह उठी— क्या तुमने गणना से ही तो सब नहीं जान लिया ?

नहीं नन्दिनी स्नेह से आनन्द कह उठा— गणना से नाम नहीं निकलता। और यदि वह भी सुनना चाहती हो जो एक दस वर्ष तक का बालक याद रख सकता है तो वह भी सुनो ?'

अनुवर्त्तिनी थकित सी बैठी रही। आनन्द कहने लगा— चलो नन्दिनी सघ में हम साथ साथ नहीं रह सकते। संघ कहता है यौवन पाप है प्रेम पाप है किंतु मैं इन सब का त्याग नहीं कर सकता। मेरा जीवन एक शुष्क नीरस पेड़ का ठूठ मात्र बनकर नहीं रह सकता। आज जो घटा छायी है वह मेरी अपनी है। वर्षों से तुमने मेरी प्रतीक्षा की

है दुखों से पराजित होकर तुमने अपनी हार को भाग्य की जय बनाकर सिर झुका दिया है। देखो यह भी एक दिन है कि तुम्हारा खोया हुआ कोष आज तुम्हारे सामने आया है नन्दिनी! हम तुम तुम हम और किसी से कुछ नहीं। संसार का बड़े से बड़ा वैभव तुम्हारे चरणों पर न्यौछावर है। आओ चलें। जिस पति के लिए रो रोकर तुमने तुम्हारी माता ने आँखें खोयी हैं आज वह अचानक ही तुम्हारे जीवन के सुख स्वर्ग के द्वार खोलने को तुमसे भीख माँग रहा है।

अनुवर्त्तिनी ने देखा आनन्द के मुख पर अद्भुत रूप आतुर हो उठा था। वह देखती रही। उसने कहा—तुम? तुम मेरे देवता हो किंतु आर्य्यसंघ के लोग क्या कहेंगे? क्या वे इस पर विश्वास करेंगे? नहीं भिक्षु, जब इतनी बीत गयी तो अब कितना सुख है जिसके लिए यह रूप ढक दिया जाय।

रूप? आनन्द ने कहा—यह परवशता का रूप चाहे कुछ हो मन का सौंदर्य नहीं है क्योंकि इसमें सत्य के लिए संघर्ष करने की शक्ति नहीं रही है। क्या तुम कह सकती हो कि तुम पुरुष से घृणा करती हो? क्या यह अथाह सौंदर्य लेकर तुम केवल पत्थरों से टकराकर हाहाकार मात्र करने के लिए हो?

अनुवर्त्तिनी काँप उठी। उसने कहा—तथागत मेरी रक्षा करो। मैं नारी हूँ कुछ भी नहीं समझती।

आनन्द खिन्न सा बोला—नन्दिनी तुम पागल हो। तुम भय से जड़ हो गयी हो। वह खड़ा हो गया।

अनुवर्त्तिनी ने धीरे से कहा—नहीं भिक्षु मैं गौतम की उपासिका हूँ। तुम रूप और यौवन के मद में जीवन के उच्च आदर्शों को भूल कर फिर से कीचड़ में पाँव देना चाहते हो। मैं पवित्र उपासिका तन और मन से गौतम की शपथ खाकर संघ के लिए अपना समर्पण कर चुकी हूँ। मैं कहीं नहीं जाऊँगी।

आनन्द ने सुना। पाँव लड़खड़ा गये। वह मूर्छित होकर गिर गया। अनुवर्त्तिनी चीख उठी। गोद में आनन्द का सिर रखकर वह किसी भी स्त्री की भाँति व्यंजन करने लगी। जब उसने सिर उठाकर देखा सामने संघस्थविर वृद्धभिक्षु खड़े क्रोध से काँप रहे थे। उनका मुख काला और विकृत हो रहा था।

[६]

सन्ध्या बीत चली। बादलों के कारण गहन अंधकार छा गया। आज संघ में एक काटने वाली उदासी सब के हृदय में शङ्का उत्पन्न कर रही थी। हवा चल रही थी। संघ का सिंहद्वार बंद कर दिया गया। चरौंकर पट मिल गये। अंधकार की छाया डरावनी होकर प्राङ्गण में फैल गयी। उस उत्कट नीरव में एक असह्यता थी जो मन मिचला रही थी।

सब भिक्षु इकट्ठे हो रहे थे। संघस्थविर ने घोषणा की थी कि आज एक प्रमुख प्रश्न पर विचार करना है। सब गम्भीर और उत्सुक थे। एक ओर उपासकाएं बैठी थीं। अनुवर्त्तिनी चुपचाप एक ओर बैठी थी। आज वह डरी हुई धैर्यहीन भिक्षु-तेज से भ्रष्ट-सी दिखाई दे रही थी। आनन्दभिक्षु निष्प्रभ सा अनुवर्त्तिनी को एकटक देख रहा था।

एकाएक अंधा वृद्ध कौसुभ बोला— संघस्थविर आज इस समय इस मंत्रणा की क्या आवश्यकता है? क्या कारण है उदासीनता का?

संघस्थविर गम्भीर होकर बोल पड़े— भिक्षु इस पैशाचिक अन्धकार का कारण केवल नन्दिनी है।

नन्दिनी चौंक पड़ी। वह उठ खड़ी हुई और संघस्थविर की ओर उठ आयी। कौसुभ चुप हो गया। संघस्थविर ने देखा वह क्रोध से काँप रही थी। वे कहने लगे— आर्य्य भिक्षु समुदाय सुने! गौतम के सिद्धांतों को मानकर चलने वाले इन भिक्षुओं का जीवन सदा आदर्श रहा है। उसमें कोई कलुष की छाया भी नहीं। फिर क्या कारण है कि

संघ के भिक्षुओं के हृदय से वैराग्य हटता जा रहा है ? क्या कारण है कि मेधावी आज बुद्धिहीन वीर्यहीन तेजहीन नर कंकालों का भार उठाये मानव जीवन के अभिशाप बनकर महापाप के विष को फैला रहे हैं ? इन सबका कारण एक है । वह है केवल नंदिनी का आगमन । क्या आज से पहले भी कभी सङ्घ में यह तामसी निजनता फैली थी ?

एकत्रित भिक्षु समुदाय चुपचाप बैठा रहा । वे लोग नंदिनी की ओर देख रहे थे । संघस्थविर गम्भीर थे । कभी कभी उनके अधरों की कोर फड़कने लगती थीं किंतु धूमिल दीपों के प्रकाश में कोई उसे नहीं देख पाया । अनुवर्त्तिनी जड़-सी खड़ी पृथ्वी की ओर देख रही थी । संघस्थविर ने एक बार भी उसकी ओर नहीं देखा ।

संघस्थविर ने फिर कहा— अमिताभ के चरणों की शपथ खाकर कहो क्या मैं झूठ कहता हू ?

एकत्रित भिक्षु हिल उठे । फुसफुसाहट तीव्र होने लगी । शब्द सुनायी दे गया— नहीं आप ठीक कहते हैं ।

भिक्षु समुदाय फिर चुप हो गया । उत्तजित आनंद ने उठकर आगे बढ़कर कहा— माननीय भिक्षुगण ! आर्य उपासिकाय ! भदन्त सङ्घ स्थविर ! मैं पूछता हूँ क्या मनुष्य के लिये अपन आपको धोखा देना आवश्यक है ?

सब के सब चौंक पड़े । सङ्घस्थविर एक बार विचलित हो गये किन्तु उन्होंने शीघ्र ही अपने को वश में करके कहा— भिक्षु आनन्द तुम पर मार ने सरलता से विजय प्राप्त कर ली है ।

नहीं आर्य आनन्द कड़क उठा— आप औरों को धोखा दे सकते हैं किन्तु आनन्द भिक्षु को कोई धोखा नहीं दे सकता । आप सोचकर बोलें । नन्दिनी यदि सङ्घ के अपवाद का कारण मान ली गयी है तब तथागत के अनुवर्त्ती जो इस सङ्घ में रहते हैं वे सब पशु हैं—नृशंस नहीं

बलि पशु कुत्त जो पूँछ दबाये खड़े रहते हैं। क्या गौतम की अनुवर्त्तिनी आय भिक्षणी उपासिका का इस प्रकार अपमान करना सङ्घ की मूल शक्ति और तेज का अपमान करना नहीं है ? भगवान् तथागत

संघस्थविर घृणा से अपने नीचे का होंठ दबाते हुए हँस पड़े। उन्होंने कहा—भिक्षु आनन्द तुम नारी के मोह में फँस गये हो विवेकहीन !

समस्त समुदाय विवेकहीन श द का उच्चारण करता ठठाकर हँस पड़ा। उस हँसी में आनन्दभिक्षु की पुकार डूब गयी। अधा वृद्ध कौस्तुभ चुप था। वह कुछ भी चे । नहीं कर रहा था। समुदाय की हँसी गूँज गूँजकर बढ़ रही थी।

अनुवर्त्तिनी ने देखा अंधकारमय श्मशान में कंकाल अट्टहास करके ताण्डव का आयोजन कर है थे। वह काँप गयी। भीरु नारी डर गई।

आनन्द साहस करके आगे बढ़ा—सङ्घस्थ वर आप अपना मोह मुझ पर क्यों मढ़ रहे हैं ?

मैं ? सङ्घस्थविर ने हँसकर कहा—गौतम के इस पवित्र सङ्घ की शपथ करके कहो कि तुम नन्दिनी पर आसक्त नहीं हुए हो ?

आनन्दभिक्षु सकुच गया। बोला—आर्य यह सङ्घ पवित्र नहीं रहा।

सघस्थ वर ने गरजकर कहा—आर्यभिक्षु समुदाय सुने ! आनन्द भिक्षु संघ को अपवित्र कहते हैं।

एक भिक्षु ने उठकर कहा—आन दभिक्षु अपने पथ से गिर गये हैं।

आनन्दभिक्षु ने सिर झुका लिया। समस्त समुदाय फिर जोर से हँस पड़ा।

संघस्थविर ने कहा—भिक्षुआनन्द को दण्ड मिलेगा। कि तु अनु वर्त्तिनी को सङ्घ से निकाल दिया जाय।

नन्दिनी अब तक चुपचाप सब देख रही थी। अब वह आगे बढ़कर आँखों में आँसू भरे बड़ी सौ यता से बोली— संघस्थविर !

संघस्थविर ने कठोरता से कहा— नारी यह लीला अभिशाप है। पवित्र गौतम के अनुवर्त्तियों को तु हारी कोइ आवश्यकता नहीं। आग की चिनगारी को कोई घर में नहीं रखता।

नन्दिनी ने तड़प कर कहा— तो क्या सङ्घ में मनुष्य नहीं तिनका का हीं ढेर है ?

सङ्घस्थविर क्षण भर को चुप हो गये। उन्हाने कहा— ुम आग से भयानक पाप से भी निर्भीकमना हो।

अनवर्त्तिनी चिल्ला उठी— सघस्थविर आपकी बद्धि भ्रष्ट हो गयी है।

मुझे तुम्हारे उपदेशों की कोइ आवश्यकता नहीं है। सघस्थविर ने उत्तर दिया। तो मैं नन्दिनी सारा बल लगा कर रुघ को कपाती हुई बोली— आयसंघ को पाप की आग में भस्म होता हुआ ही देखूगी। एक उपासिका का अपमान करना खेल नहीं। बुद्ध धम्म और संघ की समस्त शक्ति एक साथ महाध्वंस की इन बर्बर पीड़ाओं के विरुद्ध उठ खड़ी होंगी। आप गौतम के अनुयायी बनते हैं ? आप बिना कारण ही मेरा अपमान कर रहे हैं।

नन्दिनी का मुह लाल हो गया था। उसका शरीर थर थर काँप रहा था। भिक्षु क्रोध से विह्वल हो उठे थे। संघस्थविर कुटिलता से हँस पड़े। बोले—'आर्य भिक्षु समुदाय सुने ! यह नारी क्या कह रही है ? क्या हम इस ब दरघुड़कियों से भयभीत होकर पराजित हो जाय ?

समस्त समुदाय अट्टहास कर उठा।

नन्दिनी काँपती हुई बोली— नीच सघस्थविर तुम

संघस्थविर और नीच ? किसी ने कड़क कर कहा— निकलो नारी संघ से

समस्त समुदाय नन्दिनी की ओर मुड़ गया। नंदिनी दोनों हाथ खोलकर पुकार उठी— आनन्द कहाँ हो तुम? आनंद?

किंतु आनंद के बढ़ने के पहले ही भिक्षुओं ने उसे संघस्थविर के इङ्गित से पकड़ लिया था। वह व्यर्थ ही छूटने के लिये बल करने लगा।

बादल गरजने लगे। घटाटोप अंधकार छाया हुआ था। राह नहीं सूझ रही थी। बिजली कड़क कर भयङ्करता बढ़ाती हुई आकाश में महान् विलोड़न कर रही थी। भिक्षु नंदिनी को धकेल कर बाहर ले चले। आनंद चिल्ला उठा— नन्दिनी! प्रिये!

भिक्षुओं ने दाँतों से जीभ काट ली। वे बोल उठे— आनन्दभिक्षु शांतं पापं! शांतं पापं!

भिक्षुओं ने नन्दिनी को बाहर निकाल कर द्वार बन्द कर लिया। भीमकाय द्वार चर्रा पड़ा।

इसी समय सङ्घ में से भिक्षुओं ने कहीं अश्वों की टाप जल्दी जल्दी खट-खटकर बजती हुई सुनी। बिजली चमक रही थी। आकाश हाहाकार कर रहा था। और जब कुछ क्षण बाद अंधे कौसुभ ने कहा— 'नन्दिनी सचमुच गयी क्या?'—तो कोई सङ्घ के सिंहद्वार पर तड़ातड़ लोहे के घनों का प्रहार कर रहा था। बाहर कोलाहल के ऊपर भिक्षुओं ने दग-दग दग करके वृक्षों के काटने का भयङ्कर रोषित शब्द उन्मत्त होकर गूंजते हुए सुना। अश्वों की झंकृति महाकालानल के प्रकाश सी वहाँ व्याप्त हो गयी। भिक्षु काँप उठे। लौह घनों का रव मानों वज्र पर वज्र का तुमुल प्रहार था। उस गम्भीर विकट निघोष को सुनकर भिक्षुओं का हृदय दहल गया। वे एक दूसरे का मुँह देखने लगे। बिजली आकाश से प्रलय के डमरू के समान कड़ककर कहीं दूर पर गिरी। बादल आपस में टकरा गये। गम्भीर मूसलाधार वर्षा होने लगी। अंधकार दूना हो गया।

घोर शब्द करता सिंहद्वार अर्राकर टूट गया। आक्रमणकारियों का

स्वर घोर कोलाहल करता दिग्दगन्त को बधिर कर उठा। घोड़े दौड़ने लगे। बादल आकाश में गरजते हुए हाहाकार कर उठे।

[१]

अन्धकार में कुछ कराहें आसमान से टकरा रही हैं। संघाराम के बाहर के भाग में स्तूप के पास अनेक घोड़े हिनहिनाकर पृथ्वी रौंद रहे हैं। जगह जगह से लपटें उठकर हाहा खा रही हैं। प्राङ्गण में स्थान स्थान पर शव पड़े हैं जिनके रक्त से समस्त प्रस्तर भीग गये हैं। बुद्ध की प्रतिमा खण्डित होकर भूलुण्ठित पड़ी है। तालपत्रों के जलने की चिरांध व्याप्त हो रही है। शस्त्रों की खड़खड़ाहट से अब भी आकाश गूंज रहा है।

कठोर सैनिकों के शरीरों पर ऊन के वस्त्र कभी-कभी उनके साथ चलती उल्काओं के प्रकाश में चमक उठते हैं जिसे देखकर संघाराम की प्राचीन दीवार स्तब्ध सी छाया बनकर कांप उठती हैं। यवन सैनिक कहीं-कहीं बैठकर एक साथ खा पी रहे हैं जिसे देखकर उनके एक आध साथी भारतीय नाक सिकोड़ रहे हैं। तब कोई यवन सैनिक कहता है—हमारे देश में भेद नहीं होता। हम सब मुसलमान भाई भाई हैं। कोई ऊंच नीच नहीं है।

भारतीय इसे समझ नहीं पाता। सैनिकों की बर्बरता में उनकी एकता एक शक्ति-सी लगती है। तभी आते दिन ने बादलों के वस्त्रों को उजाले के हाथ से एक ओर हटा दिया। नीला आकाश झांकने लगा। धीरे धीरे भोर हो गयी। एक प्रकोष्ठ में बहुमूल्य कालीन पर एक यवन बैठा है जिसके चारों ओर अनेक सैनिक खड़े हैं। मदिरा की गंध उस प्रकोष्ठ से निकल निकलकर बाहर अलिंद में भी फैल रही है।

यवनराज ने उठते हुए अपने साथ के एक भारतीय क्षत्रिय से कहा—क्यों उस अनिद्य सुन्दरी का क्या हुआ? कल रात अंधेरे में वह व्यर्थ ही घायल हो गयी। बच तो जायगी? बहुत सुन्दर है वह।

एक सैनिक यवन ने कहा— जी वह पागल हो गयी है।

यवनराज हँस पड़ा। उसने कहा— हिन्दू स्त्री तो बात बात पर पागल हो जाती है। किन्तु उसने मुड़कर क्षत्रिय से कहा— मेघराज तुम स्त्रियों को गेरू पहनाकर साधू बना देते हो? तुम यौवन का रस नहीं लेते?

हमारे देश में ऐसी स्त्रियाँ आँखों में पलती हैं। अद्भुत है तुम्हारा देश!

मेघराज ने सिर झुका लिया। सब बाहर आ गये। प्राङ्गण में नन्दिनी के लिये दो यवन सैनिक खड़े थे। उन्होंने यवनराज को प्रणाम किया और जयध्वनि की।

हठात् नन्दिनी बल करके उनसे छूट गयी और रोती हुई सामने ही पड़े एक शव से लिपटकर रोने लगी।

यवनराज ने देखा वह एक भिक्षु का शव था। उसके सुन्दर मुख पर तलवारों के घाव थे। उसने इधर उधर देखा। नन्दिनी रोते रोते कहने लगी— तुम्हें छोड़कर चली गयी थी देव! तुम्हारा कहा मैंने नहीं माना स्वामी! मुझे क्षमा करो।'

यवनराज नें मुड़कर क्षत्रिय मेघराज से कहा— यह स्त्री क्या कह रही है?

मेघराज ने कहा— सरदार! यह स्त्री कुलटा है कोइ वेश्या है अथवा अनाचारिणी है। यह इस संघ का कोइ भिक्षु है। इस भिक्षुणी का इससे कुछ अनुचित सम्बन्ध रहा होगा क्योंकि भिक्षुणी किसी भी पुरुष की पत्नी बनकर नहीं रहती।

ओह! यवनराज ठठाकर हँस पड़े। हमारी शबनम से भी सुन्दर है यह! तुम्हारे देश में स्त्री पत्नीत्व भी त्याग देती है। यह सुन्दर युवक सिर मुँड़ाकर क्या करता था यहाँ? भगवान् का भजन? हमारे यहाँ तो ऐसा नहीं होता।

नन्दिनी एकाएक चिल्ला उठी— स्वामी मैं तुम्हारी ही पत्नी हू मैं अब कहीं नहीं जाऊँगी तुम्हें छोड़कर मुझ क्षमा करो आनन्द

एक यवन ने प्रवेश करके कहा— सरदार अपार रत्न राशि इस मन्दिर में मिली है।

अपार! यवनराज का मुख विस्फारित हो गया। उसने कहा— मेघराज तुम्हारे देश में मंदिरों के आदमी बड़े लोभी होते हैं। हमारे देश में तो ऐसा नहीं होता। इतने धन का यहाँ ये लोग क्या करते हैं जब खाते भी नहीं पीते भी नहीं?

और वह फिर हँस पड़ा। अचानक उसकी दृष्टि फिरी। उसने देखा भिक्षु के शव पर स्त्री नि प्राण सी पड़ी थी जैसे इस आलिंगन से उन्हें संसार की कोई भी शक्ति अलग करने में असमथ थी। उसके मुह से केवल इतना निकला— तुम्हारा देश तो केवल अद्भुत ही है मेघराज! यहाँ तो स्त्रियाँ बोलते बोलते मर जाती हैं।

मेघराज ने फिर सिर झुका लिया। उस समय बाहर जयध्वनि हो रही थी।

× × ×

होश में आने पर उस ध्वंस और मुर्दों के ढेर में से एक अधा घायल वृद्ध आदत के मुताबिक चिल्ला उठा— अनुवर्त्तिनी पानी

किन्तु कोइ उत्तर नहीं मिला। वृद्ध ने पहले से भी अधिक ज़ोर से गला सुखाते हुए चीख लगायी—अनुवर्त्तिनी ई ई इ।

अंतम अक्षर को खंडहर की ईंटें भी पुकार उठीं। टूटा वस्त सघा राम चिल्ला उठा किन्तु फिर भी कोइ उत्तर नहीं मिला।

वृद्ध कौस्तुभ वहीं तड़पने लगा। आस पास के वातावरण से शब्द का अजस्र प्रवाह हो रहा था—अनुवर्त्तिनी इ ई ई ई ई मानों उस इ का कहीं भी अन्त नहीं था।

———

कमीन

सीलनदार कोठरी में सुशील पड़ा पड़ा सोचता रहा। आज चार वर्षों से उसने घर नहीं देखा जैसे सारा जीवन एक बंजर हो गया है जिसमें कर्तव्य के सतोष का प्रसार ही ममता की घुटन है स्नेह की पराजय है। हृदय का सूनापन उसकी दृष्टि में कार्यों के अभाव का लक्षण है। यदि मन का असंभाव्य उन्माद एक सुघर कार्य-कारण शक्ति से बद्ध है तो किसलिए बवंडर थक कर अपना शीश झुकाने की प्रतिक्रिया करे और क्षण-क्षण के इस नश्वर संकोच पर बैठने का प्रयत्न करे जैसे साँझ के झिझकते अंधकार में पक्षी चिपककर बैठना चाहते हैं कि वृक्ष की नीरवता में उनका अस्तित्व निस्तब्ध सा निश्चल सा डूब जाये खो जाये ।

कितनी विवशता है इस छोटे से जीवन में पचास रुपये मिलते हैं मँहगाई मिलाकर

पड़ोस में अनेकानेक घर हैं। उनमें चमार रहते हैं। कहते हैं अपने आपको मीना राजपूत। सुशील मुस्कराया—आजकल सबको एक मर्ज है जैसे मालिक के चले जाने पर नौकर कुछ देर सोफा पर बैठकर सोचता है कि वही मालिक है और भय से इधर उधर देखता भी है कि कोइ देख न ले

करवट बदली। इन चमारों को उससे कहीं अधिक तनख्वाह मिलने लगी है इस युद्ध में फिर भी कमबख्तों को रहने की जरा भी तमीज़ नहीं बाहर मजदूरों के घर हैं। वही चमार। उनके घर भी हैं वही झोंपड़े हैं क्योंकि इनके अतिरिक्त उनके पास और कोई भेद कारक चिन्ह नहीं। उनके पुरुषों के मुखों पर युगों की उदासीनता

तह पर तह जमकर अंधकार बन गयी है जैसे चलते चलते पाँव के तलने में घट्टे पड़ जाते हैं।

और फिर एक सिंहावलोकन में स्त्रियों का रूप याद आया। कोई कोई तो वास्तव में सुन्दरी होती हैं। किन्तु रूप का अर्थ यौन वासनाओं की अधकचरी तृष्णा की तृप्ति असंतोष के अतिरिक्त और कुछ नहीं जैसे कच्चा मांस आग पर भूनकर कच्चा पक्का कैसा भी चबा लिया जाय और वह थोड़ी ही देर उबकाई के साथ उलट पड़े

रविवार है आज। कितना धुंधुकार है। इस कमरे में

और ये मजदूर समझते हैं कि मैं बाबू हूं। सुशील हँसा। हाय रे हिन्दुस्तान! यहाँ तो साफ कपड़े पहनने मात्र से इंसान ऊँचा समझ लिया जाता है। भीषणता का साम्राज्य है गंदगी भूख और धधकता अज्ञान

सुशील का ध्यान टूटा। बाहर कुछ कोलाहल हो रहा था। कुछ लोग शायद आपस में लड़ रहे थे। उनकी आवाज कभी कभी कोलाहल के ऊपर लहर उठती थी और उस समय सुशील कुछ बहुत ही फोश गालियों को सुनता इतनी फोश कि उनका फोशपन उनकी सार्थकता को भी पार कर जाता था।

मन में आया मरने दो उन्हें। कमबख्तों का रोज का यही काम है। जब हाथ में पैसे आये तभी ताड़ी पीना और लड़ना जुआ खेलना और फिर घर आकर औरतों को मारना और इसी बीच में इन लड़ाइयों के बीच में भी ये स्त्रियाँ माँ होने लगती हैं

किन्तु जब कोलाहल बढ़ता ही गया तब विवश हो उसे बाहर आना ही पड़ा।

(२)

साँझ के धुँधलके में चारों ओर धूलि उड़ रही थी। बाहर औरतों की भीड़ एकत्र थी। उनकी जीभ ऐसे चल रही थी जैसे उसमें कोई छंद

तोड़ने का व्याघात नहीं है। उस किच किच से सुशील का मन एक नफरत से भीतर काँप गया जैसे कोई ईंट पर ईंट रगड़ रहा हो और सुनने वाले को लग रहा हो वह ईंट खा रहा हो उसके मुख में धूलि की किसकिसाहट के अतिरिक्त कुछ न हो

सुशील को देखकर बुढ़िया ने आकर रोना प्रारम्भ कर दिया। उसके साथ ही उसके लड़के की बहू थी। बुढ़िया की आँखों में पानी नहीं पाता है क्योंकि आँसू गिरने के पहले डबडबा कर छलकता है—जैसे यही उसका आज यौवन के चले जाने पर एकमात्र नारीत्व है जिसे वह इस तरह बूँद-बूंद करके साधारण बातों पर नष्ट नहीं करना चाहती

सुशील ने विक्षुब्ध मन से कहा क्या है भग्गू की माँ? कुछ देर बूढ़ा रोती रही। उस समय किसी स्त्री का बहुत ही दर्दनाक रोना उठ रहा था। पुरुषों का स्वर सुनाई दे रहा था—हैं हैं क्या कर रहा है? छोड़ उसे पाजी क्या जान से मार कर आज फाँसी पर ही लटकेगा?

'रहने दे बे मेरी बहू है

अबे झगड़ा तो तेरा भग्गू से हुआ था

फिर एक कोलाहल जैसे अब आकाश से मूसलधार वर्षा हो रही है जिसमें कोई कितना चिल्लाकर स्वर ऊँचा करना चाहे सब व्यर्थ है

उस मौन से सुशील घबरा गया। उसने इधर-उधर देखा। केवल कुछ सहमी हुई स्त्रियाँ खड़ी थीं जिन पर मौत की सी दहशत छा रही थी और वे इस चिन्ता में मग्न थीं कि अब क्या होगा

सुशील ने एक एक करके सबकी ओर देखा। बुढ़िया की आँखों में एक दयनीयता झलक उठी और भग्गू की बहू ने धीरे से माथे पर अपनी ओढ़नी का पल्ला खींच लिया। सुशील मन ही मन हँसा। कौन से जीवन की लाज है जिसको बचाने की साध अभी भी बाकी है। जिनका अज्ञान ही जिनकी मूर्खता का एकमात्र याथ है जिनकी खुसी

हुई हड्डियों को भी एक मांस की आवश्यकता है क्यों न उसमें यह संकोच की अंतिम लपट भी अपने आप जलकर खत्म हो जाय। उन आंखों में एक गर्व था अपने यौवन का अपमान की झलक थी उसकी असफलता पर और फिर अग्नि परीक्षा की सी दहक से जो उसे घूर रही हैं—जिनमें एक याचना है एक दयनीयता

सुशील ने कहा—क्या हुआ भग्गू की मां ?

उस एक स्वर में जैसे संसार की सभ्यता ने सहानुभूति सूचक स्वर में एक पशु से पूछा था—तू क्या चाहता है ? तेरे आर्त्तनाद के इतने कोलाहल में मन की वेदना को प्रकट करने वाली एक भी ऐसी ध्वनि नहीं हो सकती जो साधक हो जिसे मनु य मनुष्य के रूप में पहचान सके।

भग्गू की मां ने रोते रोते कहा—बाबू ! स्वर अटक गया। कितना दु ख है जो विक्षोभ के कँटीले तारों की जंजीर को लांघना चाहता है लेकिन फंस जाता है

और सुशील ने बहू की ओर दखकर कहा—क्या बात है बहू, कह न ?

पास में ही कोलाहल बढ़ रहा है। अब भी कहीं कोई किसी स्त्री को मार रहा है और जो रावण ने भी शत्रु की पत्नी पर करने का प्रयत्न नहीं किया वही आज शायद एक पति अपनी ही स्त्री के प्रति कर रहा है।

सुशील के मन में आता है कि जाकर उस मनु य की कलाई ककड़ी की तरह तोड़ दे और क कि मूर्ख तू जिसको मार रहा है वह तेरे बच्चों की मां है

कि तु विचार टूट गया। बुढ़िया ने कहा—बाबू सारे मस्ता रहे हैं। इनके मुह में धर दूँ आग। दो पैसे मिलने लगे हैं तो यह तो नहीं कि भलमनसी से जोड़कर रखें कि वखत बेवखत काम आयेंगे बस मिले

कि दारू शराब और कुछ नहीं। अब उसे दसों कल्ला को जोड़ जोड़ के किसे समान ले लिये और यह हरामी बस फूक फूक

सुशील सुन रहा था। बुढ़िया उँडेले जा रही थी—वह हैं न मुख्तार साहब रात को अपने घर में जुआ खेलाते हैं और सबेरे हारे हुआ से कहते हैं कि दो आने रुपये का रुक्का लिखो नहीं चुकाओ हम नहीं जानते

बुढ़िया का स्वर काँप उठा। बहू की आँखें एक अज्ञात भय से फैल गयीं। बुढ़िया कहती रही। बहू के जेवर उतार ले गया। एक यह हँसुली रही है। अब इस पर भी टूटेगा बाबू तुम धर लो इसे।

सुशील को काठ मार गया है यह भाव। परायी औरत की हँसुली कैसे रख ले वह? औरत जवान है वह स्वय कुवारा है अर्थात् समाज का दोनों से एक ही सम्बन्ध है बदनामी। उसके आदमी को मालूम होगा तो? क्यों पड़े वह किसी के झगड़े में? उसी ने हँसुली बनवायी है ले जाने दो उसे फिर बनवा देगा यह है उसी की। रोटी देगा रहेगी न देगा भाग जायेगी मारेगा हर कोई

और बहू हँसुली पर हाथ रखे डरी सी खड़ी थी जैसे वह भी उसके शरीर का अंग थी। कोलाहल अब भी उठ रहा था। सुशील ने सुना। मन चाहता था भेड़िये की तरह आज भी उन सबका वक्षःस्थल फाड़ कर उनके हृदय का कलुषित पिंड देखे जिसने मनुष्य को पशु बनाने में अपनी सारी सामर्थ्य लगा दी है और अपने राक्षसत्व पर गर्व किया है कि हम मानव हैं हम देवत्व के लक्षण हैं।

युगों तक मनुष्य की बुद्धि छीनकर उसे कोल्हू के बैल की भाँति चलाया गया है और आज वह मनुष्य कह रहा है कि मैं मनुष्य नहीं हूँ, बैल हूँ तुम यदि मुझे फिर से मनुष्य बनाना चाहते हो तो निस्संदेह तुम्हारा भी कोई स्वार्थ होगा क्योंकि तुमने चाँदी का सिक्का हमें तब

दिया है जब हमारी स्त्रियों के रूप की काई पर तुम्हारा उन्मत्त चरण फिसला है

वह देखता रहा। कोलाहल अब भी उठ रहा था। और उधर वे लोग ताड़ी के नशे में चूर बावले होकर लड़ रहे थे मन माना कोश बक रहे थे कि एक बार सुशील ने स्त्रियों के बीच में खड़े उन शब्दों को सुन कर लाज से सिर झुका लिया किन्तु वे स्त्रियाँ खड़ी रहीं जैसे उनके लिये उसमें कोई नवीनता नहीं थी उनके दैनिक जीवन का कोलाहल यदि हाहाकार ही है तो फिर लाज कैसी क्योंकि सबसे बड़ी लाज जीवन है मृत्यु ही निर्लज्जता है

(३)

दूसरे दिन सुशील के सिर में दर्द था। वह कठोरी में पड़ा-पड़ा सोचता रहा। उसके माथे में धीरे धीरे चपका चल रहा था जैसे यह भार उसके निरावरण आकाश में अपने आप कुछ उदासी का भारवाही अवकाश बनकर छा गया हो।

कितना एकांत है इस जीवन में। भविष्य की सुख छलना के ऊपर सारा वर्तमान निकलता जा रहा है जैसे कोई लोहे को पूरी सहिष्णुता से रेत रहा हो धीरे धीरे धीरे धीरे

सुबह से कुछ खाने को नहीं मिला कोई यह तक पूछने को नहीं कि तुमने भी कुछ खाया है ? अच्छे हैं ये चमार ही, कम से कम खाने का तो इंतजाम है न मिले वह दूसरी बात है जब है तब तो है ही

सुशील हँसा। उसमें और उनमें कामर्डों का भेद है साहस और निरपराधता का भेद है एक सा अनवरत। मजदूर अपने अपने काम पर चले गये थे। अब साँझ को वे फिर लौट आएँगे। दिन भर वे जो मेहनत कर रहे हैं दूसरे के लिए तेल निकाल रहे हैं अच्छे हैं वे बैल जिनका पसीना तेल है जिनकी चेतना का सबसे उच्च स्वरूप भी प्राकृतिक

नियम से पशुत्व है जिनकी गुलामी को रूप भी पेट भर भोजन पा लेने पर ७तुर है

सशील ने सुना बाहर फिर सरौते चल रहे थे अर्थात् औरतें फिर चख चख कर रही थीं। कभी-कभी किसी बुढ़िया के मुँह से कोई गंदी गाली निकल जाती थी। सुशील उस समय मन ही मन एक संकोच से क्षु ध हो जाता था। कैसी हैं ये स्त्रियाँ जो सब कुछ बकने में भी तनिक नहा झप ीं—अपनी ही बहू बेटियों के सामने

बाहर कुछ समय कटेगा। यहाँ एक नीरवता का उपहास है। यहाँ भी तो नहीं है जैसे एक सूखा पेड़ शीघ्र ही कटने के लिए लहलहाते खेत को देख रहा हो

हवा का हलका-सा झोंका आया। यह भी जीवन की अधखुली सी अर्द्ध-चेतना है

सुशील बाहर आ गया। नीम के पेड़ की छाया में कुछ घरों की स्त्रियाँ बैठी थीं। सुशील को देखकर दो एक नवयुवतिया के ह ठों पर मुस्कान फैल गयी। नि सकोच सुशील उनके पास पहुँच गया। औरत आपस में कल की नात की चर्चा कर रही थीं क्योंकि जो कल हुआ है वही शायद आज फिर हो

धन्ना की बहू को चोट आयी है। अपनी जान जब तक बस चला जेवर नहीं उतारने दिया तब लोगों ने धन्ना को रोका बीच बचाव किया समझाया बहू दे दे उसे तङ्ग न कर तेरा आदमी है दे दिया उसने हरामी ले गया। मुख्तार कुछ कम कमीन है बाबू ! तुम तो बाबू हो, पुलिस में रपोट लिखवा दो कि मुख्तार यह सब करता है

एक बात नहीं शब्दों के घबराहट पैदा करने वाले कीड़े चल रहे हैं सब बुरे हैं सब मिटने चाहिये किन्तु डर है मुझे काट न खाएँ, मेरे आराम में बाधा न पड़े क्योंकि मैं दूर रहना चाहता हूँ।

और सुशील को लगा जैसे इसका मन भीतर ही भीतर चिल्ला

उठा—सुशील तू कायर है तू चोर को चोरी करते देख मुह फेर कर खड़ा है तू समझता है तू चोर नहीं है।

बुद्धि पर आवाज होती है शिक्षा का नन्हा बौना भटक कर बाहर निकल आता है।

सुशील ने कहा—तुम्हारी गलती है। तुम लोगा में एका नहीं है तुम्हें अपनी ताकत मालूम नहीं।

स्त्रियों में एक उत्सुकता का उदय हुआ। सबने उसकी ओर अचरज से देखा। यह क्या कह रहा है आज बाबू? इसमें हम क्या कर सकती हैं?

सुशील को लगा जैसे बहुत सी पथराई आँखा पर पत्थर रगड़ कर अब वह एक ऐसी चिनगारी निकालेगा जिसकी आग से सारे संसार का अँधेरा जलकर भस्म हो जायगा और फिर इन्सान कहेगा—बताओ मुझे उनको दिखाओ जिन लोगों ने मेरी इंसानियत को छीन लिया है मैं उनका नाश करना चाहता हू

सुशील को लगा आज जीवन के प्रत्येक कोने में क्राति की आवश्यकता है आज राजनीति राजाओं का खेल मात्र नहीं वरन् जीवन को जड़ से साफ करना है। उसकी कीमत ही नहीं आँकना बल्कि उसे अपने मूल्य का स्वयं ज्ञान कराके उसे किसी योग्य बनाना है।

उसने कहा—तुम उन्हें खाना पका कर खिलाती हो तुम उनके बच्चों की माँ हो तुम उनकी माँ हो क्या तुम्हारा उन पर भी हक नहीं है? क्या तुम उनकी नौकरानी हो?

युवतियों के होठों पर व्यंग की मुसकान खेल गयी जैसे बेचारा बाबू! यह क्या जाने?

वृद्धाओं की आँखें झुर्रियों को प्रकट करके और संकुचित हो गयीं। बालिकाओं के अबोध नयन विस्मय से फैल गये।

सुशील ने कहा—तुम सब एका करके कह दो कि जब तक शराब

पीकर दङ्गा करना नहीं छोड़ोगे तब तक हममें से कोई भी खाना नहीं बनायेगी और जब वे भूखे मरेंगे तब लाचार हो उ हें तुम्हारी बात माननी पड़ेगी। बोलो ठीक है ?

सबने एक दूसरी की ओर देखा। अन्त में धीरे से भग्गू की माँ ने कहा—बाबू! आपका दिल बहुत अ छा है। आपने जो कही सो तो अशराफ आदमियों की बात है हम तो कमीन हैं बाबू, कमीन

तिक्त हो गया है सुशील का मन जैसे कोढ़िन पद्मिनी पर अ हास कर उठी हो

और वृद्धा कह रही थी—औरत तो मर्द के पाँव की जूती है बाबू, अभी ब्याह नहीं हुआ जब हो जायगा तब तुम भी समझ जाओगे। अभी तो बच्चा हो निरे बच्चा

पञ्च परमेश्वर

चन्दा ने दालान में खड़े होकर आवाज देने के लिये मुह खोला पर एकाएक साहस नहीं हुआ। कोठे के भीतर खाँसने की आवाज आयी। अभी अँधेरा ही था। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। गधे भी भीतर की तरफ टाट बाधकर बनाई हुई छत के नीचे कान खड़े किए हुए बिल्कुल नीरव खड़े थे। खपरैल पर लाल-सी झलक थी देखकर ही लगता था जैसे वे सब बहुत ठण्ढी हो गयी थीं जैसे स्वयं बर्फ हो। गली की दूसरी तरफ मस्जिद में मुल्ला ने अजान की बाँग दी। च दा कुछ देर खड़ा रहा फिर उसने धीरे से कहा—भैया!

बिस्तर में क हाई कुलबुलाया अपनी अच्छी वाली आँख को मींड़ा। उसे क्या मालूम न था ? फिर भी भारी गले से पड़ा पड़ा बोला— कौन है ?' और कहने में वह स्वयं रुक गया। नहीं जानता तो क्या

राता को दरवाजे खुले छोड़कर सोता ? उसे खूब पता था कि कल सूरज नारायन चले न चले मगर चंदा लगी भोर आकर निसूरेगा।

दोनों भाइ असमंजस में थे। इसी समय चौधरी मुरली की बूढ़ी खाँसी सड़क पर सुनाई दी। चंदा की जान में जान आयी। चौधरी को बहुत सुबह ही उठ जाने की टेव थी। वास्तव में टेव फव कुछ नहीं। दिन में हुक्का गड़गड़ाने से रात को ठसका सताता था और फिर उल्लू की तरह रात को जाग कर वह सुबह ही बुलबुल की तरह जग जाते और लठिया ठनकाते सड़क से गली गली से सड़क पर चक्कर मारते रहते।

इसी भोर को जो कन्हाई का द्वार खुला देखा और फिर एक आदमी भी तो पुकार कर कहा—को है रे ?

चन्दा को डूबते में सहारा मिला। लपक कर पैर पकड़ लिये।

क्यों ? रोता क्यों है ? चौधरी ने अचकचा कर पूछा रप्पी कैसी है ?

कहाँ है, चौधरी दादा चन्दा ने रोते रोते हिचकी लेकर कहा— रात को ही चल बसी।

और तू ने किसी को बुलाया भी नहीं ?

चन्दा ने जवाब नहीं दिया। सिसकता रहा। गधे अपनी बेफिक्री से मस्ती के आलम में खड़े रहे। उनकी दृष्टि में आदमी ने ही अपना नाम उन पर थोप कर उनका असली नाम अपने पर लागू कर लिया था।

ओह ! कहाँ है रे कन्हाई ? चौधरी पञ्च ने अधिकार से कहा— सुना तूने ? अब काहे की दुसमनी ? दुसमन् तो चला गया। मरी से बैर करता सुहायेगा ?

कन्हाई ने जल्दी जल्दी धोती पर अपना रुइ का पजामा चढ़ाकर रुई का अगरखा पहना और बिगड़ी आँख पर हाथ धर कर बाहर निकला आया। चौधरी ने फिर कहा—बिरादरी तौ तब आयेगी जब

घर का अपना पहले लहास को छुएगा बावले। चली गयी बेचारी। अब काहे का अलगाव है बेटा? देख और क्या चाहिये? तेरी माँ थी न?

कन्हाइ ने दो पग पीछे हट कर कहा—दादा! जे क्या कही एक ही? किसकी माँ थी? मेरी महतारी सब कुछ थी छिनाल नहीं थी समझे? अब आया है? देखा? कैसा लाड़ला है? नहीं आऊगा समझे? बीर्यों का छोरा हू तो नहीं आऊगा।

चौधरी ने शाति लाने के लिए कहा—हाँ हाँ रे कन्हाई तू तो बिरादरी की नाक बन गया। पञ्च मैं हूँ कि तू?

कन्हाइ दबका। उसने कहा— तो मैंने कुछ अगल बात कही है दादा? उसने मेरे खिलाप क्या नहीं किया? मैंने हड्डी हड्डी करके उसके चंदा को बान बना दिया। ताऊ मरे थे तब मेरे बाप की आँख फूट गयी थी जो धरेजा किया तो भाभी से ही और अपनी याहता को छोड दिया। रिसा रिसा के मारा है मेरी माँ को। वह तो मैं कहू मैंने फिर भी उसे अपनी माँ के बरोबर रखा। तुम सब अनजान बन गये ऐसे! घर छोड़ दिया। अपनी मेहनत के बल पै यह घर नया बनाया है। अपना गधा है। जब सपूती का सुलच्छना बड़ा हुआ तो कैसी आँख फेर गयी? वह दिन क्या मैं भूल जाऊगा?

चौधरी निरुत्तर हो गये। फिर भी कहा—पर बेटा तेरे बाप की बहू थी यह तेरे बाप का ही बेटा है तेरा भइया है दस आदमी नाम धरगे। गधा लाद के बाजार से दूकान के लिए सब्जी लाता है। आज वह न सही अमजाना करके लगा दे कन्धा तेरा जस तेरे हाथ है कोई नहीं छूटता अपनी अपनी करनी सब भोगते हैं

कन्हाई निरुत्तर हो गया। चंदा ने उसके पैर पकड़ कर पाँवा पर सिर रख दिया। और रोने लगा।

'मेरी लाज तो तुम्हारे हाथ है भैया! पार लगाओ डुबा दो। घर

तोऽ तुम्हारा मैं तोऽ तुम्हारा गधा। कान पकड़ के चाहे इधर कर दो चाहे उधर पर वह तो बेचारी मर गयी

और उसकी आँखा का पानी कहाइ के पैरों पर गर्म गर्म टपक गया। कहाई का हृदय एक बार भीतर ही भीतर घुमड़ आया।

दोनों ने बगल के घर में घुस कर देखा—रम्पी निजान पड़ी थी। हल्की चादर से उसका शरीर ढका हुआ था। न उसे ठंड लग रही थी न भूख न प्यास। कहाई का हृदय एक बार रो उठा। इससे क्या बदला लेना? एक दिन सबका यही हाल होना है उस दिन न घर है न बार बस मिट्टी में मिट्टी है

और वह उसके पैरों पर सिर रखकर रो उठा—अम्मा

रम्मी फुक गयी। कन्हाइ ने अपने हाथ से आग दी। उसके पेट का जाया न सही बाप का बड़ा बेटा तो वही था। बिरादरी के लोगों के मुह से वाह वाह की आवाज निकल गयी। कारज ऐसा किया कि कुम्हारों में काहे को होता होगा स्वय चंदा को भेजकर फूल गङ्गा में डलवा दिये। पाप कौन नहीं करता? मगर हम तो उसकी गत सुधार दें। बारह बामन हो गये। और जब कन्हाइ लौटकर तेरहवें दिन अपने घर आया तो ऐसा लगा जैसे अब कुछ नहीं रहा। चंदा गधा लेकर मिट्टी डालने गया था। यही आमदनी थी आज कल। कुछ बढ चढ़ कर बारह आने रोज सो मिट्टी के मोल पैसा आने पर मिट्टी के ही मोल चला जाता। गेहू की जगह बाजरा चना सस्ता था। सब वही खाते थे और यही सबसे अधिक सुलभ था। चंदा के पास वास्तव में कुछ नहीं था। रम्पी ने अपना पति मरने पर देवर किया देवर की पुरानी गिरस्ती तोड़ दी क्योंकि वह चटोरी थी और जलन से सदा उसकी छाती फटती रहती। वह किसी के क्या काम आती? छोड़ा तो है चंदा! उसके पास बस दो साठ साठ रुपयों के गधे ही तो हैं।

पुराना अपना घर गिरवी रखा है और अब शायद छूट भी नहीं सकता। किराये का मकान लेके रह रही थी छज्जो!

कन्हाई का हृदय विक्षोभ से भर गया। भीतर कोठे में घुसकर एक आँख से ढूँ कर आँखों पर हरा चश्मा लगा लिया ताकि आँखों की खोट बाजार वाले न परख लें। पूछने पर कन्हाई कहता— दुख रही हैं दुख, और जवानों से कहता— स्कूल की लौंडियाँ देखने को पर्दा डाला है पर्दा। सब सुनते और हसते। उसके बारे में कई कहानियाँ थीं कि वह एक प्रोफेसर के यहाँ नौकर था। जिसकी बीबी जवान थी और काम से जी चुराती थी। उसने कन्हाई से खाना पकाने को कहा तो कन्हाई ने अपनी ऊँची जाति का फायदा उठाने को धर्म की दुहाई दी। बीबी अंगरेजी पढ़ी लिखी थी। उसने एक नहीं मानी। तब वह नौकरी छोड़ आया। उसके बाद भटक भटका कर सब्जी की दूकान की और वह चल निकली कि कन्हाई शौकिया ही एक दो गधे रखने लगा, बस्ती में लादने के लिए किराये पर चलाने लगा।

कन्हाई ऊबकर दूकान पर जा बैठा। दिन भर उसका जी नहीं लगा। आज उसे फिर से घर भरने की याद आने लगी। चंदा बाईस वर्ष का हो गया। अचान कहीं उसे उस पर दया भाव उत्पन्न होता हुआ दिखाई दिया। अब तो सचमुच बीच की फाँस हट गई थी। कन्हाई ने अपने पैसे से कारज किया था। हृदय की उद्वेलित अवस्था भीतर के संतोष पर तैर उठी। कन्हाई दूकान बंद करके घर लौट आया।

चंदा के ब्याह के लिये कन्हाई ने आकाश पाताल एक कर, दिया। दिल बल्लियों उछलता था। चौधरी पंच मुरली के घर जाकर जब उसने क़िस्सा सुनाया तो पंच उछल उछल पड़े खाँसी का ढेर लगा दिया। उनकी बहू ने बूटी पलकें उठाकर देखा और गीत गाने के लिए तैयारी करने का वचन दे दिया। आज जैसे घर भर में हर एक वस्तु में आनंद ही आनंद था। चंदा का घर साफ हो गया। एक ओर मटके

सजाकर रख दिये गये। और चंदा के बच्चे होंगे वे दिवाली पर दिये बेचेंगे बड़े होंगे तो चंदा मिट्टी लादने का काम छोड़कर चाक सम्भा लेगा और फिर हर फिरकन पर झटका खाकर कुल्हड़ पर कुल्हड़ उतर आएगा। चौधरी के पीछे जो बाड़ा है उसी में भट्टा लग जाएगा।

चंदा मस्त होकर गा रहा था। फागुन का सुलगता मास था। बरात बाहर गली में बैठकर जीम रही थी। भीतर औरतें गालियाँ गा रही थीं—

मेरौ गरमी कौ मारौ खसम देखिके रह रह पलटा खाय
नैकु लहगा नीचौ करलै

कन्हाई ने रङ्गीन फेंटा बाँधा था। आज उसके पगों में स्फूर्ति थी दौड़ दौड़ कर इन्तजाम कर रहा था। चारों ओर कोलाहल पर प्रकाश की धुंधली किरन तर रही थीं। बरातियों के खच्चर जिन पर वे चढ़ कर आये थे एक ओर मूर्खों से चुपचाप खड़े थे जैसे उन्हें मनुष्य की इस उन्मदिष्णु तृष्णा से कोई मतलब न था।

और इसी तरह एक दिन बहू ने आकर घूंघट की दो तहों में से देखते हुए कन्हाई के पैर छुए। चंदा की गिरस्ती बस गयी। और कन्हाई बगल में अपने घर में लौट गया।

चंदा की गाड़ी जब चलने से इनकार करने लगी तभी उसने घर से बाहर कदम रखा। पड़ोस की औरतें लुगाई के इस गुलाम को देख कर कानाफूसी करतीं राह चलते इशारे करके हंसतीं और जब मिलतीं तो यही चर्चा चलती। चंदा फूलों के सामने पराजित हो गया था। फूलों को देख कुम्हरिया कोई कह दे तो उसे आँखों में काजर लगाने की ज़रूरत है। वह तो पूरी जाटिनी है। जवानी का किला है लचकती जीभ है फोरन तर हो जाये। चंदा की क्या बिसात? ऐसा बस्ती में बहुत कम हुआ। दिन में चंदा और फूलो जोर जोर से बोलते हैं ठहाके और किलकारियों को सुनकर पड़ोस के लोग दाँतों तले उंगली

दबाते हैं। कुन्जो जो प्राय तीन ब्याहता छोकरिया की मैया है (और तीनों लड़कियाँ गालियाँ गाने में उसका लोहा मानती हैं) वह तक चौंक जाती है कि सरम हया का तो नामों निसान ही उठ गया।

इधर चंदा सुबह जाता सरे साझ लौटता तो थका मादा और फूलो मुँह फुलाकर बैठ जाती। पति पत्नी में अक्सर पैसों के पीछे झगड़ा हो जाता। चदा कहता—तो मैं राजा नहीं हू समझी ? तू तो पाँय पसार कर बैठ और मैं दर दर मारा मारा फिरूँ ?

कहते कहते बीड़ी सुलगा लेता। फूलो कभी-कभी रो देती। कहती—तो तुम मुझे याह कर ही क्यों लाये थे ? जमाने की औरतों के तन पर बस्तर हैं गहने हैं यहाँ खाने के लाले हैं

चंदा काट कर कहता—ओह हो। रानी बहू। बस्ती में सब ही एसे हैं। तू ही तो एक नहीं है ? भैया की तरह सब ही तो नहीं। उनका पैसा थैली का हिसाब तो मिट्टी में गड़ता है यहाँ पेट में गचकती है मेरी कमाइ राइ !

फूलो कह उठती—चलो रहने दो। भाँजी माँग के परबीन गाहक तुम ही तो हो। जग के नाम धरे अपना भी देखा ? ˉयाह तो मुफ्त हुआ था नहीं तो तुम्हें कौन देता छोरी ? सैत का चंदन लाला तू लगा ले और घर वालों के लगा दे।

चंदा विक्षुब्ध होकर बोला—तो जा बैठ भैया के घर ही। रोकता हू। जमाने के मरद पड़े हैं। चली जा जहाँ जाना हो।

फूलो लजाकर कहती—अरे धीरे बोलो धीरे तुम्हें तो हया-सरम कुछ भी नहीं। कोइ सुनेगा तो क्या कहेगा ?

चन्दा हँस देता। और रोज रोज की बात या तो रोने में समाप्त होती या हँसने में और दोनों काफी देर तक एक दूसरे से बात नहीं करते लेकिन बारह बजे रात को अपने आप फिर दोस्ती हो जाती। चन्दा द्विविधा में पड़ा रहा। किन्तु कन्हाई से एक भी बात नहीं कही।

मन ही मन उसके वैभव को देख कर ईर्ष्या करता। कन्हाइ ने एक और गधा खरीद लिया।

उस दिन जब वह सुबह चन्दा को घर पर समझ कर खबर देने आया चन्दा तो था नहीं आँगन के कोने में पसीने से लथपथ अस्त व्यस्त कपड़ों में प्राय खुली फूलो नाज पीस रही थी। कन्हाइ ने देखा और देखता रह गया। फूलो ने मुड़ कर देखा और अपना घूघट काढ़ लिया। वक्षस्थल फिर भी जल्दी में अच्छी तरह नहा ढक सकी।

कन्हाइ पौरी में आ गया। और फिर पूछ कर लौट आया। चन्दा ने गधा खरीदने की बात सुनी और अपनी परवशता के अवरोध में फूलो से फिर लड़ बैठा। फूलो देर तक रोती रही।

प्राय एक सप्ताह बीत गया। चन्दा का मकानदार उस दिन किराया वसूल करने आया था। चन्दा ने उसे लाकर आँगन में खाट पर बिठाकर उसकी खुशामद में काफी समय लगा दिया। फूलो कुछ देर प्रतीक्षा करती रही। फिर ऊब कर बाहर सड़क के नल से डोल भर कर कन्हाई के घर में घुस गयी। मालूम ही था कि कन्हाइ उस समय दूकान पर रहता है घर पर नहीं।

गरीबों के घर में गुसलखाने नहीं रहते। ऊपर छत पर नहाने से बाबू लोगों के लड़के छिप कर अपने ऊँचे-ऊँचे घरों से देख लेते थे अत वह आँगन के एक कोने में बैठ कर नहाने लगी। जूए लो फिर भी बीन लेगी। जब तक जेठ बाहर हैं तब तक जल्दी जल्दी नहा ले। इसी समय न जाने कहाँ से कन्हाई आ घुसा। देखा और आँखों के सामने से बिजली कौंध गयी। फूलो घुटनों में सिर छिपा कर बैठ गयी। जब वह कपड़े पहन कर निकली कन्हाई बाहर पौरी में प्रतीक्षा कर रहा था। फूलो ने देखा और बरबस हो उसके होठों पर एक तरल मुस्कराहट फैल गयी। पौरी में उजाला अधिक न था तिस पर कन्हाइ की आँखों

पर चश्मा चढ़ा हुआ था। वह थोड़ा ही देख सका किन्तु पुराना आदमी था। समझ काफी दूर ले गयी। कहा—बहू! च दा कहाँ है?

उसके स्वर में बड़ पन था अधिकार था डरने का कोइ कारण शेष नहीं रहा। उसने सिर झुका कर घूघट खींच लिया और पाँव के अँगूठे से भूमि कुरेदते हुए कहा—घर बैठे हैं।

क,हाई ने फिर कहा—तो ले। लिए जा। बना लेना।

दो ककड़ी भीतर से लाकर दे दी हाथ में। फूलो ने घूघट पकड़ कर उठाने वाली उँगलियों के बीच से देखा और मुस्कराती हुई ककड़ियों को झोल में रख कर चली गयी।

कन्हाई कुछ सोचता सा खड़ा रहा। चन्दा ने देखा और पूछा—यह कहाँ से ले आयी?

कन्हाई ने भी अपने आँगन से वह सन्देह भरा स्वर सुना। वह साँस रोक कर प्रतीक्षा में खड़ा रहा देखें क्या कहती है? फूलो ने तिनक कर कहा—परसों दो आने दिये थे? तुम्हारी तरह मैं क्या चाट उड़ाती हू? दारू पीती हू? बच रहे थे सो कभी कभाद खाने को जी चाह ही आता है। सो ही ले आई।

कहाँ? भैया की दूकान से? चन्दा ने फिर उपेक्षा से पूछा।

हाँ! नहीं तो? फूलो ने धीरे से उत्तर दिया।

राम राम च दा का स्वर सुनाई दिया। भइया हैं ये? अकेले का खरच ही क्या है? इसलिए जोड़ जोड़ कर रखते हैं? कौन है इनका? न आगें हसने को न पीछे रोने को। दो ककड़ी तक नहीं दे सके जो फूटी आँख से देख कर दाम ले लिये?'

फूलो ने उत्तर नहीं दिया। कुछ बुरबुराई अवश्य जिसे क हाई नहीं सुन सका। उसके दाँतों ने क्रोध से भीतर पड़ी जीभ को काट लिया। कैसी है यह दुनियाँ? मतलब के साथी हैं सब। इनका पेट तो नरक की

आग है। बराबर बाले जाओ कभी नहा बुझेगी। हाथ फैलाना सीख हैं। कभी हाथ उल्टा करना नहीं आया।

फिर मन एक अजीब उलझन में पड़ गया। व्याह हुए अभी तीन महीने भी नहीं हुए बहू ने यह क्या रंग कर दिये। ठीक ही तो ह। भूखा मारेगा तो क्यों मरेगी सो? उसके तन बदन में जोस है तो दस जगह खायेगी ऐसी कौन बात है लाला में जो स ी हो जाये। जैसे पैरा वैसा धरेजना। बैयर तो राखे से रहेगी।

एक कुटिलता उसके होठा पर झटका खा गयी।

बरसात की ऊदी घटाओं ने आकाश घेर लिया। आँगन की कीच से पाँव बचाता हुआ कन्हाई भीतर आकर बैठ गया। आज रोटी बनाने का मन नहीं कर रहा था। उठ कर दिया जला दिया और फिर चुपचाप उसे देखता रहा। ि्या भी अपनी एक आँख से ही चारों ओर के अंधकार को देख कर काँप रहा था जैसे बार बार उसकी पलक झपक जाती हों। बाहर अँधेरा छा चुका था। दूर पर सड़क भी नीरव थी। कीचड़ के कारण बहुत कम लोग इधर से उधर आ जा रहे थे।

एकाएक दालान में खड़ खड़ की कुछ आवाज हुई। कन्हाइ ने शंका से पुकार कर कहा—को है रे?

एक मर्ा यल कुत्ता लकड़िया के पीछे से निकल कर चला गया। कन्हाई झप गया। उठ कर बाहर चला। निन्हू हलवाइ की दूकान पर जाकर दूध लिया और लौट आया। अब कौन खाने के पीछे हाय हाय करता? अपना क्या है? जो खा लिया सो ही ठीक है। ि रस्ती के चक्कर हैं।

क हाइ बिस्तर पर लेट गया। कुछ ही देर बाद उसकी औंध किसी के खिलखिला कर हसने की आवाज से टूट गइ। इस याधात से उसका मन असंतोष से भर गया। निश्चय ही फूलो ही हसी थी। और फिर उसने देखा वह रात थी घटाओ वाली रात सनसनाती आकाश से

पृथ्वी तक फन फुफकारती रह रहकर लरजती। आँखों के सामने अप्रस्तुत का चित्र आया। चंदा! फूलो! रात! बिस्तर और

कन्हाई पशु की तरह एक बार आर्त्त स्वर से कराह उठा। बगल के घर की ध्वनियों ने उसे बेचैन कर दिया। अभी कुछ ही देर पहले पड़ोस की औरतों ने गा कर बद किया था—

रँडुआ तो रोवै आधी राति—

सुपने में देखी कामिनी

अपमान से कन्हाई का पुरुषत्व क्षण भर को विषधर साँप की तरह बदला लेने की स्पर्धा से भर गया। क्यों है वह आज ऐसा कि बिरादरी में लोग उसके पास पैसा रहने पर भी उसकी इज्जत नहीं करते? सब उसे देख कर हँसते हैं। और यह चंदा! जो कुल दस बारह आने लाता है उसी में गिरस्ती चलाता है उसको गौता भी है बुलावा भी है उसके गीत भी हैं

क्योंकि वह बिजार नहीं है। उसके घर है उसकी बात है एक गिरस्त की बात। जिसमें दुनियादारी की समझ है। उसका कोई था ही नहीं जो उसका व्याह करता। जैसे वह तो आदमी ही न था। तभी भी सब अपने अपने में लगे थे आज भी वही। कन्हाई व्याकुल सा बिस्तर पर बैठ गया। आकाश में बादल गरज रहे थे। अभी उसकी आयु ही क्या थी? पैंतीसवाँ ही तो था। तब शहर में प्लेग फैला था कन्हाई घुटनों चलता था। आज वह अकेला रह गया है। जैसे उसका कहीं कोई नहीं। उसके द्वार पर न सौना सरबन कुमार है न आँगन कोई लिपा पुता ही। खुद ही जब ऊब जाता है सोचता है घर साफ करे किंतु वह औरत नहीं है। लुगाई का एक काम करते-करते ही आँखें फूट चलीं। चूल्हा फूँकना लोग का काम नहीं।

क्या नहीं किया उसने चंदा के लिए? क्या था उसके घर? आज

तो लाला छैला बन गये हैं ? कैसी माँग पट्टी काढ़ के फेंटा बांधना आ गया है। बेटा के पास अधेली भी नहीं। बड़ा सतूना बांधा है।

उपेक्षा से उसके होंठ टेढ़े हो गये। कन्हाइ को याद आया। उसके पास पैसा है। वह भी ब्याह करेगा। चंदा तो उसे लूटे जा रहा है। उसके गधा की लीद तक उसकी अपनी नहीं। क्या करे वह उसका ? आती है वह हरम्पा फलो और ले जाती है बटोर कर। लेकिन कौन धन जमा कर लेगी ? उसके चंदा की रोजी ही क्या है ? वह तो इज्जतदार है। परसों उसने बिभू की जमानत दी है। दूकान है दूकान। कैसी लड़ती है चंदा से दिन भर और रात को

कन्हाइ का ध्यान फलो पर केन्द्रित हो गया। कासे के हैं सब। बोरला तो कड़े तो खँगवारी तक। वह चाँदी के मँगवा सकता है। फिर उसे वह दृश्य याद आया कि कैसे वह भीतर बिना खासे घुस रहा था चंदा के घर में और फलो बठी चक्की पीस रही थी। यौवन का वह गदराया स्वरूप याद आते ही कन्हाइ हार कर लेट गया। किंतु वह क्यों अकेला रहे ? चंदा को ही ऐसे सुख से रहने का ऐसा क्या हक है ? जन्म हुआ तब से उसे कभी सुख चैन नहीं मिला। वह दूसरों के लिए कर करके मरता गया और लोग बाग अपना अपना घर भरते गये। किसी ने यह भी पूछा कि भइया कन्हाइ ! तेरे भी कुछ सुख दुख हैं ? कोइ नहीं। सब अपने अपने मतलब के।

कन्हाई का चंदा के प्रति विद्वेष मुखर हो गया। अनजाने ही विरोध जाग उठा। कल उसके बच्चे होंगे तो क्या मेरा नाम चलेगा ? बूढ़ा हो जाऊंगा तो खाट की अजमान तक कसने कोई नहीं आयेगा। अपने फिर भी अपने हैं पराया तो पराया ही रहेगा

बादल आपस में टकरा गये। घोर वर्षा होने लगी। कन्हाई तड़पता सा करवट बदलता रहा। सामने अंधकार में फलो आकर खड़ी हो गई। पुरानी घृणा ने फिर आघात किया। वह स्वयं ऐसी है

नागिन। जेठ से आँख मिला के बात करना क्या खल है? कैसी आती है बात बात पर बड़ी रुठक्को बाप के घर में उसके कुछ है नहीं नहीं तो पीहर भाग भाग जाती। बहू रखना भी आसान काम नहीं है। कहीं गधे न्रो के आराम नहीं किये जाते। मैं ऐसे कब तक दोना के समझौते करता फिरूँ। चंदा भी कोइ आदमी में आदमी है?

फिर वह मुस्करा उठा।

कौन नहीं जानता चंदा लुगपिटा है। लुगाइ की ठसक देखो मालक तो गधा है। वह चमक चौदिस वाली डबल बचा नहीं कि फौरन खोम्चावाला बुलाया और चाट उड़ा गयी।

मुझे क्या मालूम नहीं कि वह चंदा से बचा बचा के खाती है चोरी करती है।

फिर वही चञ्चल आँख अँधेरे में चमक उठीं। कन्हाइ के सीने पर किसी ने कटारों की जोड़ी भाक दी। आस्मान में जोर से बिजली कड़क उठी। अरे काम तो काकर माटी के खाने वालों को सताता है फिर दूध मलाई वालों की तो बात ही और है। चंदा बेटा का गरूर तो देखो! अरे तुझे ही देखूँगा। तेरी मैया ने मेरा घर तबाह किया था।

कहीं दूर बिजली बड़ी ज़ोर से कड़क कर गिरी। कन्हाई जागता रहा।

भोर हो गयी लेकिन आकाश में बादल छाये रहे। एक सन्नाटा समस्त बस्ती में समान रूप से घहर रहा था। कभी-कभी सड़क पर भूँकते कुत्तों के शोर से वह ह की मगर घनी तह टूट जाती थी और जैसे जैसे स्वर पीछे खिचने लगते थे वही निस्तब्धता अपना दबाव डालने लगती थी। हवा ठण्डी थी हल्की हल्की बूंदाबांदी हो रही थी। समय काफी हो गया था। दफ्तरों और नौकरियों पर जानेवाले सवेरे ही अँधेरे में से ही अपनी तक़दीर को कोसते जा चुके थे। सड़क पर भी गाँवों की सी हल्की तन्द्रा छा रही थी। गली में चारों तरफ़ कीच ही कीच

हो गयी थी। कन्हाइ की आँख खुल गयी। उसने सुना आँगन में कोइ औरत चल रही थी। बिछिया की हल्की आवाज उसके कानो मे उतर कर दिल में समा गयी। वह एक दम उठ बैठा। बाहर निकल कर देखा फूलो चुपचाप उसके गधा की लीद जमा कर रही थी। उसको देख कर उसके शरीर में नशा सा फैल गया। पास जाकर कहा—यह चोरी कर रही है बहू?

फूलो ने घूघट नहीं खींचा। मुंह उठा दिया। गेहुए रङ्ग में दो मासल आँखें थीं जिनमें से रात का खुमार अभी भी बिल्कुल मिटा नहीं था। देखा और धीरे से बोली—चोरी काहे की जेठजी। वे तो अंधेरे ही लदाइ लिए गधा लेकर चले गये। अब बरसात भी तो लग गयी है। जो हाथ लगे उसी को बटोर लू। कंडे बना लूगी कुछ तो काम निकले गा ही।

कन्हाई प्रसन्न हुआ किंतु प्रकट नहीं होने दी उसने वह चंचलता। निरातुर स्वर से कहा—क्या? चंदा गिरस्ती नहीं चला पाता?

अपना अपना भाग है जेठजी। इसमें कोइ क्या करे? मरद जिसका जोग होगा लुगाई उसकी पाँय पै पाँय धरके बैठेगी।

तुझे बडा दुःख है बहू! यह प्रश्न न होकर एक वक्तव्य के रूप में इतनी निश्चयात्मक ध्वनि में कन्हाइ के मुख से निकला जैसे उसे स्वयं इस पर पूरा विश्वास हो और वह अपनी बात का अब पीछे नहीं लेगा। फूलो की आँखों में पानी भर आया। उसने मुँह फेर कर आँख पाछ लीं। कन्हाइ ने उससे कहा—जो चाहे माग लिया कर मुझसे। लाज न करियो। अपना ही घर समझ। चंदा तो निखट्टू है निरा बुद्धू समझी? तेरा ही है सब कुछ खा पी मेरा और कौन है?

ब्याह क्या नहीं कर लेते? फूलो ने टोक कर पूछा।

याह? कन्हाई ने ऊपर देखकर कहा—ब्याह करके क्या होगा। मेरे तो परमात्मा ने सब दिया। तू फिकर न कर। मेरे रहते कोई तेरा

बाल भी बाँका नहीं कर सकता। यहां रह तो भी डर नहीं। कन्हाई का नाम बिरादरी में एक है। तेरे लिए उसका सब कुछ हाजिर है।

फूला ने आँख टेढ़ी करके कहा—बिरादरी क्या कहेगी? जात भाई क्या कहेंगे? मेरा बाप क्या कहेगा? और तुम्हारे भैया की कौन सुनेगा? जैसे फूलो ने सात पेड़ एक ही बार ही बाण से बेधने की कड़ी शर्त सामने उपस्थित कर दी थी।

कन्हाई ने निडर होकर कहा—बिरादरी कुछ नहीं कर सकती। हुक्का पानी बंद करेंगे तो जात भाई देखेंगे कि कन्हाई बीड़ी सिगरेट पियेगा। तेरे बाप को क्या मतलब? वह तो एक बार पैर पूज चुका। और चंदा की हैसियत ही क्या कि मेरे सामने खड़ा हो? तुझमें हिम्मत होनी चाहिये।

फूलो ने अविश्वास से पूछा—दगा तो नहीं दोगे? मैं कहीं की भी नहीं रहूंगी?

कन्हाई ने हाथ पकड़कर कहा—सौगंध है गङ्गाजली की। परजापती का बेटा हूं तो धोखा नहीं दूंगा। आज से तू मेरी है। यह घर अब तेरा है। उस भिखारी से तेरा कोई नाता नहीं रहा। रह हकूमत कर। मैं चंदा नहीं हूँ जो मिट्टी डालते में बात बात पर बाबू लोगों के जूते खाऊं और हँस के चुप रह जाऊँ। लौट के तो नहीं भागेगी?

सौगंध है मेरे एक बालक न हो जो तुम्हें छोड़कर जाऊं।

कन्हाई ने आनन्द के आवेश में उसका हाथ जोर से दाब दिया और कोठे में घुसकर द्वार बंद कर लिया। बूँदें फिर पड़ने लगी थीं। आसमान साफ होने का नाम ही न लेता था जैसे पृथ्वी चारों ओर से घनी उसासा पर उसासें छोड़ रही थी।

बिजली की तरह बात बस्ती के वातावरण पर कौंध गयी। चंदा ने जब लौटकर घर खाली देखा और देखा कि चूल्हा बिल्कुल ठण्डा पड़ा है तब उसका माथा ठनका। सोचा शायद पीहर चली गयी है।

बिना किसी से कहे अपनी सुसराल चल पड़ा। दो दिन बाद जब वहाँ से लौटा तो पग भारी थे हृदय में घृणा और क्रोध की भीषण आग लग रही थी। इधर कुंजो ने आते ही खबर दी—लाला! कहाँ चले गये थे रूठकर? बहू बिचारी किसके जिम्मे छोड़ गये थे? लाचार कन्हाई ने दया की और बिचारी के दो टूक खाने का तो सिलसिला लगा।

चंदा के पैरों के नीचे से जमीन खिसक गयी। सीधे जाकर कन्हाई के आँगन में जा बैठा। फूलो ने भीतर से देखकर कहा—क्यों आये हो?

क्यों आया हूँ? चंदा ने तड़प कर कहा—हरामजादी! यहाँ आ गयी तू और मैं तेरे पीछे जहान ढूँढ़ता फिरा?

कन्हाई घर पर था नहीं। दूकान गया था फूलो ने भीतर से ही कहा—फिर आना जब वे आ जाय और नहा लोग कहेंगे दिन दहाड़े पराये मरद घर में बैठे हैं।

चंदा के मुह की आवाज मुँह में ही रह गई। क्षण भर वह वज्राहत सा किंकर्त्तव्यविमूढ़ कुछ भी नहीं समझ सका। फिर स्वस्थ होकर कहा—अब चल यहाँ क्या कर रही है? रोटी एक दे।

फूलो निलज्जता से हँसी कहा—अब मैं तुम्हारी नहीं हू समझ? जब तुम्हारे भैया लौट आय तो उनसे बात करना।

चंदा नहीं उठा। कन्हाई के घुसते ही फिर लड़ाई शुरू हो गयी। जब जूता पैजार तक हो गयी तब और कोई चारा न समझकर फूलो घूँघट काढ़ के दोना के बीच में आकर खड़ी हो गयी। उस समय काफी शोर-गुल सुनकर कितने ही बस्ती के बड़े छोटे एकत्रित हो गये। बच्चों ने व्यर्थ ही युद्ध का वातावरण लाने को खूब हल्ला किया। कन्हाई और चंदा दोनों छूट छूटकर एक दूसरे पर झपटते थे। चंदा जवान था इसी से लोग भय से उसे पकड़ लेते थे और स्वाभाविक ही था उसका अधिक क्रोधित होना। इसी बीच में कन्हाई दो एक मार जाता था। इस बीच बचाव की हरकत में चंदा काफी पिट गया क्योंकि एक चोट

भी दस के बीच में बीस चोटों के बराबर है। अपमान से विह्वल होकर चंदा रोने लगा। आँसू देखकर यद्यपि लोगों के हृदय में दया भाव उत्पन्न हुआ किंतु स्त्रियों ने ठिठोली कर दी। कैसा बालक है जो जार जार रो रहा है?

चंदा लौट आकर बड़ी देर तक घर पर रोता रहा। सब जानते थे। किसी ने कहाइ से कुछ नहीं कहा। क्या सब की आँख फूट गयी हैं? बिरादरी के कान फूट गये हैं? उठा और चौधरी पन्ना मुरली के घर की चौखट पर जा बैठा। चौधरी कहीं से सफेदी करके लौटे थे। हाथ पैरों और गालों पर सफद सफेद छींटे दिखाई दे रहे थे। सुन तो चुके ही थे। फिर भी कहा—कह चंदा कैसे आया है?

चंदा का गला रुँध गया। लाज ने जैसे उँगलियाँ गड़ा दीं। कैसे कहे कि उसके जीते जागते लुगाई दूसरे के जा बैठी? वह मरद ही क्या जिसमें इतना भी जोर नहीं कि औरत उसके कहने पर चले? मरद तो वह कि निगाहों पर तैयर के पाँव उ । पलक थम जाय तो उठा कदम थम जाये। किंतु अवरोध अधिक नहीं टिका। दौड़कर चौधरी के पाँव पकड़ लिये। चौधरी ने संदिग्ध दृष्टि से देखकर गंभीरता से पीढ़े पर बैठते हुए हुक्का सम्भाला और पूछा—तो कुछ कहेगा भी कि रोये ही जायेगा? क्या आफत टूट पड़ी ऐसी?

चंदा ने कहा—दादा नाक कट गयी। इज्जत धूल में मिल गयी।

चौधरी ने विस्मय से कहा—अरे! सो कैसे?

बहू तो भैया के जा बैठी।

चौधरी को झटका लगा। पूछा— सच? यह कैसे?

क्या बताऊ? गरीब आदमी हूँ। सुबह ही निकल जाता हूँ। सभा को आता हू। दिन भर वह घर में रहती है भैया रहते हैं फुसला लिया बिचारी को। मिठाई विठाई खिलाते रहे। अब दादा गिरस्ती सँभालने वाले का ही हाथ तंग होता है। अकेले बिजार तो सड़क पर ही

खाने को पा जाते हैं। सो चटाने को पैसे की क्या कमी? गरीबी तो तब है जब रोज का बोझ है?

चौधरी ने सुना। सिर हिलाया। कहा कुछ नहीं। चंदा ने फिर कहा—दादा पंच परमेसुरों के रहते प्रजापतियों में ये अधरम होगा?

पञ्चायत बुलायेगा? चौधरी ने शंका से पूछा। बड़ा खरचा होगा और हारने पर दण्ड भुगतान करनी पड़ेगी।

हारूँगा कैसे चौधरी? मैं क्या गलत कह रहा हूँ? मेरी लुगाई है ब्याहता है मैं तो उलटे रुपये लूँगा। मेरे जीते जी दूसरे के पास जा बैठी है। और छोटे की बड़े भाइ के घर बैठने की कोई रीति नहीं बड़े की छोटे के यहाँ बैठने की तो रीति भी है। कोइ दिल्लगी है? चंदा ने सिर उठा कर कहा। चौधरी ने फिर भी उत्तर नहीं दिया। उन्होंने गम्भीरता से कहा— तेरी मर्जी।

चंदा उठ चला। राह में याद आया। खरचे को पैसा कहाँ है। दो महीने का तो घर का ही किराया चढ़ा हुआ है। अब तक तो कैसे भी खुशामद से काम चल गया लेकिन अब के कैसे भी मकानदार राजी नहीं होगा। कहेगा दिल्लगी हो गयी। खैर तब ब्याह की बात थी धेली पैसे की बात हाथ रहा न रहा अब उसके पास तो कुछ था नहीं। वही मजूरी के दस बारह आने आये जो सो उन्हा में चार आने खायेगा बाकी बचायेगा लेकिन उससे भी कितने दिन काम चलेगा? ऐसा क्या बच जायेगा? फिर विचार आया अभी रुपया लगा दूगा। एक गधा बेच दू। पञ्चायत भी हो जावेगी। किराया भी चुक जायगा और फिर तो कन्हाई को रुपये भरने ही पड़ेंगे। फिर फूलो भी नहीं रहेगी। अपने मस्ती का खरच चलेगा। और जो फूलो लौटी तो कन्हाई दण्ड भुगतान देगा और अब के फूलो से भी नौकरी करवा लूँगा। तब घर ठीक से चल पड़ेगा। अबके तो हरामज़ादी को जूते की नोंक के

नीचे रखूगा ऐसा कि याद करे। मैंने ही दुलार कर करके बिगाड़ दिया उसे।

उधर कुञ्जी और अनेक स्त्रियों में ठिठोली हो रही थी। लजमन्ती ने कहा—ऐ मैना एक आँख का कर बैठी। दो आँखों से ऐसी क्या दुश्मनी निकली?

कलदार की ठसक है बेटी कलदार की चम्पी ने कहा और हाथ मटकाये। कुञ्जो अपने ग्यारव बच्चे को नैठी दूध पिला रही थी जो अपने सबसे बड़े भाइ से लगभग सत्ताइस वर्ष छोटा था। बैठे ही नैठे मुस्कराई और गा उठी—

जैसे देवरिया मलूक तसे होते बालमाउ—इसी दिल्लगी के इस व्यापार में एक कौतूहल था एक ईर्ष्या की अभिव्यञ्जना थी। सब जानते थे फूलो बदमाश थी लेकिन चंदा के गरीब होने के कारण किसी बात पर पक्का निर्णय नहीं ठहरता था।

शाम हो चुकी थी। अँधेरा गहरा हो गया था। बस्ती घेरे में डूब गयी थी। किसी किसी के ओसारे में दिया जल रहा था। औरत और मरद आँगना में वैठे बात कर रहे थे हुक्का पी रहे थे। औरत रोटी बना चुकी थीं। मरद खा चुके थे। अब रात हो गयी। दुनिया की रोशनी सूरज है। वही चला गया तो फिर रात से होड़ किसलिए? कैसे हुआ यह? रासन फलाने के ब्याह फलाने का दहेज आदि अनेक बातें हैं जिन पर वे बहस करते हैं और कच्चे मकानों में चुपचाप सो जाते हैं। उनके गधे चुप खड़े रहते हैं कभी सोते हैं कभी जागते हैं उनके सोने जागने का भेद भी अधिक स्पष्ट नहीं।

चौधरी पञ्च ने कन्हाई के घर में प्रवेश किया। उस समय कन्हाई कोठे से बाहर निकल रहा था। फौरन आगे बढ़कर कहा—आओ दादा आओ।

पीढ़ा डाल दिया। हुक्का भर कर फूलो पास में ही घूंघट काढ़

कर धर गयी। चौधरी ने टेनी आँख से उसका वह गदराया आकार देखा और हुक्के में कश मारते हुए वे सब समझ गये। कन्हाई ने इधर उधर की बात की। फिर उठकर भीतर से एक चीज लाया। चौधरी ने देखा। हँसकर कहा—अरे इसका क्या होगा?

किन्तु कन्हाई ने कहा—तो बात ही क्या है दादा? कौन पराये हो?

और खोल दी ठर्रे की बोतल। अब तो चौधरी ने कुल्हड़ में मुँह लगाते हुए कहा—मँहगी हो गयी है। हो गयी है न?

दादा लड़ाई है जे। कौन महगा नहीं हो गया है? हम नहीं हुआ कि तुम नहीं हुए? अब तो मौत का इतना खरचा नहीं जितना जिन्दगी का।

दोनों हँसे। हल्का नशा चढ़ चुका था और अब खोपड़ी में घोड़े की-सी टाप लगने ही वाली थी। ठर्रे की महक में कन्हाई ने पूछा—दादा तुम्हारा ही भरोसा है?

चौधरी ने झूमते हुए कहा—अरे काहे की फिकर है तुझे? कन्हाई ने हर्ष से कुल्हड़ फिर भर लिया और चौधरी के हाँ हाँ करते भी उनके कुल्हड़ में आधी बोतल खाली कर दी। और उसके बाद चेतना के सत् पर वही अन्धकार छा गया जो बाहर एकाग्रचित होकर तड़प रहा था।

पंचायत बड़े जोर शोर से जुड़ी। चारों तरफ वही एक चर्चा थी। बस्ती के सारे मरद कुम्हार आकर इकट्ठे हो गये। चौधरी चौतरे पर आ बैठे। हुक्का हाथों हाथ घूमने लगा। चौधरी ने पहले कश लगाये और हुक्का सरका दिया। एक ओर कन्हाई खड़ा हुआ था। उसके शरीर पर सफेद अगरखा साफ धोती थी और साँझ होने पर भी आँखों का खोट छिपाने को हरा चश्मा लगा हुआ था। फूलो घूँघट काढ़े बैठी थी। दूसरी ओर चन्दा था। मैली धोती मैली फतूही और मैली ही हल्की सी नखदार टोपी मशीन से कटे बालों पर चिपक रही थी।

चौधरी ने गम्भीरता से पूछा—तुमने क्या किया ?

चन्दा ने कहा—पंच परमेसुर सुन। चौधरी महाराज ने पूछा है—मने क्या किया ? सो कहता हू। बड़े भैया ने छोटे की बहू घर डाल ली है। वह उसकी बेटी के बराबर है।

चौधरी ने रोक कर कहा—सो हम में भेद नहीं है चन्दा। बड़ी जातों में बड़े की बहू माँ समान है। हमारे तो यह कायदा नहीं। यह बामन-छत्री जात की बात है। हम तो नीचे कहे गये हैं। और सुना ?

चंदा का पहला बाण पथर से टकराया फलक टूट गया। शिकारी विह्वल हो गया। उसने फिर धनुष पर बाण निकाल कर चलाया। कहा—मेरे जीते जी दूसरी ठौर जा बैठी है मुझे हरजाना मिल जाना चाहिए।

चन्दा बैठ गया। पंचों के सिर हिले कानाफूसी हुई कि कोलाहल से जगह भर गयी। चौधरी ने फिर कहा—कन्हाइ बोलो तुमने लड़की को घर कैसे डाल लिया ?

कन्हाई ने नम्रता से कहा— चौधरी महाराज न्याय करें। घर में भूखी नार आयी। मालिक रोटी तक नहीं जुटा सका। तब मैंने देखा घर की बैयर डगर डगर ठोकर खायेगी। सो कहा—रह तेरा घर है। मुझे कौन छाती पर बाँध के ले जाना है ?

चौधरी ने कहा—पंच सुन। फूलो कहे कि कन्हाई ने ठीक कहा। क्या चन्दा के घर तुझ खाना नहीं मिलता था ?

फूलो ने स्वीकार किया। चौधरी ने कहा—पंच बताय। लुगाई तब तक ही रहेगी जब तक मरद खाना देगा भूखी मरने को तो नहीं ?

नहीं पंचों ने एक स्वर उत्तर दिया।

कन्हाई ने फिर कहा—चन्दा के फलो के बाप ने जब ठौर कर दी तो चंदा ने वादे के जेवर नहीं दिये।

चन्दा गरज कर बोला—यह झूठ है। मैंने कोई वादा खिलाफी नहीं की।

चौधरी ने रोक कर कहा—फलो बता कि किसने ठीक कहा ?

फलो ने फिर इंगित से कहाड़ की बात को ठीक साबित किया।

चन्दा घृणा से विक्षुब्ध हो गया। चौधरी ने कहा—और तो बात साफ हो गयी। जैसे बड़े की छोटे ने की तैसे छोटे की बड़े ने की। जेवर नहीं दिये वादाखिलाफी की। रोटी नहीं दी सो वह क्या रहती ? पंच बताय किसका कसूर है।

पंच फिर परामर्श करने लगे।

चन्दा ने उठ कर कहा—पंच परमेसुर की दुहाई। चौधरी भगमान के औतार हैं। मैं गरीब हू जैसी रूखी सूखी मैंने खायी तैसी उसे खिलायी। घर गिरस्ती में मरद के पीछे लुगाइ चलती है। बताय मैंने क्या दोष किया ?

फिर पंच विचार में पड़ गये। चौधरी ने सब शांत होने पर फिर कहा—चन्दा रुपये माँगता है कि उसके जीते जी बहू ने दूसरी ठौर कर ली। अगर उसने दूसरा ब्याह करके फलो को छोड़ा होता तो जब तक फलो दूसरी ठौर नहीं कर लेती तब तक उसका महीना उसे बाँधना पड़ता। सदा की रीत है कि चन्दा को रुपया मिलना चाहिए। पंचों का न्याय हो। भूखी मारी या न मारी वह खुद गरीब है। बेटी बाप ने देते वखत क्या नहीं सोचा। जैसा खुद खाया तैसा उसे खिलाया। लेकिन ब्याहता है उसकी फलो। फूलो रजामन्द नहीं कि ब्याह करके जनम भर भूखी मरे। वह ठौर छोड़ गयी। जो खाने को दे जो पालन करे वही भरतार। पंच कहें। रुपया लेने का चंदा का हक है या नहीं ?

फिर कोलाहल मच उठा। चौधरी ने तो जैसे हाथ धो लिये। उन्हें अब निर्णय को सिर्फ दुहरा कर सुना देना था। फूलो अभी तक चुप खड़ी थी। बाजी कमजोर पड रही थी। उसे यह असह्य था। इससे तो

वह कुलटा साबित हो जायगी। बैठ गयी सो बुरा नहीं पर यह रुपया देना तो भुगतान है। उसने भरी पञ्चायत में आगे बढ़ कर कहा—चौधरी भगवान् हैं। पञ्च परमेसुर हैं। लुगाइ मरद की है मगर जो मरद ही न हो उसकी कोइ लुगाई नहीं है।

सबने विस्मय से सुना। सच ठीक कहा था। ब्याह हो जाने से ही क्या? पुरुषार्थहीन पुरुष को कोई अधिकार नहीं कि वह स्त्री को दासी बना कर रखे।

पञ्चायत उठ गयी। चन्दा पर पच्चीस रुपये दण्ड लगाये गये जो रोष से उसने वहीं फेंक दिये और हार कर लौट आया। आज उसे कहीं मुंह तक दिखाने की जगह न थी। अब उसका कहीं ब्याह नहीं हो सकता। भरी पञ्चायत में फूलो ने उसकी टोपी उछाल कर पैरों तले कुचल दी थी। यह ऐसी बात थी जिसमें फूलो की बात अंतिम निर्णय थी।

कन्हाई फूलो को लेकर लौट आया और रात को कन्हाइ और चौधरी ने फिर से ठर्रे की बोतल खोली और दोनों मस्त होकर पीने लगे। जब बहुत रात हो गयी तब चौधरी लड़खड़ाते हुए चले गये। फूलो चुपचाप बैठी थी। वह न जाने क्या क्या सोच रही थी। और कन्हाइ नशे में आँगन में औंधा पड़ा था।

दूसरे दिन शाम को मकानदार ने चन्दा का किवाड़ खटखटाया। चन्दा ने चुपचाप उसके हाथ पर किराया रख दिया। वह झूम रहा था। उसके मुंह से दारू की बू आ रही थी। मकानदार चुपचाप लौट गया।

चंदा लौट कर फिर पीने लगा और बकने लगा—बेटा कन्हाई छिनाल तो छिनाल ही रहेगी। कुत्ते की पूछ क्या सीधी हुई है? तेरी बहार भी कै दिन की है? बेटा अब गिरस्ती पड़ी है अब दो दिन बाद तेरे भी खरच देखूगा। हाथ पाँव ढीले हो जाएगे पर मैं करूँगा मजे

बेटा! चटाने को तो मेरे पास भी पैसे हो जाएंगे समझा? भगवान् समझेगा तुमसे पापी!

और वह देर तक बकता रहा जोर जोर से सुना कर बकता रहा। कन्हाई ने सुना और संदिग्ध दृष्टि से फूलो की ओर देखा। उसका हृदय भीतर ही भीतर काँप उठा। फूलो समझ गयी चूनर के कोने में बंधे बीस रुपये खोल लिये। पाँच पञ्चायत में लग गये। बीसों रुपये आँगन में खड़े होकर चन्दा के आँगन में नीच की जैर पर से फेंक दिये और कहा—भूखा मत मर। तेरे धन से सुरग नहीं जाऊंगी। समझा? ऐसे चटाने को बड़ा मक्खी का छत्ता लगा रखा है न?

कन्हाई ने सुना रुपये चन्दा के आँगन में खन करके गिरे और बिखर गये किंतु चंदा उस समय नशे में बेहोश पड़ा था। उसे कुछ भी मालूम नहीं पड़ा।

फूलो आगे बढ़ आयी गर्व से कन्हाई की ओर देखा और एक चञ्चल हंसी बरबस ही अंग अंग को गुनगुना ती उसके होठों पर काँप गयी। कन्हाई ने सिर झुका दिया। उसने मन ही मन अनुभव किया फूलो बहुत जवान थी और वह भाटे पर था।

काई

पति का चुनाव करने के लिए दुनिया की आम बातों को जानने की जरूरत होती है। डॉक्टर लक्ष्मण का यह कहना सुधा को बहुत जंचा। डॉक्टर लक्ष्मण अभी अपनी प्रक्टिस जमाने की ही कोशिश कर रहे थे। उनको अक्सर शिकायत रहती कि वे इङ्गलैण्ड नहीं जा सके। लड़ाई ने उनके सब अरमानों को एक धाँय से एक गरज से बिल्कुल नेस्तनाबूद कर दिया था। और अब वह कहते समाज का सुधार करना

पुरुषों के हाथ में उतना नहीं है जितना स्त्रियों के । स्त्रियों की अङ्गरेजी अच्छी होनी चाहिये । जैसे हँसने की बजाय मुस्कराने से औरतों की खूबसूरती में चार चाँद लग जाते हैं हिन्दी की बजाय अङ्गरेज़ी से वही काम निकलता है ।

वे कहा करते— आज हिन्दुस्तान में जो ज्वार आया है उसमें नारी ने भी अपनी चूड़िया में बेड़ियों की झनकार सुनी है । यह समझना भूल है कि वह आदम और हव्वा की तरह ईश्वर की पहली रचना है वह भी क्रमागत विकास का एक स्वरूप है । फिर वे जोश में आकर कहते नारी को एक देवी समझता है एक राक्षसी । ठाकुर ने उसे अर्द्धनारी अर्द्धस्वर्गीय माना है । नारी के मुंह पर एक हंसी रहती है लेकिन भीतर एक अघड़ और रहस्य । वह आज तक नहीं समझी जा सकी ।

और नतीजा निकाल कर वे कहते थे— आदमी बेवकूफ है औरत पागल ।

इसको सुनकर सब अचरज से देखते थे और सब हसते थे लेकिन डॉक्टर अपने विचारों पर दृढ़ थे ।

सुधा ने डॉक्टर को परले सिरे का पहुंचा हुआ माना और अङ्गरेज़ी का अखबार पढ़ने लगी । एक से शुरू किया और नौबत यहाँ तक पहुँची कि लायब्ररी में जाकर वक्त को पूरा करने के लिए दर्जनों पर नज़र गिरने लगी ।

पब्लिक पार्क के बाँये तरफ के अर्द्धचन्द्राकार पेड़ों के पीछे पीले रङ्ग के उस पुराने ज़माने के गिरजे जैसे पुस्तकालय में उसके आने जाने से पहले के मुकाबिले में रौनक बढ़ गयी ।

सुधा पढ़ती और फिर शब्दों से लड़ती । पहले ही दिन चलते वक्त लायब्रेरियन ने नम्र शब्दों में निवेदन किया— कृपया अखबारों में निशान न लगाया कीजिए । आपको अपनी पसंद दूसरों पर जताने की

इच्छा हो तो मुझ मुह ज़बानी बता दिया करें। हो सकता है जो खबर या बात आप बहुत महत्त्वपूर्ण समझ वह वास्तव में ऐसी न हो।

सुधा ने आँखों को संकुचित करके घूरा और माफ कीजिए मुझे मालूम नहीं था कहकर अपना चमड़े का बैग उठा लिया और बाहर चली आयी।

किन्तु अखबारों का पढ़ना जारी रहा। डॉक्टर लक्ष्मण अपनी राय बताते हुए कहते कि रूमानिया का तेल ही इस लड़ाई का असली कारण है। न रूमानिया में तेल होता न हिटलर ऑस्ट्रिया पर हमला करता न अंगरेज़ों से निकल जाने पर रूस ज़ोर देता।

तेल! वह गम्भीर होकर कहते— तेल दुनिया की एक नायाब चीज़ है। जो चीज़ चिकनी हो या आग पकड़ ले वही तेल है। तेल कई तरह के होते हैं मगर तेल नहीं तो कुछ भी नहीं। तेल से ही दुनिया चलती है तेल ही से आपका बदन काम करता है

तब इन्टर की विद्यार्थिनी सुधा मन में विस्मय करती कि डॉक्टर कहाँ से बात शुरू करता है और कहाँ उसका अन्त होगा यह कोई नहीं समझ पाता लेकिन ऊपर से कहती— डॉक्टर तेल न कहिए सत् कहिए तो कुछ हर्ज होगा?

नहीं लेकिन डॉक्टर ने बात काटकर कहा— सत् को स्वयं कोई वस्तु नहीं तुम असल में शक्ति और चालन में सुविधा देने वाली वस्तु में भेद कर रही हो

नहीं डॉक्टर! वह कह उठी मैं आपका मतलब समझ गयी। आपने ठीक कहा है। मैं तो उसी बात को सरल शब्दों में समझने की कोशिश कर रही थी।

तब डॉक्टर सन्तुष्ट-से कह उठे— तब तो तुम ठीक कहती हो। तुम बिल्कुल ठीक हो।

और लम्बे चेहरे का हरिश्च- जो अपने को सबसे ज़्यादा अक़्लमन्द समझता दोनों की बात सुन सुनकर मुस्कराता। वह कम बोलता और वास्तव में इस मौन ने उसे समाज में काफी स्थिरता दे दी थी। वह दिल में सवाल जवाब करता था और सोच लेता कि इस बात का यह सबसे अच्छा उत्तर है लेकिन यह बात हमेशा उसे बाद में सूझती और गाड़ी छूटने के बाद कौन नहीं चाहता कि वह भी मदरास चला जाए खास तौर पर अगर वहाँ तक का टिकट भी हो।

हरिश्चन्द्र गोरा और सजीला युवक था। उसे सदा ही बिल्कुल नपे तुले फैशन से लैस देखकर लोग उसे एक धनी नवयुवक समझते थे। वह कौन था क्या था यह बहुत कम को ज्ञात था। जिस दिन सुधा उसके बँगले पर गयी थी उस दिन केवल उसकी माँ ने उसका स्वागत किया था। एक बड़ी बहिन थी लड़ाई में वैक आई' बन गयी थी और हरिश्चन्द्र उसकी बात कहकर हस उठा था। सुधा कुछ भी नहीं समझी थी। उसने विस्मय से देखकर कुछ सोचा था किन्तु फिर डूबते सूरज की सुनहली किरनों में जब पेड़ों की लम्बी लम्बी छायाओं से घिरे वे चाय पी रहे थे क्षण भर को सुधा ठिठक गयी थी। उसने पहली बार देखा था कि हरिश्चन्द्र देखने में आकर्षक था। इससे अधिक उसने कुछ नहीं सोचा। रात को जब वह बहुत देर तक पढ़ती उसने देखा अवश्य था कि कैसे उसके घर के सामने जो स्कूल की अविवाहिता मास्टरनी रहती थी बत्ती बुझाकर अँधेरे में टहला करती थी अकेली अकेली-सी और कभी-कभी कोई उसके पास रात के एक बजे आ जाता था। सुधा सोचती एक बजे तक प्रतीक्षा! और जैसे उसके जीवन में वह पहलू नहीं था वह झट खिड़की से हट जाती और उसकी निगाह अखबार पर जा पड़ती। दुनिया का हर एक देश अपनी स्वतन्त्रता के लिए युद्ध कर रहा है और हिन्दुस्तान में अभी तक ये मास्टरनी? तभी उसे डॉक्टर की बात याद आती कि कोई भी देश तभी तक गुलाम रहता है

जब तक उसके रहने वाले स्वयं पूरी तरह से आज़ाद होने के योग्य नहीं हो जाते। बात उसके दिमाग में गूँजती और फिर डॉक्टर का अकेला जीवन उसके सामने चलने लगता। डॉक्टर का छोटा सा मकान जिसका वह पन्द्रह रुपया किराया देता था। मकानदार की चौबीसों घंटे की— लड़ाइ लड़ाई तक की—ईश्वर से केवल एक प्रार्थना थी कि डाक्टर कूँच कर जाय और वह महगायी और जगह की कमी का फायदा उठाकर मकान को कम-से कम चालीस रुपये में उठा दे जो अपनी तरफ से वह करने में असमर्थ था—चूंकि सरकार के भारत रक्षा-कानून में वही बात जनता के लिए फायदेमन्द साबित हो सकी थी। सुधा घृणा से नाक सिकोड़ लेती। कैसे हैं ये लोग जो अपनी नीचता को अच्छे शब्दों में सजाकर कहने से बाज नहीं आते! और घड़ी में दो घंटे बजते उनकी प्रतिध्वनि बनकर जेल का ... बजता जिसकी गूज के समाप्त होने के पहले कहीं और से ढन ढन की आवाज आती और क्षण भर शहर में जैसे घन्टे ही घन्टे बजते और सुधा पैरों पर से लिहाफ गले तक खींचकर आँख बन्द कर लेती। तारे रात में ठंड से सिकुड़ कर कांपने लगते ठंडी ठंडी हवा बहती रहती और थोड़ी देर बाद मीन और आसमान दोनों पलकों की तरह मिलकर अन्धकार महाअन्धकार में लय हो जाते।

(२)

दुनिया कभी सत्य को नहीं पहचान सकती क्योंकि अपने अपने स्वार्थों में पड़े मनुष्य कभी भी अपने दायरों के बाहर की बात नहीं सोच सकते। डॉक्टर ने धूप में कुर्सी खींचकर बैठते हुए कहा।

हरिश्चन्द्र सिगरेट का धूआ उगलते-उगलते कह उठा— क्या मतलब? जरा स्पष्ट करियेगा डॉक्टर!

डॉक्टर की आँखों के नीचे गड्ढे पड़ गये थे। उनका सुनहरी फ्रेम का चश्मा जो अर्द्धगालों की एक नुमाइश थी उनकी खाकी आँखों के

ऊपर एक अपने ही ढँग की चीज थी। उ हाने शा ा अच्छी तरह ओढ़ कर उत्तर दिया— मनुष्य संकुचित है क्योंकि वह अपनी सत्ता को बनाये रखने के काम में अच्छा बुरा छोड़कर लगा रहता है।

सुधा चुप बैठी रही। आज इतवार था। वह फ ्त में थी। लॉन पर ओस झलक रही थी। फूट ी किर पेड़ों के बीच में ओस को पकड़ने के लिए झुकी आ रही थीं। दूर क्षितिज पर अब भी कोहरा जमा हुआ था नीला-सा ऊदा-ऊदा सा। हरिश्च ्द्र के बंगले का यह बराम्दा सड़क की तरफ़ था।

डॉक्टर कहता रहा— जानते हो न इस पञ्जाबी होमियोपैथ डॉक्टर को? हजारों में खेलता है। क्विनीन को होमियो ैथिक दवा बताकर बाँटता है। M B 693 का पाउड बनाक उसे अपना चूरन बता बताकर देता है और लोग उसके पीछे भागते हैं। जब मेडीकल स्कूल कॉलेज हो गया है डॉक्टर मरीज़ों की लोगों की बिल्कुल परवाह नहीं करते और फिर भी लोग उ हीं के पीछे दौड़ते हैं। हम लोगों के पास कोई नहीं आता।

डॉक्टर एक शु क व्यंग की हसी हसा। सुधा ओवरकोट के जेब में हाथ डाले बैठी रही। हरिश्च ्द्र ने कहा— लेकिन डॉक्टर आपके पास आना न आना स ्य से क्या सम्बन्ध रखता है?

डॉक्टर चिहुककर बोले— ठीक पूछा है तुमने हरिश्च ्द्र ठीक पूछा है। क्या जरूरत है लोगों को उन लोगों के पीछे भागने की जो रुपये के सामने आदमी की परवाह नहीं करते?

हरिश्चन्द्र कह उठा— ब ्चे जरूर सवालों को लेकर अभ्यास किया करते हैं लेकिन जान का जान जैसी चीज पर लोग अभ्यास करना जरा कम पस ्द करते हैं।

डॉक्टर को लगा जैसे हरिश्च ्द्र के मुह से बड़ा कड़वा धूँआ निकल कर फैल गया। वह सुधा की ओर देखकर कहने लगा— देखा सुधा

हरिश्चन्द्र हर चीज को खेल समझते हैं। एक बात बताऊँ किसी से कहोगे तो नहीं ?

दोनों ने आश्वासन भरे नयनों से देखा। डॉक्टर ने कहा—कल शाम मेरे पास सुधा के घर के सामने रहने वाली मास्टरनी आयी थी। वह दवा चाहती है कि समाज उसे ठीक समझता रहे। उसके कार्य पाप न होते हुए भी समाज को ज्ञात हो जाने पर जो पाप हो जायगे इसी लिए वह उनको मिटा देना चाहती है।

क्या बात ?—सुधा ने नासमझी से पूछा—क्या हुआ उसको ?

डॉक्टर ज़ोर से हसकर बोले—अभी तुम नहीं समझोगी। क्योंकि तुमने अभी दुनिया नहीं देखी। मास्टरनी गर्भवती हो गयी है और गर्भ से छुटकारा पाने के लिए मुझसे दवा चाहती है जैसे मैंने गर्भ गिराने की ही दवाए सीखी हैं और कोई भला काम मैं नहीं कर सकता। इसके लिए उसके प्रेमी एक सेठ के लड़के ने पाँच सौ रुपया मुझे देने को क़बूल किया है क्योंकि मास्टरनी के पास लड़के के प्रेम पत्र हैं जिनके बल पर वह उससे शादी कर सकती है। किन्तु वह सेठ के लड़के से अपना सच्चा प्रेम बताती है और कहती है कि सेठ के लड़के में उतना साहस नहीं है कि मुझसे शादी कर ले। यदि मैं जोर दूगी तो उसकी कमजोरी का नाजायज फायदा उठाना होगा इसलिए मौजूदा हालात में भ्रूण हत्या सबसे ज्यादा ठीक रहेगी।

डाक्टर एक जंगली तरीके से हस उठा। सुधा ने पूछा—और डॉक्टर आप उसे मदद देंगे ?

डाक्टर हठात् गम्भीर होकर बोले—मैं नहीं जानता मैं क्या करूगा। हरिश्चन्द्र तुम्हारी इस विषय में क्या राय है ?

हरिश्चन्द्र चुप बैठा था। उसने एक बार लॉन की ओर देखा सड़क की ओर देखा राह चलतों पर नजर डाली जैसे वह सबकी राय ले

रहा हो और फिर खाँसकर उसने कहा—'डाक्टर मैं नहीं जानता कि आप मेरे उत्तर से मुझे कैसा आदमी समझेंगे।

डाक्टर ने उसे ऐसे देखा जैसे उससे क्या तुम्हें जो कहना हो कहो।

हरिश्चन्द्र ने ऊपर देखते हुए कहा— बात असल में एक है और वह है मास्टरनी का भवि य। ब-चे समाज में इतने होते हैं कि हि-दु स्तान उनमें से ब-तों को नहीं चाहता। ऐसी दशा में स तान का प्रश्न बेकार है। अगर अगाह या नहीं होती तो मास्टरनी या तो ठ पर जोर डालकर शादी करती है और सदा के लिए जीवन की कोमलता खो जाती है या फिर वह बदनाम होती है नौकरी से निकाल दी जाकर भिखारिन हो जाती है। एक पाप करने से अनेक विषमताओं का अंत होता है अत वह काम भी बुरा नहीं रहता। अगर आप मेरी बात मानें तो आप जरूर उसे कोई दवा देकर इस परेशानी से उबार द।

डाक्टर के दिमाग़ में सौ सौ करके पाँच चोट पड़ीं और सुधा फट पड़ी— तो उसके इस काम के लिए क्या सजा है?

हरिश्चन्द्र अ वचलित स्वर में बोला— क्या यह काम सचमुच सजा देने लायक़ है? आप कहेंगी यह दुराचार है। मैं मानता हू लेकिन भूखा और पिंजरे में बंद क्या नहीं करता? जरा सा दरवाजा खुला नहीं कि उड़ने के लिए झपटा। और नतीजे में खटका गिरने पर टाँग के बल घंटों लटकता है। मेरे विचार में एक औरत के लिए सबसे बड़ी सजा है कि वह जब मा बनने वाली हो उसे स्वयं अपने ही बच्चे का खून करना पड़े।

उसने तीखे नयनों से सुधा की ओर दृष्टि फकी। सुधा ने पढ़ा जैसे वह कह रहा हो कि यदि तुम उस जगह होतीं तो क्या करतीं? और क्षण भर में ही परिस्थिति की गम्भीरता समझ कर चुप हो गयी।

डॉक्टर सोचते रहे। फिर बोले— लेकिन यह करने के बाद भी

तुम लोग यह न सोचना कि मैंने अपनी परेशानियों से तङ्ग आकर पाँच सौ रुपयों के लिए ऐसे ही एक मनुष्य को मार डाला।

हरिश्चन्द्र बोल उठा— आप भी कैसी बात करते हैं डाक्टर! सज़ा वही देता है जो अपने को अपराधी से अच्छा समझता हो। जिस समाज में ज़िन्दे आदमी भूख से मार डाले जाय वहाँ एक अनजाने मांस के लोंदे को मिटा डालना कोई बड़ी बात नहीं है। अगर पता चल जाने पर समाज माँ और बालक दोनों को ही सज़ा के अतिरिक्त कुछ नहीं देख सका तो क्यों न एक की ही जिन्दगी सुधारने का प्रयत्न किया जाय। मैं आपसे अपने दिल की कसम खाकर कहता हू कि आपकी इज्ज़त मेरे दिल में फिर भी बनी रहेगी। और आप ही बताइये कौन सा है वह इज्ज़तदार डाक्टर जिसने इन्हीं कामों के बूते पर शुरू में अपनी प्रक्टिस स्थापित नहीं की? एक बार नस पकड़ ली फौरन वहाँ फैमिली डाक्टर बन गये और फिर चलती का नाम गाड़ी है।

हरिश्चन्द्र ने दूसरी सिगरेट जला ली। सुधा खोई-सी बैठी रही। डाक्टर सोचते रहे और सूखी डाल पर काली चिड़िया गर्दन मटका कर गाती रही। एक उत्तरहीन अभावपूर्ण सन्नाटा गहरा कर धूप में सुबकने लगा।

(२)

जब शाम को सुधा इतवार को पुस्तकालय बंद होने के कारण घर पर ही बैठकर जी बहलाने लगी उसके दिमाग में तरह-तरह के विचार दौड़ने लगे। धीरे धीरे एक धूआ सा कोहरा साँस के साथ भीतर-बाहर छा गया और चारों ओर अंधकार ही अंधकार का बहरापन आकाश से एक कशमकश करता बरसने लगा। वह चुपचाप बैठी खिड़की से देखती रही। दूर दो तल्ले पर बिजली के प्रकाश में कुछ दर्जी लड़ाई की वर्दियाँ सी रहे थे। वह प्राय चौबीसों घन्टे काम करते और सुधा यही अचरज करती कि आदमी कैसे स्वयं एक मशीन हो जाता है। अब तो

खैर जाड़े हैं मगर गर्मी बरसात सब में वे उस ही कमरे में बंद रह कर काम करते और करते

सुधा ने देखा दूर और दूर बिजली के खम्भे के नीचे कुछ भिखारी टाट में लिपटे बैठे थे और उसे मालूम था। रात होने पर वे वहीं टाट में लिपटे लुढ़क जायगे सो जायेंगे सुबह उठकर फिर गंदे मुह गंदे बदन से भीख मांगगे और रात दिन की ठण्ड खाकर भी उनका शरीर नहीं अकड़ता। जैसे कुत्ता बहुत ठण्ड होने पर कू कू करके फिर ।मन्‍ी में सिमटकर सो रहता है और एक बार चाँद को देखकर जब अपनी छाया से उसे डर लगता है तो ज़ोर से रो उठता है।

सुधा उ`मन होकर आसमान की तरफ देखने लगी। कुछ नहीं केवल कुछ तारे निकल आये थे। पृथ्वी घूमती है वे राह पर आते हैं दीखते हैं फिर ऐसे ही नहीं दीखतें और सुधा ने दृष्टि नीची कर ली। लालटैन की लौ तेज़ करके पास के सामने वाली दूकान के हलवाइ ने कुछ आवाज़ लगायी और सुधा ने देखा वही बूढ़ा भिखारी और वही औरत खड़े थे चुपचाप जैसे कोइ मतलब नहीं। सुधा अक्सर उन्हें देखती और उसे उनमें कुछ कौतूहल होता था। औरत बि`कुल पागल सी थी बूढ़ा कभी-कभी किसी से बात कर लेता था और एक सुबह उसने देखा था बूढ़े की गोद में सर रख कर सड़क के किनारे ही औरत सोती रही। बूढ़ा कभी उसके शरीर पर झुककर भयङ्करता से खाँसता और कभी ऊँघने लगता। औरत फिर भी न जागी बूढ़ा फिर भी न हटा और आसमान से चिल्ला गिरता रहा किन्तु सुबह भी मरे नहीं थे उसका ध्वंस नहीं हो सका था। बूढ़ा उसे लेकर चल पड़ा था। ऊँचे उठे कंधे और लटकी गदन छोटा-सा कद और स्त्री जो बगराती सत राती और कदम-कदम पर ठोकर खाती।

सुधा ने व्यथा से भर कर एक लम्बी साँस ली और आँखों को ढँक कर हाथों से मसल दिया और अंधकार में कमरे में कुछ देखने

लगी। क्या हक़ है हमें इस तरह ठण्ड से बच कर रहने का जब इतने आदमी न सो पाते हैं न जिनका जागना है न जिनका सोना है जिनका जागना एक हाहाकार है जिनकी नीन्द एक मूर्छा है

वह सोचने लगी। मन में अपने आप भावना उठी कि क्या यह जीवित रहना एक पाप है? क्या हमें भी सब कुछ खोकर वैसी ही हो जाना है? जब सुख है तभी दुख है। लेकिन यदि दु ख ही दु ख है तो न कोई ईर्ष्या करने वाला है न कोई दूसरा के लिए व्यथित होने वाला। यह जो स्वयं पीड़ित हैं ये किसी और की चिन्ता नहीं करते केवल इन्हें अपना ही ध्यान अपने पेट का भयानक ध्यान भर रहता है।

किसी के सीढ़ी चढ़ने की आवाज़ हुइ और सुधा प्राकृतिक रूप से ही पुकार उठी— कौन? भइया?

अरे अंधेरे म क्यों बैठी है? कहते हुए एक युवक ने स्विच दबा दिया। एकाएक उजाला हो जाने से सुधा की आँख पल भर को बंद हो गयीं और जब उसने आँख खोलकर देखा तो भइया बिछे हुए बिस्तर पर बैठे पैर हिलाते हुये सिगरेट जला रहे थे। दोनों एक दूसरे को देखकर व्यथ मुस्कुराये और भइया ने एक बार धूआ छोड़कर कहा—'तूने सुना सुधा मैंने नौकरी छोड़ दी?

छोड़ दी? क्यों? कैसे? कब? सुधा ने घबरा कर सवालों की बाढ़ मचा दी। उसके दिमाग में एक उथल पुथल मच उठी।

भइया ने नीची दृष्टि करके कहा— कल मुझे तुझसे कहने का वक्त ही न मिला। सेठ हरनारायण के लड़के ने कल साढ़े छ सौ की नौकरी से इस्तीफा दे दिया क्योंकि वे मेरे पीछे लड़ गये थे। एक अङ्गरेज़ ने मुझे बहुत बुरी गालियाँ दी थीं और जब रिपोर्ट की गयी तो सब बड़े अङ्गरेज़ अफ़सर उस ही की तरफ बोलने लगे। उनके छोड़ने के कारण मैंने भी छोड़ दी।

बात खत्म हो गयी किन्तु फिर भी इसलिये खत्म नहीं हुई क्योंकि

बात का समाप्त हो जाना आगे के जीवन का हल किसी तरह भी नहीं निकाल सकता था। सुधा ने धीरे से कहा— अङ्गरेज़ों का बर्त्ताव तुम्हीं से बुरा था या सबसे ?

सबसे। किन्तु मैं इसे सह नहीं सका। आज भइया के आदर्श त्याग का मह व सुधा की समझ में नहीं आया। वह स्त्री थी और उसे अपनेपन का कहीं अधिक ख्याल था। अगरेज़ कौन-सी ऐसी बात कर रहे हैं जिसमें हिन्दुस्तानिया की इज़्ज़त बढ़ रही थी ? जब आदमी नौकरी करने जाता है पेट के लिये तब इज्जत तो वह पहले ही छोड़ आता है। या तो खुलकर बगावत करे या करे ही नहीं। सब एक दूसरे को हुजूर कहते हैं क्योंकि कहना पड़ता है।

और उसने भाइया की ओर देखा जो ऐसे बैठे थे जैसे मैंने जो किया है उसके लिये बिल्कुल लज्जत नहीं हूँ। मैं कुत्ता नहीं हूँ जो टुकड़ों के लिये ठोकर खाता फिरु। दोनों ने एक दूसरे को देखा और दोनों ने एक दूसरे के विचारों को आँखों से ही पढ़ लिया।

सुधा को उस पर दया सी हो आयी और भइया को एक उलझी सी झुँझलाहट। सुधा ने कहा— मुझे कल दो महीने की फीस दाखिल करली है।

भइया ने हसकर कहा— अरी कल तक मैं हसता था कि घर में अखबार लेकर तू पुस्तकालय जाती है, मगर शायद जल्द ही अब तुझे पुस्तकालय में ही अखबार पढ़ने पर मजबूर होना पड़ेगा।

सुधा थोड़ी देर चुप रही। उसने कहा — अब ?

भइया बोले अब के अमरीकना में कोशिश करूगा। जल्दी ही मिलेगी। सौ न सही पचास ही सही—दो सौ तो अब क्या मिलेंगे— मगर मिलेंगे तो ! सुनतें हैं अमरीकन अङ्गरेज़ों के मुकाबिले में अच्छे हैं।

सुधा को विश्वास नहीं हुआ। होंगे भी तो मुकाबिले में ही हो सकते

हैं। वैसे तो जो नौकरी देगा वह जरूर दाबना चाहेगा तब तक जब तक नौकर मालिक का फर्क न।मिट जाय।

भइया हँस पड़े। बोल ठे अरी तू क्या घबराती है पगली! सोचती होगी सेठजी के लड़के ने ठोकर मारी तो उनका दूसरा पैर भी मजबूत था यहाँ तो भनभनाहट से ही गिर गये। तेरा तो ब्याह मैं कर ही दूंगा कहीं अच्छी सी जगह और फिर की फिर देखी जायगी। अकेले की क्या है? मगर तू न कहेगी अपनी पसन्द से करूँगी मैं तो पत्नी लिखी जो है न? और भइया ठठाकर हँस पड़े। सुधा लाज से मुस्करा उठी। मजबूरियों में भावी सुख की यह कल्पनाथ जो कभी पास नहीं आतीं और जीवन सरकता चला जाता है। कैसी मृग तृ णा! कैसी मरीचिका! अनन्त अ धकार आकाश में धू धू जलता निर्धूम उ माद या पागलपन

(४)

डाक्टर ने सुधा की दो महीने की तथा इम्तहान की फीस शीघ्र वापिस मिल जाने के वायदे पर तकल्लुफ दिखाते हुये दे दी और उस दिन सुधा ने प थरों के नीचे दबे दिल में पहली बार एक कचोट महसूस की जिसमें नयनों की पीड़ा का वेग होता है। वह थोड़ी देर देखती रही और डाक्टर ने उसकी ओर न देखते हुये अपनी सिगरेट जला कर चुपचाप एक ल बी साँस ली।

सुधा ने अपने होठों पर जीभ फेरी और एकाएक पूछ बैठी—
डाक्टर मनुष्य सुखी कब होता है?

डाक्टर जैसे तैयार नहीं थे। उ होंने चौंककर उसकी ओर देखा और वे धीरे से कह उठे— जब मनुष्य कुछ नहीं चाहता जब उसे कोई चि ता नहीं रहती।

यानी जब आदमी मर जाता है।

डाक्टर फिर चौंके। उन्हाने कोइ उत्तर नहीं दिया। वह उसे घूरते रहे जैसे क्या मतलब ?

सुधा ने उनका मतलब समझकर झिझकते झिझकते कहा— डाक्टर मनुष्य सदा चिंतित रहता है। आप मनुष्य के शरीर की सारी बनावट जानते हैं इसी से आपसे पूछती हू। आदमी कभी चैन से नहीं रहता। वह क्यों कुछ करना चाहता है ?

क्योंकि वह रहना चाहता है ?

लेकिन क्यों ?

क्यों ? क्योंकि वह पैदा होता है। जैसे डाक्टर ने सारी समस्या सुलझा दी।

यही तो पूछती हूँ डाक्टर सुधा ने दृढ़ता से कहा— वह पैदा क्यों होता है ?

क्यों होता है ? डाक्टर हँस पड़े। उन्होंने कहा— यह तो मैं नहीं बता सकता कि क्यों होता है। डाक्टर होने की हैसियत से यह ज़रूर बता सकता हूँ कि कैसे होता है और यह कैसे ही वास्तव में क्या का पहलू अपने में छिपाये है। यह कैसे ही क्यों का असली उत्तर है। बिना कैसे के क्यों कभी सामने नहीं आता क्योंकि केवल क्यों एक दु स्वप्न की घुटती पुकार है जिसका जवाब आइन्स्टाइन जैसे वैज्ञानिक भी नहीं निकाल सके और वह अब भी कैसे में ही उलझ रहे हैं। क्यों का उत्तर बहुतों ने दिया है किन्तु आगे आने वाले ने उ हें ही काट दिया और क्या का उत्तर सारहीन हाहाकार मात्र रह सका।

सुधा देखती रही। डाक्टर का जादू आज उस पर असर करने में असफल हो गया। उसके मन को तृप्ति नहीं हुई। मनुष्य जो चाहता है वही नहीं हो पाता जहां वह समझकर पैर रखता है वहीं कीचड़ निकलती है और उसका पैर आगे बढ़ने की बजाय धँसा रह जाता है।

डाक्टर ने सिगरेट फककर यूरोपियन ढङ्ग से कुछ अशराफ

ज भाइयाँ लीं और दोनों हाथों को सीधा किया और उद्विग्न से कमरे में टहलने लगे। कभी कभी वह सुधा को देखते थे और जैसे कुछ कहना चाहते थे किन्तु शब्द न मिलने के कारण परेशान थे।

सुधा ने ही मौन तोड़ा। उसने पूछा— डाक्टर मास्टरनी का क्या हुआ?

होता क्या? उन्होंने मेज पर टिककर कहा— जो होना था वही हुआ।

यानी? घड़ी के अलारम की तरह सुधा की बात टनटना उठी।

यानी दवा ने उसके पाप को धो दिया लेकिन आज ही सुबह ऑपरेशन करके मुझे एक और काम करना पड़ा। वह दवाएँ ग़लत तौर पर पी गयी और ज़हर ने गर्भाशय में प्रवेश कर लिया। इसलिए मुझे उसकी चीरा फाड़ी करनी पड़ी और अब वह कभी भी मां नहीं बन सकेगी चाहे तो भी नहीं। इसके लिए सेठ के लड़के ने मुझे पाँच सौ की जगह कुल तीन-सौ रुपया दिया है। योंही उसे मालूम पड़ा कि बच्चा नहीं रहा उसने मास्टरनी से कुछ कहा। ऑपरेशन के बाद जब कोई भी डाक्टर उसकी देख रेख कर सकता था उसने मुझे कुल तीन सौ रुपया दिया और वह मास्टरनी एकदम चुप हो गयी। दोनों ने मुझ पर जुर्म लगाया और मास्टरनी ने कहा कि मेरी ही ग़लती की वजह से वह अब औरत नहीं रही।

डाक्टर पराजित-से हँस पड़े। फिर कह उठे— रुपया मैं जीवन का सबसे बड़ा उद्देश्य नहीं समझता। मैंने उनके भले के लिए किया था वह सब लेकिन

सुधा ने बात काटकर कहा — तो भला तो आप कर चुके न? फिर कैसा अफ़सोस? कर्म करना ही तो आपके अधिकार में था। फल न मिला न सही।

डाक्टर तिलमिला उठा। इस समय वह चाहता था कि कोई

उसकी प्रशंशा करे और उसी की एक शिष्या के समान लड़की ने उसके मर्म पर ऐसी चोट की थी। उसने आहत स्वर में कहा— यह रुपया नहीं था मेरी मेहनत का फल और उनकी ईमानदारी की परख थी।

सुधा निराश हो गयी। उसका व्याकुल हृदय भीतर ही भीतर चिल्ला उठा— यह सब झूठ है। यह सब झूठ है। किन्तु कॉलेज की फीस जेब में पुकार उठी—चुप ! चुप !

(५)

भइया की नौकरी सचमुच लग गयी। वे सुबह साढ़े छ बजे के कड़कते जाड़े में घर से चल देते और शाम के पाँच साढ़े पाँच बजे तक लौटते। एक सौ बीस रुपये की तनख्वाह बुरी नहीं होती। तीन ही दिन में यह कहीं से रुपये ले आये और डाक्टर को सुधा ने बड़े बड़े धन्य वाद देते हुए लौटा दिये। सुधा ने अपनी एक पुरानी जरसी उधेड़कर उनके लिए दस्ताने बना दिये ताकि साइकिल पर जाते वक्त हाथ न ठिठुर जांय और रात के परांवठे लेकर वह गये गये कि फिर शाम तक को गयी। मगर हालत बदस्तूर गिरी रही। पूरा महीना बिना पैसे के चलाना था। घर में आटा था मगर इधर सब्ज़ी के बढ़े दामों पर पैसा डालना कठिन था कि दूध दही सुपना हो रहे थे। दरिद्रता की यह छाया सुधा के मन पर वैसी ही चली जैसे चूल्हे पर चढ़े बर्त्तन के तले पर कालिमा। अखबार बन्द कर दिया गया। पहले जो दो सौ आते थे उनमें पाई भर भी बचाना हराम था। रसोई करने वाली निकाल दी गयी और वह भार सुधा पर ही आ पड़ा। घर और बाहर के बोझ की कशमकश में उसकी आत्मा अवरुद्ध सी छटपटा उठी। शाम को वह भइया को खाना खिलाकर पुस्तकालय जाने लगी और इस कारण लौटते में कभी कभी अंधेरा भी हो जाता किन्तु अब अखबार

पढ़ते में उसे सा बना सी मिलती जैसे यह सब एक महान् संग्राम था जिसका परिणाम मुक्ति है मनुष्य की मुक्ति ।

किन्तु हरिश्चन्द्र धीरे-से मुस्करा उठा। उसने कहा— तुम समझती हो सोवियट में सब सुखी हैं ?

मैं नहीं जानती मगर तुम सुख कहते किसे हो ? उसने पूछा।

मैं ? हरिश्च ने उत्तर दिया। सुख और दुख को केवल संसर्ग से उठने वाली प्रतिक्रिया समझता हू। साथ साथ हैं तो यह है वह है दूर दूर हैं तो न यह है न वह है और यह वह कुछ स्वार्थ की सिद्धि सफल है तो सुख है नहीं है तो दुख है।

सुधा को यह उत्तर अच्छा लगा। एक बार मन में आया अपने घरेलू कष्टों का उससे बखान करके जी हल्का कर ले। कि तु फिर सहसा ही हिम्मत नहीं हुई कि कहीं इसमें कोइ अपना अपमान न हो कहीं हरिश्चन्द्र उसे ग़रीब न समझ ले। हरिश्चन्द्र बकता रहा— संसर्ग ही सब कष्टों की जड़ है। मैं एक जमीदार हू छोटा मोटा। कभी अपनी जमीन देखने तक नहीं जाता। जो आज ग़रीब किसान है उसे कभी यह मालूम नहीं होता कि एक मिस्टर हरिश्च द्र भी होंगे जो मेरी मेहनत के बूते पर सिगरेट पी रहे हागे। मगर जो है सो तो है ही। वह सब भी ठीक है। पैसा है तो सब कुछ हैं नहीं तो कुछ भी नहीं।

सुधा ने उसकी ओर देखा। अनजान में ही उसकी दृष्टि में एक स्नेह छलछला उठा था। नारी के मन की अनजानी वेदना को निर्दोष रूप में प्रकट कर देने वाला पुरुष कम से-कम एक प्यार भरी दृष्टि का उत्तराधिकारी अवश्य होता है। हरिश्चन्द्र ने निभय स्वर में कहा—'मेरे मना करने पर भी मेरी बहिन वैकआई है और मैं जानता हूँ उसकी टॉमियों से दोस्ती है लेकिन क्या कर सकता हू मैं ? वह मुझसे पैसा नहीं चाहती कुछ नहीं माँगती किस तरह दबा सकता हू उसे ?

इतनी बड़ी बात कहकर भी उसे संकोच नहीं था। उसने बात को

समाप्त करते हुए कहा— मैं उसका भाई अवश्य हूँ किंतु उससे घृणा करता हू क्योंकि वह मुझसे घृणा करती है। वह पुरुषों से घृणा करती है और फिर भी पुरुषों की ओर खिंचती है। जिस आदमी से वह प्रेम करती थी वह एक अङ्गरेज था जिसने उसे एक ठोकर मार दी थी और एक बच्चे की माँ बनने के लिए छोड़ गया था। वह माँ नहीं हुई लेकिन पुरुषों पर उसने कभी विश्वास नहीं किया और मैं कोशिश करके भी उसे चाह नहीं सका।

सुधा निस्तब्ध बैठी सुनती रही। कैसे हैं ये लोग? कोई एक दूसरे से प्यार नहीं करता! केवल अविश्वास केवल घृणा! और परस्पर का व्यवहार केवल एक धोखा था फिर अत्याचार! पार्क में उस दिन चाँदनी फैली हुई थी। दोनों बेंच पर बैठे बात कर रहे थे। मादक हवा चल रही थी। बात करते करते हरिश्चन्द्र ने सुधा का हाथ पकड़कर कहा— एक बात बतलाओ सुधा! क्या तुम बहुत सुखी हो? मैंने तुम्हें सदा एक जिज्ञासु के रूप में देखा है। तुम हो तुम्हारे भइया हैं। मैं धन को बहुत बड़ी चीज मानता हू। आज जो अविद्या गवारपन कमीनापन और जाने क्या क्या है यह सब धनहीनता के कारण हैं सब धन के भेद हैं। मैं नहीं जानता मैं कहाँ तक सही हूँ किंतु तुम सदा मुझे सुखी दीखती हो।

सुधा एकाएक हँस पड़ी। कैसा भोला है यह युवक! जो हाँ ना का फ़रक सुनकर नहीं पहचान सकता। उसने अपने सामने एक बालक देखा। अनजाने ही उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोल उठी— अरे हम लोग असल में गरीब आदमी हैं ग़रीब आदमी। सुखी हम कहाँ? सुख की बातें तो तुम लोगों को करनी चाहिए जो जमीदार हैं। बड़े लोग हैं। हम तो ज़िन्दे हैं जिन्दे!

मैं जमीदार?' और हरिश्चन्द्र ठठाकर हस पड़ा। बड़ा आदमी? शायद कपड़े देखकर लोग ऐसे ही ग़लत ख़यालों में पड़े रहते हैं? बङ्गले

में रहता हूँ जो। और सब सब कर्ज़े से लदा है गले तक कर्जा है कर्जा कमीने सेठों ने छोड़ा ही क्या है

और वह जोर से हस पड़ा। उसकी भर्राई हँसी में उसका आहत अभिमान टुकड़े टुकड़े होकर शीशे की तरह चाँदनी में चमक उठा था। वह फिर कह उठा— सोचती होगी जान जानकर और क्यों फँसते हो? मगर जिसके मुँह में खून लग चुका हो वह घास नहीं खा सकता। यह रोगी तपेदिक से मर कर ही चैन ले सकता है इसका इलाज असम्भव है। बिल्ली दूध पी नहीं पाती तो लुढ़काये बिना उसे चैन कब मिलता है? एक खानदान की इज्ज़त भी तो होती है न? माँ तो अभी भी अपनी ऐंठन उसी पर कायम रख सकी हैं।

और वह फिर वही जहरीली हँसी उगल उठा। सुधा निस्पंद सुनती रही। किला धप से मिट्टी में बैठ गया था। चारों ओर धूल ही धूल उड़ रही थी। वैभव को अन्धकार ने डस लिया था।

(६)

दूसरे दिन सुबह ही सुधा डॉक्टर के घर की तरफ चल पड़ी। डॉक्टर बैठे कुछ सोच रहे थे। इतनी सुबह सुधा को देखकर उन्हें कुछ भी अचरज नहीं हुआ। सुधा को रात भर नींद ठीक न आ सकने के कारण उसकी पलकें भारी हो रही थीं और डाक्टर के सन्देह की इस बात ने पुष्टि कर दी। वह अप्रसन्न सा मुख लिये बैठ रहा। सुधा अपने आप कुर्सी खींचकर बैठ रही।

डाक्टर ने देखा—कैसी सीधी बनकर बैठी है। लेकिन कल शाम को सीधी न थी जब पार्क में चाँदनी में हरिश्चन्द्र के साथ हाथ में हाथ डाले बैठी थी। अनजाने ही डाक्टर की इस नारी के प्रति दबी वासनाएं इस अचानक पराजय पर भड़क कर ठोस विद्रोह और प्रतिहिंसा बनकर खड़ी हो गयीं जैसे आज वह कुछ सुनने को तैयार न था।

सुधा चुपचाप बाहर देखती रही। उसने कहा— डाक्टर जीवन कितना कठिन है?

डाक्टर के मुँह पर व्यंग्य से एक मुस्कान खेल गयी। उन्होंने कहा— परिस्थितियों की उलझन को सुलझन बना देना ही मनुष्य का सुख होता है सुधा देवी! ठीक है न?

सुधा ने चौंककर डाक्टर की ओर घूरा। किन्तु डाक्टर बेताब होकर उठ खड़ा हुआ। मेज की दूसरी ओर धीरे धीरे जाकर हाथ बाँधकर वह खड़ा हो गया। सुधा ने सुना—वह कह रहा था— जान जानकर गलती करनेवाले को कोई क्षमा नहीं कर सकता मैं सब जानता हू सब देख चुका हूँ। दवा लेने आयी हो सुधा? मैं नहीं दे सकता। तुम भले ही मुझे कुछ कह लो। मेरे लिए एक बार की भूल काफी है बहुत काफी है। मैं बार बार वैसी ग़लती नहीं दुहरा सकता। मुझे तुमसे कोई हमदर्दी नहीं है। यदि तुम पाप करते हुए नहीं हिचक सकतीं तो समाज को तुम्हें दण्ड देने का पूरा अधिकार है।

सुधा कुछ नहीं समझी। वह बोल उठी— कैसा दण्ड? कैसी दवा? क्या जानते हैं आप डाक्टर?

तुम मेरी आँखों को नहीं झुठा सकती सुधा देवी! मैंने आँखों से तुम्हें हरिश्चन्द्र के साथ पार्क में कल रात देर तक बैठे देखा है। अगर चाँदनी का दोष है तो मैं कोई दवा कैसे दे सकता हूँ? है तुम्हारे पास पाँच सौ रुपया? डाक्टर लक्ष्मण तुम्हारे कृपा-कटाक्षों का न भिखारी था न है न रहेगा। जाओ मैं तुम्हारी कोई मदद नहीं कर सकता।

'ओह समझी। तो आप मेरी कोई मदद नहीं कर सकते? सुधा एकदम ठठाकर हँस पड़ी। निर्दोष कभी किसी से नहीं दबता। तब तो आप बड़े समझदार हैं। डाक्टर तुम्हारा भेजा सड़ गया है और तुम उसकी बदबू से परेशान होकर समझते हो कि सारा संसार सड़ गया है। बेवकूफ! तुम्हारे समाज में हर एक पाप का न्याय देने की ठौर है और

इसीलिए आज सत्ता के लिए विषमताओं के इस कारागार में पाप ही पुण्य हो गया है। इतिहास इसके लिए तुम्हें कभी भी क्षमा नहीं कर सकेगा।

वह अपने अपमान से विक्षुब्धी फुङ्कार उठी थी। डाक्टर हत बुद्धि सा देखता रहा। सुधा तेज़ी से उसके घर से निकल गयी।

बाहर हवा ठण्डी थी तेज थी। राह के लोग कपड़ा की कमी के कारण सिसकारी भरते-से चल रहे थे। ढाल के किनारे के ताल पर कुछ बच्चे ढेले फेंक रहे थे। ढेला गिरते ही काई फट जाती थी फिर उसके डूबने पर जुड़ जाती थी। बच्चों के ढेले कभी उस ताल की काई नहीं फाड़ सके। और ताल की काई पर मच्छर रहते हैं भनभनाते हैं— जहर के छोटे छोटे कातिल मकड़े लेकिन दूर से ताल कितना सुंदर लगता है कितना मोहक जो भीतर ही भीतर सड़ चुका है गल चुका है दुर्गन्ध और घृणा की एक दलदल सा जीवन की कलुषित पराजय सा निर्वीर्य निर्जीव

नारी का विक्षोभ

अभी चार पाँच साल की ही बात है कक्षा ने अपने चश्मे को उतार कर साफ करते हुए कहा— मैं तब लखनऊ यूनिवर्सिटी में पढ़ता था। आप तो जानते ही हैं कि लखनऊ में कैसी बहार है।

बीच ही में सिन्नी बोल पड़ा— ओह बला की ठंड है। चंदू जरा यार ढङ्ग से बैठो। कोई खुदगर्जी की हद है कि सारा कम्बल अपने चारों तरफ लपेट बैठे हो। भाई वाह!

अमाँ तो बिगड़ते क्यों हो? आखिर कोई बात भी हो? फिर मुड़कर चंदू ने कहा— हाँ भाई कक्षाजी फिर।

कल्ला ने अपने दुशाले को और अच्छी तरह लपेट लिया। फिर कहा— लखनऊ की जिंदगी के तीन पहलू हैं एक नवाबों का दूसरा टुटपुंजिये का और तीसरा गरीबों का। क्या बताय यार हमारा समाज ही कुछ

खबरदार! सिद्दी ने जोर से डाट कर कहा— कह दिया है बको मत।

और चंदू ने अपने मटरगश्ती वाले लहजे से कहा—हाँ भइ कल्ला जी फिर?

कल्ला फिर कहने लगा— देखो यार यह बोलने नहीं देता!

चंदू ने सिद्दी की ओर देखकर कहा— खामोश!

कल्ला ने कहना शुरू किया— जवानी किस पर नहीं आती मगर जो उस पर आई वैसी शायद हमने कभी नहीं देखी। मेरे साथ एक लड़का सूरज पढ़ता था। जात का वह कायस्थ था पर था एक लफंगा। लफंगा से तुम लोग कुछ का कुछ न समझ लेना। भाइ वक्त ऐसा है कि कालेज के लड़के चाहते हैं कि उनकी गिनती उस्तादों में हो। नेक टाई सूट चमचमाते जूते कालेज में कोई कुछ पहन ले पर बातें करने तक का जिसे सलीका नहीं वह किसी काम का नहीं।

सूरज की आँख सदा लड़कियों को ही खोज में रहती थी।

संयोग की बात है कल्ला ने आगे कहा— एक लड़की सविता को देखकर सूरज पागल हो गया।

सूरज के बाप नहीं थे माँ नहीं थी। हाँ गाँव में उसके चाचा थे चाची थीं। उनके आठ बच्चे थे। और सबसे बड़ी एक और बात थी। चाचा जमीं ारी का इंतजाम करते थे। सूरज उनका कहना मानने वाला लड़का था। लेकिन कानून की नजर से चाचा सूरज के चाचा हों या सिकन्दर के चाचा हों जायदाद का वह कुछ नहीं कर सकते थे क्योंकि वही जायदाद का मालिक था।

इस गारंटी के होते हुये सरज को किस बात की चिन्ता होती !

सविता देखने में जितनी सुदर थी उतनी ही चतुर भी थी। सबसे बड़ी बात उसमें यह थी कि वह कालेज के डिबेटों में खूब हिस्सा लिया करती थी। जब वह बोलना शुरू करती तो कोई कहता इसका बाप भी ऐसी बात नहीं सोच सकता ! जरूर कोई उस्ताद है इसके पीछे जो प्रेम के कारण अपने आपको छिपा कर इसे आगे बढ़ा रहा है लेकिन इन बातों से होता जाता कुछ नहीं। अगर मान लिया जाय कि वह रट कर ही आती थी तो रटने की भी एक हद हुआ करती है। आज तक हमने नहीं देखा कि चंद्रकान्ता सन्तति के चौबीसों हिस्से किसी की जबान पर रखे हों। वह बोलने में एक भी भूल नहीं करती।

उसके खयाल एकदम आजाद थे। विधवा विवाह तलाक सह शिक्षा स्त्री का नौकरी करना गोया जिन्दगी के जिस पहलू में नारी की जो बात है वह सविता की ही थी। हर बात पर उसके अपने अलग विचार थे।

नये विचारों की वह लड़की शाम को लड़कों के साथ घूमने निकलती पार्टियों में जाती कविता लिखती। कविता का मजाक शायद आप लोगों को मालूम नहीं। कोई आपकी तरफ आँखें उठा कर देखता तक नहीं तो बस कविता लिखिये !

सूरज ने जब सुना कि वह कविता करती है तब दौड़े दौड़े उस्ताद हाशिम के पास गया। उस्ताद ने उसे देखा तो सब कुछ समझ गये। उनके लिये क्या बड़ी बात थी ? कालेज का लड़का चटकदार कपड़े पहने उनके पास आया है। चेहरा गुन्ना नून है मतलब आँखों में वह खुशी नहीं वह उत्साह नहीं जो जवानी का अपना लक्षण है तो आखिर इसका क्या कारण है ? उस्ताद बिना पूछे ही भाँप गये। उस्ताद ने मुस्करा कर पीठ ठोंकी। कहा—'बटा शाबास ! मगर मैं एक गजल के बारह आने से कम नहीं लेता। हुलिया बताओ जो टूटा-फूटा ख्याल हो

उगल जाओ आला जबान में तरतीब से सजी हुइ वह चीज दे दूँगा ाक जिमके लिये वह होगी वह तो रीझेगा ही इधर उधर बैठे हुये भी ो चार अपने आप रीझ जायगे।

क पाँच रुपये का नोट काफी था। सूरज लौटे तो गुनगुनाते हुये। नझ खु ता ुब हुआ चार बजे गया था तब एक शरीफ आदमी ा। अब ासफ छ बजे हैं मगर शायर हो गये हैं।

आप शायद पूछेंगे कि सविता तो करती है कविता हिन्दी में और सूरज साहब करत हैं शायरी उर्दू में ऐसा क्यों? तो सुन लीजिये कि कायस्थों में अधिकतर मर्द हिन्दी नहीं पढ़ते औरत पढ़ती हैं।

सविता भी कायस्थ थी। उसके एक छोटी बहन एक छोटा भाई और एक बड़ भाइ थे। बड़े भाई ला में पढ़ते थे। इरादा था छूटते ही वकालत शुरु करने का।

सविता अंधी न थी। उसे सूरज की बात माल्म हो गई लेकिन न जाने क्यों वह उसे एकदम टाले रही।

सूरज सविता को गुजरते देखता तो गजल पढ़ता। जब उसका कोई नतीजा नहीं निकलता तो कहता खुदा समझ उस कमबख्त हाशिम से। वे हँसकर चली जाती है जैसे हम सिफ गजल पढ़ रहे हों।

कि तु प्रेम की कोई बात स्थिर नहीं है। उसके अनजाने के ब धन किसी भी वक्त जंग बन कर कठोर से कठोर लोहे को भी चाट जा सकते हैं। दोना ओर एक सी परिस्थिति है। दोनों ओर एक ही सूना पन है। आप कहें यह बेवकूफी की इंतहा है। मैं कहूँगा असली प्रेम वही है जिसे दुनिया बेवकूफी समझ क्योंकि बेवकूफ वही है!

चंदू ने टोककर कहा—हम समझ रहे हैं!

कला ने एक बार सिर हिलाकर कहा— समझ रहे हैं तो बताइये क्या हुआ?

सिद्दी ने कहा— नहीं आप ही बताइये।

कल्ला मुस्कराया। कहने लगा— तो हुआ वही जो होना था।

यानी? सिन्नी ने चौंककर पूछा।

एक दिन कल्ला ने कहा— सविता के बड़े भाई मेरे पास आये। कहा आप सूरज के गहरे दोस्तों में से हैं न

मैंने कहा— जी हाँ फर्माइये।

वह कुछ सोचते हुये बोले— कैसा लड़का है?

इसके बाद सोरों के पंडों की तरह मुझे सूरज के सात पुश्तों के नाम गिनाने पड़े। घर की हालत बतानी पड़ी।

भाई साहब ने बताया कि उन्होंने कुछ उड़ती हुई उनके प्रेम की कहानियाँ सुनी हैं। मैंने कहा— जी वह सिर्फ कहानियाँ ही नहीं हैं।

मेरी तरफ गौर से देख कर भाई साहब मुस्कराये। कहा— खैर! मैं औरतों की पूरी आजादी का कायल हूँ। मेरी बहन ही सही मगर जब मैं खुद चाहता हूँ कि कोई पसन्द की शादी करूँ तो मेरा फ़र्ज़ है कि उन्हें पूरी मदद दूँ।

अब मेरी भी सविता से जान पहचान हो गई। हमारी जो भाभी हैं उनके भाई की बहन सविता की भाभी होने वाली थी। मगर अचानक उसके गुजर जाने की वजह से वह शादी न हो सकी।

सिद्दी ने जम्हाई लेकर कहा— बड़ा लम्बा किस्सा है।

लीजिये साहब कल्ला ने चिढ़ कर कहा— शादी हो गई सूरज और सविता की। छोटा हो गया अब?

भाई तुम्हारे मुंह में घी शक्कर। चन्दू ने सिगरेट पेश करते हुए कहा— सिनेमा का सा लुत्फ आ रहा है।

सिन्नी ने कहा— फिर!

कल्ला ने एक लम्बा कश खींचा और धुँआ छत की तरफ छोड़ कर फिर कहना शुरू किया— उसके बाद एक दिन की बात है। सूरज और

और मेरा एक और दोस्त चंद्रकान्त कालेज में घूम रहे थे। सविता की कालेज की पढ़ाई जारी थी। अब भी वह अपने भाई के यहाँ ही रहती थी सूरज के यहाँ नहीं। शादी के तीन चार महीने बीत चुके थे।

शादी हो जाने से तमीज आ जाती है यह हमने जरा कम देखा है। सूरज की आदत बदस्तूर कायम रही। किंतु इस बीच में यह जरूर हुआ कि मेरा सविता के यहाँ आना जाना काफी बढ़ गया।

चं कान्त मुँह का बक्की था लेकिन दिल का बिलकुल पक्का। सौ लड़कियों को देख कर दो सौ तरह की बोलियाँ निकाल सकता था मगर वह जहर उसके दिल में नहीं था। सिर्फ गले के ऊपरी हिस्से में ही था।

उस दिन चंद्रकान्त ने लड़कियों की एक भीड़ देख मुस्करा कर कहा—देख यार कक्षा! कभी कभी तो देख लिया कर।

'लेकिन हम चूँकि जरा ऊँचे खयालों के आदमी हैं इन बदतमीजियों में हमारा दिल आपकी कसम बिलकुल नहीं लगता।

जिस लड़की की नीली साड़ी थी वह चंद्रकान्त की पुरानी जान पहचान की थी। चंद्रकान्त ने हाथ से इशारा करते हुए मुझसे कहा—'देखा?

मैंने देखा और बिलकुल चुप। लड़की की पीठ मेरी ओर थी। झट से लाइब्रेरी में घुस गई। सूरज अपने ध्यान में मग्न पहचान नहीं पाया उसे। झट से चंद्रकान्त का हाथ पकड़ कर बोल उठा—चलो जरा देखें तो हातिमताई की हिरोइन बनने लायक है या नहीं।

'पहचान तो मैं गया था कि वह कौन है फिर भी चाहता था कि सूरज को आज एक ऐसी नसीहत मिल जाय जिसे वह जिन्दगी भर याद करे।'

लड़की की पीठ ही फिर नजर आई। सूरज ने दबी आवाज से कहा—'काश हमें भी दीदार हो जाता!

लड़की ने मुड़ कर देखा। सूरज के काटो तो खून नहीं। यह सविता थी। उसकी त्यौरियाँ पहले तो चढ़ीं लेकिन जब सूरज को पहचान लिया तब न जाने क्यों उसे हँसी आ गई। भला बताइये कोई स्त्री अपने ही पति को इस हालत में देखे तो उसे कोफ़्त तो होगी ही लेकिन हँसी न आ जाय उसे यह नामुमकिन है। रेल में कोई आपकी जेब काटे और आप जेबकट को पकड़ कर देखें कि यह तो आप ही का छोटा भाई है तो हँस कर ही डाँटियेगा या पुलिस के हवाले कर दीजियेगा।

हम तीनों लौट आये। चंद्रकान्त को मालूम नहीं था कि सूरज सविता का पति है। उसने कहा—देखा आपने? है मुझमें कुछ अक्ल? पूरी भीड़ में ले जाकर किसके आगे खड़ा कर दिया आपको? जनाब जेब में पैसा चाहिये बस फतह है।

सूरज मेरी तरफ देख रहा था। मैं अब चन्द्रकान्त को चुप होने का इशारा भी नहीं कर सकता था। वह बकता गया सारा कालेज जानता है कि आज से दो साल पहले जब यह लड़की आइ टी में थी तब इसका एक मास्टर से दोस्ताना था। मास्टर आदमी काबिल था। पढ़ाई में तेज हाकी खेलने में नम्बर वन और हिन्दुस्तान में चुनाव और प्रेम में कमाल कर दिखाने वाली चीज भी उसके पास थी मेरा मतलब मोटर से है। यह दिन रात उसके साथ मोटर में घूमा करती थी। भाई हैं इसके अपने अलग मस्त।

कमबख्त बके जा रहा था। सूरज का सिर झुक गया। मैंने धीरे से इशारा किया कि चुप रह। मगर उसने समझा कि सूरज पर उस लड़की का प्रेम भूत बन कर सवार होने लगा है। उसने कहा— अभी छोड़ो भी ऐसी लड़कियों से तो दूर ही रहा जाय तो अच्छा। यह हिन्दुस्तान है हिन्दुस्तान! जब अपनी देसी सरकार बनेगी तो इन अधगोरों का क्या हाल होगा यह पंडित नेहरू भी नहीं बता सकते। जाने दो

यार ! समझदार आदमी हो। क्यों तुम प्रेम के चक्कर में फँसना चाहते हो ?

रात आ गई थी। सूरज बैठा सिगरेट फूँके जा रहा था। उसके चेहरे पर उदासी छायी थी। वह किसी घोर चिन्ता में पड़ गया था। देर के बाद उसने कहा— कल्ला चाचा को मालूम होगा यह सब तो क्या कहेंगे ?

मैंने सुना और सोचकर कहा— क्या क्या चन्द्रकान्त को तुम्हारे चाचा का पता मालूम है ?

नहीं, तो।

'तो फिर उन्हें कैसे मालूम होगा ? मैं तो कहने से रहा और सविता भी क्यों कहने लगी। अब आप ही अगर इतने अक्लमन्द हों तो मैं लाचार हूँ। कम-से-कम भई मैं तो इसमें कुछ नहीं कर सकता।

सूरज ने कहा— और तो कुछ नहीं लेकिन मुझे एक बात कचोट उठती है। जाते वक्त चन्द्रकांत ने कहा था कि जिस आदमी से इस लड़की की शादी होगी वह भी एक ही काठ का उल्लू होगा।

'गनीमत है' मैंने दिल में कहा।

'एक काम करोगे ?' सूरज ने कहा।

मैंने पूछा— क्या ?

सविता से मैं एकान्त में मिलना चाहता हूँ उसे कल यहाँ ले आओगे ?

मैंने कहा— बेखुश ! यह क्या मुश्किल है ?

सूरज ने एक लम्बी साँस को जैसे लाल किले से रिहा किया। मैंने कहा— कल शाम को जाऊँगा। उसके यहाँ।

सूरज खुशनजर आता था। दूसरे दिन जब शाम को मैं उसके कमरे में घुसा तो उसने हर्ष से मेरे कंधों को पकड़ कर कहा — क्या कहा सविता ने ?'

मुझे मन ही मन बड़ी हँसी आई। कानून की निगाह से धर्म की रूह से समाज के नियम से वही उस औरत का देवता है। मगर बात ऐसी करता है जैसे शादी के पहले का प्रेम हो रहा है।

मैंने कहा— बात जरा गौर करने की है। बैठ जाओ तब कहूँगा।

सूरज ने बैठ कर सिगरेट सुलगा ली।

मैंने कहा— मैं गया था उसके पास। उसने कहा— ऐसे कैसे मिल सकती हूँ? अभी तो हमारा गौना भी नहीं हुआ।

सूरज ने तड़प कर कहा— मुझसे मिलने के लिये गौने की जरूरत है? मास्टर से मिलने की तो किसी की जरूरत नहीं थी? कैसे कैसे आदमी हैं इस दुनिया में?

मैंने कहा— मास्टर से सिर्फ मिलना जुलना था। तुम्हारे यहाँ आने का मतलब स्पष्ट है। जमाना हँसेगा।

और तब न हँसता था? सूरज ने मुझे घूरते हुये पूछा।

मैंने कहा— खूब हो यार तुम भी! हकीकत से दुनिया डरती है। अपना ही मन साफ न हो तो तिनका भी पहाड़ नजर आता है।

लेकिन सूरज की समझ में न आना था न आया। उसने मेज पर मुट्ठी मार कर कहा— तो एक महीने के अन्दर देख लेना!

मुझे फिर हँसी आई जैसे वह कोई कमाल कर रहा हो।

लिख दिया सूरज ने अपने चाचा को। इजाजत लेना तो क्या एक तरह से इत्तला देनी थी। काम हो गया।

महीने भर बाद गौना हो गया। सविता उसके घर में आ गई। अब सूरज कभी-कभी मुझे भी घूरने लगा क्योंकि मैं बार बार सविता की तरफदारी करता था। कहा कुछ नहीं। थोड़े दिन तक जिन्दगी ऐसे चली जैसे चाय और दूध। लेकिन मैं आखिर कब तक चीनी बनकर स्वाद कायम रखता?

'एक दिन दबी जबान से सूरज ने सविता से उसके पहले जीवन के बारे में प्रश्न किया।

सविता ने कहा—आप ऐसी बातें करते हैं? मुझे सचमुच बड़ा ताज्जुब होता है। आप लोग जो कुछ करते हैं हम लोग तो उसका पाँच फी सदी भी नहीं कर पाते।

सूरज मन ही मन कुढ़ गया। उसके हृदय में पुरुषत्व की वह जायदाद की मिलकियत वाली बात जो उसमें कूट-कूट कर सदियों से भरी हुई थी भीतर ही भीतर चोट खाये साँप की तरह फुँकार उठी। स्त्री और पुरुष की क्या बराबरी? वेद में जिक्र है यज्ञ के खम्भे में अनेक रस्सियाँ बाँधी जा सकती हैं। हाँ एक रस्सी से दो खम्भे नहीं बाँधे जा सकते। सूरज चुप हो रहा। मास्टर से सविता का क्या सम्बन्ध था इस पर कोई प्रकाश नहीं डाला। वह जो अँधेरा था उसमें भीतर का अविश्वास नफरत का भयानक भेड़िया बनकर इधर उधर घूमने लगा कि कब शिकार की आँखें जरा झपकें और कब वह झपट कर अपने दाँतों की नोकों को उसके गले में गड़ा दे और उसके शरीर को नोंच नोंच कर तीखे नाखूनों से फाड़ डाले।

सीधी सादी बात थी। अगर सूरज पूछ लेता तो बात वहीं की वहीं साफ हो सकती थी। लेकिन अपना पाप ही तो समस्त निर्बलता की जड़ है।

सविता ने कहा—आप मुझ पर अगर शुरू से ही भरोसा नहीं करेंगे और बाहर वालों की बातों का ही यकीन करेंगे तो न जाने आगे क्या हाल होगा। माना कि आप मुझे अपनी बात पूरी तरह कहने का अवसर देंगे तो भी क्या यह जरूरी है कि जो मैं कहूँ, आप उसे सच ही मानेंगे? जाहिर ही है कि कोई अपने मुँह से अपनी बुराई नहीं करता। तो स्त्री होने के नाते जब आप मुझ पर किसी तरह भी विश्वास नहीं कर सकते तो मैं अपने आप चुप हो रहूँ यही बेहतर है। फिर

तनिक रुक कर कहा— आपने तो कहा था कि आप मुझे किसी तरह भी अपना गुलाम नहीं बनायगे। पर मैं देखती हू शादी के पहले जो आपने अपने खयालों की आजादी दिखाई थी वह सब झूठ थी।

सूरज उस समय तो हँस कर टाल गया। उसी शाम को उसके लिये एक नई रेशमी साड़ी भी लाया। सविता ने पहले तो प्रसन्नता दिखाई फिर उसने कहा— इस महँगी में इसकी क्या जरूरत थी?

तो क्या हो गया? सूरज ने प्रसन्न होकर कहा— पच्चीस जगह उठना बैठना होता है।

सविता ने उदास होकर पूछा— आप मेरी दिन की बातों का बुरा तो नहीं मान गये?

सूरज ने आँख झुका ली। तीर मर्म पर जा कर गड़ गया था।

सविता ने कहा— आप मेरी बातों का बुरा न माना कीजिये। मुझे बचपन से ही ऐसे बक बक करने की आदत पड़ गई है क्योंकि माँ बाप तो रहे नहीं जो तमीज सिखाते। लेकिन एक बात का मैंने पक्का इरादा कर लिया है अब। काम वही करूँगी जिसमें आप खुश हों। स्त्री के विचार वही होने चाहिये जो उसके पति के होते हैं। आप मुझे माफ कीजिये। कह कर वह रो पड़ी।

सूरज ने स्नेह से उसके आँसू पोंछ कर कहा— तो रोती क्यों हो? छि!

वह चुप हो गई।

सूरज ने मुझसे जब ये बात कहीं तो मैंने कहा— यह है हिंदुस्तानी! इसे कहते हैं हार।

क्या मतलब? सूरज ने कहा— कैसी हार?

एक जंगल का आजाद परिंदा पिंजरे में पड़कर सोच रहा है कि पिंजरा ही जीवन का सबसे बड़ा स्वर्ग है।

हू ! सरज ने मेरी ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा और कहा— अभी अकेले हो न ! जब तुम्हारी बारी आयेगी तब देखगे !

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। बेकार बहस करने से फायदा ? मैं चुप हो रहा। पर मुझे ऐसा लगा जैसे अँधेरे चलते चलते किसी को एक ब एक यह खयाल हो जाय कि उसका कोई पीछा कर रहा है और धोखे से वार करके उसे मार देने की राह देख रहा है।

सिन्नी ने चंदू की ओर देखा। दोनों इस समय ग भीर थे। कल्ला ने नई सिगरेट जला कर फिर कहना शुरू किया— आना जाना पहले की तरह जारी रहा। तुम जानते हो आदमी का दिल एक चट्टान की तरह है जिसकी जड़ को शक की लहर एक बार काटने में कुछ भी सफल हो जाती है तो एक न एक दिन ऐसा आता है जब पूरी-की पूरी च᳚ान लुढ़क जाती है।

कालेज में सरज ने मुझसे कहा— यार आज तो शाम को गोमती में बोटिंग को चलेंगे। वहाँ से फिर सिनेमा। साढ़े चार बजे हमारे घर ही आ जाना।

जब मैं उसके घर पहुचा तो सरज नहीं लौटा था। सविता ने गोल कमरे में ले जा कर मुझे बैठाया और जा कर स्टोव पर चाय के लिये पानी च ा दिया।

आकर पूछा— क्या खाते हैं आप ?

मैंने कहा— सब कुछ खाता हू, बशर्ते कोइ खिलाये।

हँस पड़ी वह। बोली— खाने की तो ऐसी पड़ी नहीं पर उनका इतजार तो करेंगे न ?

मैंने कुछ नहीं कहा।

आते ही होंगे उसने मुस्करा कर कहा— वक्त तो हो गया है। क्यों आज क्या कोई प्रोग्राम है ?

मैंने कहा— जी नहीं बस शाम को नदी की सैर करने का विचार है। फिर सिनेमा

उसने काटकर कहा— तो और क्या रात भर घूमना चाहते हैं? कह कर वह हँस पड़ी। कहा— आप जानते है मैंने कालेज छोड़ दिया है।

जी ऐसा क्यों? मुझे सचमुच मालूम नहीं था।

उसने मुस्कराते हुये उत्तर दिया— उनका मेरा कालेज जाना पसंद नहीं। कहते थे बी ए तो कर चुकी हो एम ए न के क्या तुम्ह नौकरी करनी है?

उसके स्वर में एक तीव्र वेदना थी जो उसके मुस्कराने के प्रयत्न से और भी कठोर प्रतीत हुइ मुझे ऐसा लगा जैसे खिलौने सामने फैला कर कोइ ब चे से कह रहा हो खबरदार जो हाथ लगाया!

मैंने विक्षुब्ध होकर कहा— आपने सरज से यह नहीं पूछा कि उनको बी ए तक पढ़ने की क्या जरूरत थी?

अब यह तो आप ही पूछिये। मुझमें तो इतनी ताब नहीं कि बार बार उल्टी-सीधी बात सुनू।

मैंने सुना। कि तु मन का कौतूहल फिर भी जागा ही रहा। मैंने पूछा— अच्छा एक बात पूछता हू माफ कीजियेगा बात जरा कड़ी है। आप कालेज में न होतीं, तो सरज बाबू क्या आपको कभी देख सकते थे? और जब यही नतीजा निकलना था तो चाचा से कह कर किसी बिल कुल ही पुराने ढंग की लड़की से उन्होंने क्यों नहीं शादी की।

मन तो बहुत कुछ बकने का था लेकिन हठात् चुप हो गया क्योंकि उसी समय सरज कमरे में आ दाखिल हुआ। उसका प्रवेश इतना आकस्मिक था कि एक बार हम दोना ही चौंक उठे। सरज की तेज आँखों ने इसे देख लिया।

दूसरे दिन जब मैं सरज के यहाँ गया तो बाहर बरामदे में ही

ठिठक गया। अंदर से सरज की आवाज आ रही थी मेरी गैरहाजिरी में अगर कोई भी आये तो दरवाजा खोलने की तो क्या, जवाब तक देने की जरूरत नहीं है।

फिर सविता की आवाज सुनाइ पड़ी बहुत अच्छा! आपके चाचा जी आयें तब भी।

उन्हें तो दूर करने की कोशिश करोगी ही! अजी बाहरी लोगों के लिये कहा हैं।

तो मैंने किस किसको बुलाया है?'

कल वह कौन आया था?

मैंने बुलाया था कि आपने? मैंने तो उल्टे आप पर एहसान किया कि आपके एक दोस्त की नजर में आपको गिरने नहीं दिया।

मुझे इन एहसानों की जरूरत नहीं। सरज का स्वर दृढ़ था कठोर भी।

आपकी जैसी मर्जी। मुझे किसी से क्या मतलब है?

मैंने सुना। क्रोध से मेरी आत्मा छटपटा उठी। बाहर ही से लौट आया।

इसके बाद मैंने उसके घर पर आना जाना बहुत कम कर दिया। इम्तहान आ गये। कह कर कल्ला चुप हो गया।

चुप क्यों हो गये? चंदू ने चौंककर पूछा।

सिगरेट। माथे पर बल डाल कर पूरी आँख फाड़ते हुये कल्ला ने कहा— जरा थक गया हूं।

तो हुजूर मालिश?

'नो थक्स।

सिगरेट जलाकर कल्ला ने कहा— मुझे अपनी साइकिल वापिस मिल गई। जो लड़का मेरी साइकिल पहुँचाने आया '

सिद्दी ने काटकर पूछा— इसी बीच में साइकिल कहाँ से आ गई!

यार कोई मैं गढ़ गढ़ कर तो सुना नहीं रहा। अब जैसे जैसे याद आता जायगा मैं तुम्हें सुनाता जाऊँगा। कोई सबक तो मैं आपको सुना नहीं रहा हू।—कल्ला बिगड़ कर बोल उठा।

अच्छा अच्छा! चन्दू ने बीच में पड़ते हुए कहा—तो साइकिल वाला लड़का?

हाँ कल्ला ने कहा—उसके हाथ में एक खत था। खोल कर पढ़ा—

प्रिय भाई

अब हम गाँव जा रहे हैं। आपकी साइकिल वापिस भेज रही हू। धन्यवाद!

आपकी

सविता।'

साइकिल उठाकर धर ली। मुझे मालूम हुआ कि साइकिल ही इस विद्वेष की जड़ थी।

मेरे एक दोस्त थे। साइकिलों की चोरी करना ही उनका रोजगार था। एक बार यह कानपुर से एक साइकिल चुरा कर लाये। बोले—'बहुत दिन से सस्ती साइकिल माँगा करते थे। अब ले लो! मैंने कहा—वाह यार! गोया हम मर्द न हुए औरत हो गये जो आप जनानी साइकिल ला कर एहसान जता रहे हैं! माँगी थी पतलून लाये हैं साड़ी!

बोले—भई दिक न करो! हमें कुछ नहीं चाहिये सिर्फ पंद्रह रुपये दे दो! फिर मामला तय होता रहेगा।

चंद्रकांत की भाभी आने वाली थी। उसने कहा—अबे भाभी के काम आ जायगी। ले ले!

एक दिन कालेज में सविता मिली। बात चलने पर उसने कहा—

देखिये घर हमारा है बहुत दूर। पैदल आते आते दिवाला निकल जाता है।

मैंने कहा— आपको साइकिल तो दे सकता हूं पर कुछ ही दिन के लिये।

सविता प्रसन्न हुई।

अब वह साइकिल पर बैठ कर कालेज जाने लगी।

एक दिन सविता ने मुझे कालेज में रोक लिया। पैर में पट्टी बँधी थी। लगड़ा-लगड़ा कर चल रही थी।

मैंने कहा— क्या हुआ?

चोट लग गई।

तो अब तो ठीक है?

हां एक तकलीफ दूँगी।

मैंने कहा— फर्माइये।

एक तांगा ला दीजिये।

क्यों साइकिल क्या हुई

वह मैं वापस कर दूगी।

क्यों?

कल वह आये थे हमारे घर। मैं लौट कर आई तो भैया ने कहा— सविता यह साइकिल तू कहां से ले आई? मैंने बताया। भैया ने कहा — सूरज को मालूम है? मैंने कहा उनसे तो कभी मिलती नहीं। भैया ने कहा आज सूरज आया था कहता था चाचा आये थे। उन्होंने सविता को साइकिल पर बैठे देखा था।

मैं सुनता रहा। सविता सुनाती रही चाचा ने बहुत बुरा माना था। भला कोई बात है कि घर की बहू-बेटियाँ साइकिलों पर घूमा करें। भैया ने कहा— सूरज बाबू कह गये हैं कि सविता को साइकिल पर जाने से तो रोक ही दें। मैंने भैया से कहा। आपने कहा नहीं कि

कालेज दूर है ? कहा था भैया ने कहा पर सरज ने कहा कि यदि यह बात है तो पढ़ाई की ही ऐसी क्या जरूरत है ? मुझे बहुत बुरा लगा। मैंने कहा मैं तो साइकिल पर जरूर चढूंगी। तब भैया ने कहा देखो सविता अब तुम बच्ची नहीं हो। शादी के बाद तुम्हें अपनी आँख खोल कर चलना चाहिये। यह बचपन अब काम नहीं देगा। कह कर सविता चुप हो गई। फिर कहा—भिजवा दूंगी आपकी साइकिल।

मैंने कहा—सुना है, आपका

जी हाँ। उसने लाज से सिर झुका कर कहा।

मेरा इशारा उसके गौने की ओर था। वह तांगे में चली गई।

पत्र हाथ में लेकर मैंने सोचा अब वे गांव में होंगे। साइकिल लाने वाला लड़का खत देने के कई दिन बाद आया था। उसकी मेहरबानी थी कोई नौकर थोड़े था वह।

एक एक कर चित्र मेरी आँखों में घूमने लगे। यही थी सविता की सरज के प्रति उपेक्षा। उसकी आदर्शों की वास्तविकता देख कर धीरे धीरे उसका मन भीतर ही भीतर कुढ़ता जा रहा था।

किंतु यौवन फिर भी प्यासा होता है। समाज के जिस बंधन को हम विवाह कहते हैं उसका कार्य-कारण रूप चाहे कैसा ही कठोर वास्तविक आवश्यक क्यों न हो किंतु उसकी पृष्ठ भूमि में मनुष्य जीवन का वही संचित व्याकुल मोह है।

मैं नहीं जानता कि यह कहते हुए मैं कहाँ तक ठीक हूँ कि मनुष्य के समस्त अन्वेषण उसकी कला उसके विज्ञान युद्ध और जो कुछ भी उसकी हलचल है उसके मूल में वही एक हाहाकार करती तृष्णा है जिसे वह समवेदना सहानुभूति और प्रेम की मृगतृष्णा समझ रहा है ?

सविता का जीवन उस तलवार की तरह था, जिसकी धार को

कोई कायर योद्धा पत्थर पर मार कर तोड़ देना चाहता हो। उसमें इतना साहस नहीं है जो वह उसे उठाकर उससे समाज की घृणित व्यवस्थाओं पर चोट करे और उसके खून से उसकी धार चमका दे।

सविता की बहन कभी-कभी जब कालज में मिलती तो पूछती कि मुझ दीदी की कोई खबर मिली। मैं कह देता कि जब उसे ही कोई खबर नहीं मिली तो भला मुझ कैसे कुछ ज्ञात हो?

अविश्वास की जिस तेज छुरी से सरज के भय के सारे सम्बन्धों को जड़ से काटना शुरू किया वही उसके सुख को काट काट कर लहूलुहान करने लगी। मैं बहुधा सोचता कि क्या उनका जीवन अब सुधर गया होगा?

इसके बाद शाम को मैं इलाहाबाद में गंगा के किनारे टहल रहा था। सूरज डूब रहा था। लाल-लाल किरणें पानी पर उतर कर ललाई फैला रही थीं। हवा में कुछ नमी आगई थी।

एकाएक किसी ने आवाज दी— मिस्टर कल्ला!

मैं एकदम चौंक गया सोचा यहाँ कौन कमबख्त आ टपका? जान पहचान वालों से मैं उतना ही चकराता हू जितना सड़क पर बदत मीजी से भागती हुई भैंस को देख कर। मुड़कर देखा आँखों को विश्वास नहीं हुआ। सोच सकते हो कौन था वह?

शि ी और चंदू ने सवालिया जुमला बनी भौंहों को उठा दिया।

था कौन? वह सविता थी!

सविता?' दोनों ने आश्चर्य से कहा।

जनाब! वह सविता ही थी। कल्ला ने खाँस कर कहा—देख कर मेरी आँख फैल कर रह गई। वह अकेली थी। उसके शरीर पर सादी साड़ी और एक लाउज़ था। माँग में सिंदूर नहीं था। माथे पर बिंदी जरूर थी। हाथों में चूड़ियाँ भी थीं। समझ में नहीं आया कि उस फैशन की पुतली में यह सादगी कैसे आ गई?

मेरे मुँह से सहसा निकला— सविता देवी ! आप यहाँ ? अकेली !

वह हँस दी। कहा—'क्या आप इलाहाबाद से कब आये ?

जी मैं तो कल ही रिसर्च के सिलसिले में आया हू।

सामान कहाँ पड़ा है ?

होटल में।

मेरे यहाँ ठहरने में आपको कोइ एतराज तो न होगा ?

मैंने कहा— आप कहाँ ठहरी हैं ?

मैं तो यहीं रहती हूँ।

इसके बाद हम लोग थोड़ी देर तक टहलते रहे। कुछ रिसर्च के बारे में बात हुई। मुझे विस्मय हुआ उसकी जानकारी की बात सुन कर। पहले तो उसने कहा कि उसका वह विषय नहीं है और उस पर बात करना उसके लिये एक अनधिकार चेष्टा है। पर सच कहता हू, उसकी बात सुनकर मेरी रूह काँप गई। मैं अपने खास विषय पर उस सफाई से बात नहीं कर सकता जिस पर सविता सिर्फ अनधिकार चेष्टा मात्र कर रही थी। फिर सोचा अच्छा ही है कि सविता का यह विषय ही नहीं वर्ना मुझे सात जम में भी डाक्टर बनना नसीब नहीं होता।

अँधियारी घिरने लगी। सविता ने कहा— तो चलिये अब आपके होटल चल। वहाँ से आपका सामान लेकर चलेंगे।

मैंने कहा— कहाँ चलियेगा ?

घर उसने हस कर कहा— हँसिये नहीं। कुल एक कमरा है। उसे घर कह लीजिये बँगला कह लीजिये मेरे लिये काफी है। छोटी बहिन को लिखा था आने को लिखा है उसने कि एक हफ्ते के भीतर ही आ जायेगी। मैंने तो भैया से भी कहा था कि प्रक्टिस वैक्टिस का खब्त छोड़ दें और आकर यहीं कोई नौकरी कर लें। चलिये न !

'मैं लाचार हो गया। हम लोग चलने लगे।

सविता ने कहा— एक वक्त था जब घर की हालत बहुत अच्छी थी। मगर अब हालत ठीक नहीं रही।

मैं सोच में पड़ गया। पारिवारिक जीवन की जो झंझटें अधेड़ औरतों को हुआ करती हैं वे आज सविता को खाये जा रही थीं। कल वह एक लड़की थी। गाया करती थी। आज उसकी बातों में एक बुजुर्गी थी एक स्थिरता थी।

जब हम होटल में पहुँचे तो काफी ठण्डी हवा चलने लगी थी। आसमान में कुछ बादल भी इकट्ठे होने लगे थे। एक ताँगे में सामान रखा। हम दोनों बैठ गये। सविता ने घर का रास्ता ताँगेवाले को समझा दिया और फिर मुझसे बातें करने लगी। अबकी उसने मेरे विवाह के पहलू पर बात शुरू कर दी।

उसकी बातों में कोई सिलसिला नहीं था। उसके मन में जैसे इतना कौतूहल था इतनी सम्वेदना थी कि वह मेरे विषय में कुछ जान लेना चाहती थी।

घर पहुँच कर उसने बत्ती जला दी और खाने का इंतजाम करने लगी। चूल्हे पर कुछ चढ़ा कर जब वह बाहर आई तो उसमें और हिन्दुस्तानी घरों की औरतों में कोई फर्क न था। कल वह शायद इन औरतों से नफरत करती थी।

मैं बैठा बैठा सिगरेट पीता रहा। सविता ने कहा— कहाँ सोइयेगा? बरामदा तो है नहीं। छत पर तो शायद रात को आप भीग जायेंगे।

आप क्या कमरे में ही सोती हैं?

जी नहीं जब गर्मी होती है, तो ऊपर सो रहती हूं। चटाई बिछाइ और बिस्तर लगा दिया। फिर रुककर बोली— सच आपसे मिलने की बड़ी इच्छा थी। आप ही तो हमदर्द थे मेरे उस जीवन में जिससे सब घृणा करते थे, और वह सच्चा विश्वास सबकी आँखों में

व्यभिचार का पाप बनकर खटका करता था। अरे मैं तो भूल ही गई। कहीं दाल उफन न गई हो।

फिर वह उस छोटी-सी रसोई में घुस गई। मैं कुछ कुछ समझने लगा।

उसके बाद जब वह लौटी तो मेरे सामने थाली धर दी। फिर अपने लिये खाने का सामान लगा लाई।

हम दोनों खाने लगे।

खाते-खाते हठात् उसने पूछा— कैसा खाना बनाती हू?

मैंने कहा— अच्छा तो है।

धीरे से उसने कहा— वह लोग कहते थे कि मैं खाना बनाना भी नहीं जानती हूँ।

वह हूँ मेरे कानों में सुई की तरह चुभ गई।

मैंने कहा—'कौन कहते थे?

वे कहते थे उसने कहा — मैं तो मेम हूँ। बेवकूफ! वे क्या जान कि मेम भी अपने कायदे से अपना खाना बनाना जानती हैं। फिर क्या खाना अच्छा बनाना औरतों के लिये जरूरी है?

मेरे मुँह से निकला— फिलहाल तो है ही। वैसे बना लेना काफी है। उस्ताद तो खाना बनाने में औरत कभी नहीं रही। पाक तो दो ही प्रसिद्ध हैं—भीम पाक और नल पाक और दोनों ही पुरुष थे।

वह जोर से हँसी। उसने कहा— वहाँ नौकरानी थी, पर काम तो बहू ही करेगी। करने को तो मना नहीं किया मैंने। पर कोई तुल जाय कि मेरा बनाया उसे पसन्द ही नहीं आयेगा तो कोई कितना भी अच्छा बनाये क्या नतीजा निकलेगा? बस वही हुआ जो होना था।

हम लोग खा चुके थे। छत पर चटाई बिछाकर बैठ गये। मैंने अपनी सिगरेट जला ली।

मतवाली हवा थी। सिर पर पीपल खड़खड़ा रहा था। हम दोनों उस अंधेरे में पास पास बैठ थे।

सविता ने कहा— अच्छा सच बताइये आपको यह सब देखकर कुछ ताज्जुब नहीं हुआ?

मैंने कहा— नहीं।

'वह कुछ देर मुझे घूर कर देखती रही। फिर कहा—'यह अंधेरी रात यह सनसनाती हवा और मैं किसी दूसरे की पत्नी! ता ज्जुब नहीं होता तुम्हें कक्काजी? सोचते नहीं कछ मेरे बारे में?

वह हँसी। फिर गम्भीर हो गई। कठोर स्वर में कहा— विश्वास नहीं कर सको तो न करना। कि तु यदि घृणा ही तुम्हारे आश्वासनों का एकमात्र आधार है तो भी मैं तुमसे घृणा नहीं कर सकूँगी।

मैंने रोक कर कहा— सविता देवी!

सविता का बांध टूट गया। आँखों में आँसू छलक आये जि हें उसने मुँह मोड़ कर शीघ्रता से पोंछ लिया। जब उसने मेरी ओर देखा तो हँस रही थी जैसे कुछ हुआ ही नहीं।

सविता ने कहा— एक दिन हम दोनों रात को बैठे बात कर रहे थे। उ होंने कहा— सविता अब तो परीक्षा भी हो गई। तुम्हारा क्या विचार है? गाँव चला जाय तो कैसा? मैं नहीं जानती उ होंने क्या सोच कर यह प्रस्ताव किया। गाँव तो दूर न था किंतु मैं गाँव जाने का नाम सुन कर ही डर सी गई। न जाने मेरी आ मा में एक अनजान यातना की भावना कैसे भर गइ। किंतु मैंने कहा चलिये मुझे कोई उज नहीं।

तीसरे दिन हम चल पड़े। मैंने एक बसंती रंग की रेशमी साड़ी पहन रखी थी पैरों में ऊँची ऐड़ियों की सैंडल थीं। बस, और कोई खास बात न थी।

हमने इक्का कर लिया। इक्केवाले ने मुझे घूर कर देखा। उनसे पूछा— सरकार कहाँ चलूँ?

उन्होंने पता बताया। उसी गाँव का इक्केवाला भी था। फौरन उन्हें पहचान गया। फिर उसने एक बार दबी नजरों से मेरी तरफ मुड़ कर देखा और मुस्करा कर अपनी तरफ की बोली में कहा— सरकार की पढ़ाई तो खतम हो गई?

उन्होंने कहा— हाँ।

इसके बाद वे कुछ चिंता में पड़ गये। उनके मुख पर स्पष्ट ही कुछ व्याकुलता के चिन्ह थे। मैंने अँग्रेजी में पूछा — आप इतने परेशान क्यों हैं?

उन्होंने मेरी ओर देख कर एक लम्बी साँस ली। शायद एक बार पूरे शरीर में एक कपकँपी सी दौड़ गई। उन्होंने बहुत धीरे से अंग्रेजी में ही उत्तर दिया— मैंने गलती की कि तुम्हें यहाँ इस तरह ले आया। अब भगवान के लिये कम-से कम कुछ तो शरम करो! सिर तो ढक लो।

मैं मन ही मन बहुत विक्षुब्ध हुई। मैंने भला कब मन किया था। किंतु शहर में तो इन्हें यह सब बुरा नहीं लगता। गाँव की तरफ पैर उठाते ही क्यों कुछ से कुछ होने लगे? जैसे मैं कोई अग्रज थी कि मुझे हिंदुस्तान में शरम करने की रीति भी नहीं मालूम थी। शरम का विचार भी कैसा अजीब लगता है। मदरासी औरत कभी सिर नहीं ढकतीं तो क्या वे सब बेशरम हैं?

खैर एक सिर क्या मेरे दस सिर होते तो भी मैं उन्हें ढक लेती। एक दिन में तो किसी देश के रीति रिवाज अच्छे हों या बुरे हों कभी बदल नहीं जाते।

इक्का बढ़ा जा रहा था। उस राह के दचके याद आते ही अब

भी कमर में दर्द होने लगता है। पहली ही बार मुझे मालूम हुआ कि गाँव की जिंदगी कितनी कठिन है।

उसके बाद हम लोगों ने बैलगाड़ी पकड़ी। जैसे-जैसे गाँव पास आता जाता था, उनका चेहरा फक पड़ता जा रहा था। लगता था जैसे उन्हें मुझ पर असीम क्रोध आ रहा हो। मेरा मुँह खुला ही था। यह मुझे वास्तव में बहुत ही घृणित मालूम दिया कि मुह पर मैं एक लम्बा सा घूघट खींच लू और फिर उनकी ऐड़ियों पर नजर गड़ाये चलू।

रास्ते में जो भी गाँव वाले मिलते हमें खुली बैलगाड़ी में बैठे आपस में एक दूसरे की ओर देख कर वे मुस्कराते। वह यह सब देखते और जल भुन कर खाक हो जाते। किंतु करते क्या? एक बार तो मुझे लगा जैसे अब एक चाँटा पड़ने ही वाला है। लेकिन मुझे स्वयं उनके ऊपर अचरज हुआ। यह आदमी शहर में क्या क्या रंग नहीं दिखाता जो यहाँ बिलकुल ही फक पड़ता जा रहा है? गाँव के बहुत-से छोटे-छोटे लड़के और लड़कियाँ हमें देख कर कौतूहल से इकट्ठी हो गईं। मैंने उनकी बातों को सुना। वे आपस में कह रहे थे— छोटे मालिक शहर से पतुरिया लाये हैं। आज कोठी में नाच होगा

उनके आनन्द की सीमा न रही। उनके जीवन का यह भी एक बड़ा स्वग है कि मालिक के घर रंडी नाचेगी और वह देख सकेंगे। मेरे मन में तो आया कि धरती फट जाय और मैं समा जाऊ। वह घृणित शब्द पतुरिया मेरे हृदय पर हथोड़े की सी भयानक चोट कर उठा। आज उन अज्ञानी देहाती अनपढ़ बच्चों ने उस संस्कृति का पर्दा फाड़ कर रख दिया था जो उनके मालिक ने उन्हें दी थी।

मैंने देखा वह चुप बैठे थे जैसे यह व्यक्ति मोम की एक पुतली मात्र है। मेरी आँखों में आँसू उबल रहे थे जिन्हें मैं जबरन अपने होंठ काट कर रोक रही थी। और बच्चों की खुशी का वह कठोर शब्द

पतुरिया मेरे सारे जीवन के संचित पुण्य और अभिलाषाओं के साथ एक भीषण बलात्कार कर रहा था।

शहर में कोई यदि मुझसे यही बात कहता तो मैं उसकी आँख नोंच लेती। किन्तु वहाँ मैं कुछ भी नहीं कर सकी। वास्तव में यह सोलहवीं सदी के स्थिर अ धकार का बीसवीं सदी की चलती किरन पर हमला था।

दिन भर मुझ लम्बा घूँघट खींच कर रहना पड़ता था। किन्तु मैंने कभी कुछ नहीं कहा।

घर में उनकी चाची उनकी बुआ बुआ की बहिन की लड़कियाँ और एक बूढ़ी मामी थीं। उन बुन्यों को जैसे एक नया शिकार मिल गया था।

जब कभी वह मुझे मिलते मैं कहती शहर चलिये। यहाँ तो मन नहीं लगता तो वह कहते कुछ दिन तो रहना ही होगा। सदा तो यहाँ रहना नहीं। फिर इतनी घबराती क्यों हो? थोड़े दिन ऐसे ही रह लो।

गाँव में अँधेरा हुआ नहीं कि बस ब्लैक आउट हो गया। जहाँ लोग पढ़ना लिखना नहीं जानते, जहाँ लोग दिन में इतनी कड़ी शारीरिक मेहनत करते हैं कि रात को कोशिश करके भी नहीं जाग सकते वहाँ रोशनी जले भी तो किसलिये? वहाँ तो बस आदमी ने प्रकृति से बस इतना संघर्ष किया है कि सिर पर एक छप्पर छा लिया है और कुछ नहीं।

घर की बगल में अपना ही एक छोटा मकान था। उसमें उन्होंने लगभग तीन चार साल पहले एक पुस्तकालय खोला था। उसमें सैकड़ा पुराने उपन्यास भरे हुए थे। दैनिक पत्र भी आता था।

सुबह चाचीजी मुझे सबके उठने से पहले उठा देतीं। मैं तब झाड़ बाड़ लगा देती ताकि जब लोग उठ तो मुझे उनके सामने यह काम करने की नौबत न आये। फिर मैं खाना बनाने में जुट जाती ी।

सबको खिलाते पिलाते प्राय तीन बज जाते। फिर शाम को खाना बनाने की तैयारी होती। रात को जब सब खा चुकते तब प्राय नौ बज जाते। उसके बाद पैर दाबने की रस्म के लिये तैयार रहना पड़ता। जितनी स्त्रियाँ थीं सभी के पैर दाबने पड़ते। आप ही बताइये किसके पैर में दर्द नहीं होगा जब कोई आदमी पैर "ाबने को खुद-ब खुद पहुच जाय!

साढ़े ग्यारह बजे रात को मैं एक दिन उपन्यास लेकर लालटेन जला छत पर बैठ गई। दूसरे ही दिन चाची ने कहा— बहू तुम बहुत रात तक पढ़ती हो। लोग बाग कहते हैं कि सिर खोले ही बहू छत पर बैठती है। यह तो भले आदमियों के घर के कायदे नहीं! रात को देर तक पढ़ोगी तो सुबह उठने में भी देर हो जाया करेगी।

मैं खून का घूट पीकर रह गई।

रात को मेरा बिस्तर भी उसी छत पर लगाया जाता था जिस पर और औरत सोया करती थीं। यह मैं मानती हूँ कि कभी-कभी मैं पढ़ने के कारण देर तक जागती रहती और उठने में देर हो जाती। कभी कभी रात को मैं इतनी थक जाती कि फिर किसी के पैर वैर दबाने नहीं जाती। इस पर एक हँगामा उठ खड़ा होता। बहू क्या हुई आफत का परकाला हो गई। भला कोई बात है? यह कोई कायदा है?

मैंने अब इधर उधर यान देना छोड़ दिया। रात को पढ़ने के बाद इतनी थकावट आ जाती कि जाकर बिस्तर पर एकदम बेहोश हो जाती और किसी बात का यान ही नहीं रहता। जब दो चार दिन ऐसे ही बीत गये तो अचानक एक रात उनके सिर में दर्द होने लगा। मैं मर हम लेकर गई। किन्तु इ दर्द कैसा दद था वह मुझसे छिपा नहीं रहा। दर्द की भी कोई हद होती है। रोज रात हुई नहीं कि उनका दर्द शुरू हो गया और मुझे उसी तरह वहीं रह जाना पड़ता। हम दोनों को दूसरी छत पास होने के कारण कोई स्वत त्रता नहीं थी।

१ 'डाक्टर कहते हैं इंसान को जवानी में कम से कम छ घंटे सोना

चाहिये। किन्तु मेरी रात तीन घंटे की ही गई थी। उस थकान के कारण मुझमें एक प्रकार का चिड़चिड़ापन पैदा हो गया।

एक रात उन्होंने कहा—तो तुम पत्नी क्यों हो ?

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया।

उन्होंने कहा भारतीय नारी सहनशक्ति की एक प्रति मूर्ति समझी जाती है।'

मैंने ऐसी रटी हुई बहुत सी बात सुनी थीं। कहा कि आप मुझे शहर में ही रखें तो अच्छा हो।

उन्होंने देर तक सोचा।' फिर कहा शहर तो चलना ही है। लेकिन जिस गाँव के कारण शहर है उसमें भी तो रहना होगा।

मैं फिर चुप हो गई। देर के बाद मैंने कहा आप बुरा न मानें तो एक बात कहूँ।

उन्होंने कहा कहो।

मैंने कहा गाँव की यह जिन्दगी आपको जैसी भी लगे मुझे तो अच्छी नहीं लगती। इससे तो यह अच्छा हो कि आप अपने पैरों पर खड़े होकर कमायें खुद खायें और मुझे भी खिलायें। गरीबों का खून चूसकर अपने स्वार्थों को कायम रखने के लिये उन्हें धोखा देकर अपने जीवन का आदर्श खो देना मुझे तो अच्छा नहीं लगता।

वह चौंक उठे। उन्होंने कहा तुम्हारी हर बात में कुछ नफरत है। प्रत्येक स्त्री तकलीफों के होते भी अपने पति से अवश्य मिलना चाहती है। पर तुम हो कि किस्से कहानियाँ पढ़कर सो जाती हो। तुम्हें कभी मेरी चिन्ता भी नहीं हुई। इसी से सिर दर्द के बहाने तुम्हें बुलाना पड़ता है फिर एक लम्बी साँस खींचकर कहा तुम्हें न जाने क्या हो गया है ?

मुझे हँसी आ गयी। मैंने मजाक में ही कहा आपसे नफरत भी

करूँगी तो क्या हो जायेगा ? आप फिर मेरे पति न रह कर कुछ और हो जायँगे क्या ?

'उन्होंने मुझे घूर कर देखा और कहा तो तुम समझती हो कि तुम फस गई हो। अर्थात् तुम मुझ प्यार नहीं करतीं ?

मैं बड़े चक्कर में पड़ी। किसी से कोई कैसे कहे, मैं तुम्हें प्यार करता हूं। सच मेरा तो मुँह नहीं खुलता। एकदम बड़ी लाज सी मालूम देती है। मैंने कोई उत्तर न देकर एकदम चुप्पी साध ली। उन्हें जमींदारी की शान के विरुद्ध कही हुइ बात अच्छी नहीं लगी। कहने लगे खानदान की इज्जत को कायम रखना पहला फर्ज है सविता।

मैंने कहा लेकिन अब तो सवाल ही दूसरा है। कल तक आप दूसरों को पिटवाने में अपनी शान समझते थे आज वह बबरता बढ़ गई है। आप स्वतन्त्रता के आदर्शों को लेकर चले थे और यहाँ रीति रिवाजों की खूनी धारा में सब कुछ बहाते चले जा रहे हैं। खानदान की इज्जत क्या इसी में है कि आप इसी तरह बेकार पड़े रहें दूसरा के पसीने की कमाई खाया करें ? क्या आप जिन रस्मों को खानदान की इज्जत कह कर पाल रहे हैं आप उसी गँवारपन में विश्वास करते हैं ?

वह घूरते रहे। कहा तुम्हारी बातें कैसी रटी हुई-सी लगती हैं। यहाँ कोई डिबेट हो रहा है क्या ?

मैंने कहा आप इतनी बड़ी बात को हसकर टाल रहे हैं ? आप में मुझे यकीन हो गया है साहस की कमी है।

उन्होंने कहा धीरे धीरे बात करो सविता ! कोइ सुन लेगा।

मुझे बहुत ही बुरा लगा।

'उन्होंने कहा अच्छा मान लो तुम्हारे पीछे सब को छोड़ दूँ।

'मैंने कहा ऐसा आप सपने में भी खयाल न करें। अगर आपने ऐसा सोचा है, तो आपने बड़ी भारी गलती की है। मैं अपने लिये नहीं कहती। मैं उस विचार स्वातंत्र्य और आदर्श का विचार करके कहती

हूँ जिसके आप पहले स्वयं कायल थे। घर छोड़ने को तो मैंने नहीं कहा। मैंने सिर्फ कहा कि पुराने ढर्रे की झूठी रस्मों को छोड़कर हम और आप वही करें जो आज तक कहा है।

उन्होंने कहा ऐसा नहीं हो सकता सविता! भले ही तुम आदर्शों की दुहाइ दिये जाओ लेकिन जो कुछ होगा उसे देखकर लोग समझेंगे कि एक औरत की बात सुनकर घर छोड़ चला गया कपूत। और यह मैं कभी बर्दाश्त नहीं कर सकूँगा?

एक बार मेरा रक्त क्रोध से खौल उठा। कितना भारी कायर था वह व्यक्ति जो अपने जीवन की सारी झूठ का सहारा ले अपनी प्यास बुझाने के लिये मुझसे प्रेम की आड़ में विलास चाह रहा था।

सुबह की सुफेदी झलमलाहट पर मुर्गे की गूँजती हुइ बाँग सुनाइ दी। मैं उठ गयी क्योंकि मेरे झाड़ू लगाने की बेला आ गइ थी।

मैंने एक बार करुण आँखों से उनकी ओर देखा किन्तु वह झपकी ले रहे थे।

मैं उठ गइ। वह सो गये।

उस दिन मेरा शरीर थकान से चूर चूर हो रहा था। काम तो करना ही था। यदि किसी से कहती कि मैं सोना चाहती हूँ रात को सो नहीं सकी तो जो सुनता वही मुझे निर्लज्ज समझता। लज्जा और संकोच ने मेरी जीभ को तालू से सटा दिया और मैं बराबर काम करती रही।

दोपहर को जब मैं कमरे में बैठी थी मुंशीजी पुस्तकालय बन्द कर चाभी देने भीतर आये। उस समय वहाँ कोई और नहीं था। मुन्शी जी मुझे देखकर एसे घबरा गये जैसे कमरे में कोइ साँप पड़ा हो। मैंने कहा चाभी मुझे दे जाइये और कल का अखबार आपने क्यों नहीं भेजा?

"मुन्शीजी ने लजाते हुये सिर नीचे करके जवाब दिया भिजवा दूँगा।

वह चले गये। इसी समय मैंने उनकी बुआ की बहिन की बेटी का ककश स्वर सुना— आय हाय! देखो तो कैसी लपर लपर जीभ चला रही है! जरा भी तो हया शर्म हो!

मैं एकाएक काँप उठी। उत्तर दिया बूढ़ी मामी ने—'अच्छा किया दुल्हिन बहुत अच्छा किया! मुन्शीजी को देखकर तेरी चाची या सास तक घूँघट खींचकर चुप हो जाती हैं। एक नहीं उनके अनेक बच्चे हो चुके हैं। तेरे एक आध तो हो जाता।

एक तीसरी आवाज सुनाई दी— अजी हटो मामीजी! कोई बात है। उल्टे मुन्शीजी शरमा रहे थे। और दुल्हिन रानी हैं कि मुँह तक नहीं ढँका गया। छि! यह भी कोई बात है?"

बुआ की भाँजी ने कहा—'पढ़ी लिखी हैं जी! तुम तो हो गँवार! शहरों का यही रिवाज है। पराये मर्द से जब तक हँस हँसकर बातें कर न ले तब तक खाना कैसे हजम हो? जाने बचारी कितने दिन के बाद आज यह मौका पा सकी है।

इसी समय चाची आयीं। उन्होंने भी सुना। तुरंत आ गई मेरे कमरे में। हाथ मटका कर कहा— हाय दुल्हिन यह तूने क्या किया? भाड़ू न लगी न सही पैर न दबाये तूने बड़ी बूढ़ियों के! तेरी बात तेरे ईमान पर! हमने कभी तुझे कुछ कहा हो तो हमारी जबान में कीड़े पड़ जायँ! मगर यह क्या है कि पढ़ाई लिखाई ने तेरी चुटिया के नीचे से अकल ही साफ कर दी?

वह क्रोध से हाँफ रही थीं। मैं चुप बैठी रही जैसे मैं जीवित नहीं। मुझे मालूम हो रहा था कि जो कीड़े मेरी नसों में खून बनाकर भाग रहे थे वे अब धीरे धीरे जमने लगे थे मरने लगे थे और अब वे सब मर जायगे और उन्हीं के साथ मैं भी मर जाऊँगी। मेरे मुख पर पीलापन

छा गया। हाथ पाँव काँपने लगे। उस कठोर लाञ्छन से मुझे प्रतीत हुआ कि वास्तव में अब जिन्दा तो हूँ ही नहीं लेकिन यह लोग हैं कि मेरी लाश पर थूकने से भी बाज नहीं आते।

चाची ने फिर कहा— मामीजी दुहाइ है तुम्हें! इस घर में आज तक कभी ऐसा नहीं हुआ! आज तक किसी ने इस घर की औरतों की शकल देखना तो क्या यह भी नहीं जाना कि उनकी आवाज कैसी है। क्या कहेंगे गाँव के लोग सुनकर? जब जमींदार के घर ही से धर्म उठ जायगा तब लोगों के घर में क्या रहेगा? हमने सोचा था अभी लड़की है सब ठीक हो जायगा। लेकिन मामीजी जिसके मुँह खून लगा हो उसकी पानी से प्यास बुझगी?

मैं जोर से रो उठी। मैंने चिल्ला कर कहा— किसका खून लगा है मेरे मुँह? किस काम से इनकार किया है मैंने जो आप मुझ पर दोष लगा रही हैं?

ओ हो! चाची चिल्ला उठी— दुल्हिन रानी पर दोष लगा दिया मैंने! दुश्मन तो मैं हू ही! इसी से दुश्मनी निकालने के लिए ही तो मैंने सूरज की माँ के मरने पर उसे पाल-पोस कर इतना बड़ा किया था!

मामीजी ने डाँट कर मुझसे कहा— अरी बेहया! क्या करूँ, समझ में नहीं आता! जमाना बदल गया है वर्ना पुराने वक्तों में इतनी बात कहने पर सारे दाँत झाड़ दिये जाते। मर्द नहीं रहे बेटी वर्ना मजाल है औरत की कि आ से ऊँ कर जाय?

बुआ ने कहा— सूरज ने सिर चढ़ाया है इसे। जूती सिर पर धरेगा तो धूल लगेगी ही। हम तो जानते ही थे शहर की लड़कियों के गुन। क्या किसी से छिपे हैं? देखो न उस लछमन को! जात का नीच ही है मगर राजी नहीं हुआ कि शहर की लड़की आ जाय उसके घर में

बहू बनकर। अरे, जो नीच जातों ने नहीं किया वह तुमने किया! मेरे श्याम इस घर को अब क्यों भूलते जा रहे हो?

और सचमुच शाम तक खबर गाँव भर में फैल गई। मैं कमरे में छिप कर बैठी रही। समझ में नहीं आता था कि क्या करूँ। खाना बनाने गई तो मुझे सबने लौटा दिया यह कहकर कि जा हमें आबरू बेच कर सुख नहीं भोगने हैं!

मैं लौट आई। चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा नजर आता था। एक ही आशा थी कि कम से-कम वह तो मुझे अपराधी न समझेंगे। कम-से कम वह तो मेरी रक्षा करेंगे?

दिन बीत चला। मेरी किसी ने सुधि तक नहीं ली। किसी ने खाने तक को नहीं पूछा।

रात को जब वह आये तो शिकायतों का ढेर लग गया। ईंटों की बनी वे दीवारें शायद नहीं रहीं क्योंकि बातों के तीर उन्हें छेद छेद कर मेरे अन्तस्तल में बार बार गड़ने लगे। और मुझ दर्द से चिल्लाने का तो क्या कराहने तक का अधिकार नहीं था।

चाची ने कहा— सूरज इसे तो तू शहर ही ले जा बेटा! इसमें घर गृहस्थी में बहू बनकर रहने का सलीका नहीं है बिलकुल!

मामीजी ने भीतर से चिल्ला कर कहा— जाने कौन जात कुजात उठा लाया है। अच्छा ज़माना आया है!

क्या बात है आखिर? उन्होंने घबरा कर पूछा।

और जैसे यह कुछ हुआ ही नहीं! चाची ने ताना मार कर कहा— तो क्या राह में गाने बजाने की जरूरत थी? भैया सूरज हम तो कुछ कहते नहीं पर खानदान में अपने चाचा के बाद बस तू ही सब का मालिक है। हमने तो तुझे अपना बेटा मान कर ही पाला है। चाहे तो रख चाहे छोड़ दे। हमारा क्या है रो लेंगे! मगर तेरी तो बात बस जायेगी।

वह घबराहट से बोल उठे—पैर नहीं दाबे ? झाड़ू नहीं दी ? खाना नहीं पकाया ?

कौन कहता है भैया चाची ने फिर कहा—कसम है मेरे बच्चे की जो आज तक कभी हम कोई ऐसी बात जबान पर भी लाई हों। इसका तो पढ़ना गजब है बेटा ! पढ़ेगी तो आधी रात तक और यह भी नहीं कि रामायण उल्टे वह किस्से कहानी तोता मैना के

मैंने सुना वह कुछ बोले। फिर उनके पैरों की चाप सुनाई दी। जैसे वह वहाँ से चले गये हों।

स्त्रियाँ अब भी आपस में फुस फुस किये जा रही थीं। और मैंने सोचा कमबख्त पढ़ाई न हुई मेरी मौत हो गई !

जिस समय उन्होंने कमरे में प्रवेश किया अँधेरा छा रहा था। उनके पीछे-पीछे ही लालटेन लिये चाची थीं।

वह मेरे पास आ गये। कठोर स्वर में उन्होंने कहा—क्या ? यह मैं क्या सुन रहा हूँ ?

मैंने उत्तर नहीं दिया।

चाची ने कहा—ओहो ! अब इतनी लाज हो गई कि बोल गले से निकलने के पहले सो गचके खा रहा है ?

मैंने क्रोध से सिर उठाया। मेरी आँखों के आँसू सख गये। मैंने चिल्ला कर कहा—क्या किया है मैंने जो तुम सब मेरा खून पी जाना चाहती हो ? क्यों नहीं मुझे गला घोंट कर मार डालते ?'

'उन्होंने मुझसे फिर कहा—मुझ जवाब दो ! मैं जानना चाहता हूँ। आज न सही कल। मैं इस घर का मालिक हूँ। मेरे ऊपर खानदान की इज्जत का सवाल है। क्या जरूरत थी तुम्हें मुशीजी से बात करने की ? समझा नहीं दिया था मैंने तुम्हें ? या अकेली तुम ही एक शहर की पत्नी हो ? मैं तो हमेशा से गाँव ही में रहा हूँ।

चाची कमरे से बाहर चली गईं। लालटेन वहीं छोड़ गई। मैंने देखा वह क्रोध से व्याकुल होकर काँप रहे थे।

उन्होंने कहा— अब तक मैं तुम्हारी बात को तरह देता आया हूँ। शुरू में तुम्हारे पच्चीसों किस्से सुने पर घुट कर पी गया। और कोई होता, तो मार मार कर खाल उधेड़ दी होती। मैंने कहा कि थोड़े दिन की बात है फिर शहर लौट चलेंगे। वहाँ तो मैं तुम्हें मटरगश्ती करने से कभी नहीं रोकता। फिर वह दो दिन तुमसे नहीं कट सकते ?

उन्होंने उँगली उठा कर कहा— तुमने मुझे कहीं का भी नहीं रखा! आज तुमने यह नहीं सोचा कि तुम क्या कर रही हो! कभी देखा था आज तक घर की किसी और औरत को उनसे बात करते ?

मैंने दृढ़ होकर कहा— लेकिन वह कमरे में घुस आये थे। उस वक्त और कोई न था। वह मेरी तरफ देख रहे थे।

देखेंगे नहीं ? उन्होंने कहा— तुम मुँह खुला रखोगी तो वह जरूर देखेंगे! आज तक किसी और घर की बूढ़ी तक ने उनके सामने अपना मुँह खुला रखा है ? तुमने वह बात की है जो हममें से किसी के भी बस की नहीं रही। घर घर चर्चा हो रही है।

उन्होंने कहा— बोलो! जवाब क्यों नहीं देती ?

मैंने कहा— तुम पागल हो गये हो ? तुम कुछ भी सोच नहीं सकते ? दुरंगी जिन्दगी बिताने वाले ढोंगी ? पुस्तकालय से सिर्फ अखबार मँगवाया था मैंने क्योंकि इस नरक में सिवाय पढ़ने के मुझे और कुछ अच्छा नहीं लगता! तुम मुझसे उसे भी छीन लेना चाहते हो ? मुझसे नहीं हो सकती यह गुलामी! मैं तुम्हारी बुआ मामी चाची की तरह अपढ़ गँवार नहीं हूँ, जो अपने आपको तुम्हारी जूतियों की खाक समझती रहूँ।

मेरी बात पूरी भी न हो पाई थी कि मेरी पीठ हाथ और पाँव पर

सड़ासड़ बेंत पड़ने लगे। मैं नहीं जानती कि मैं रोई क्या नहीं। मैंने केवल इतना कहा— मार! और मार।

उनका हाथ थक गया। घृणा से बेंत फेंक दिया और उनके मुँह से निकाला— बेशरम!

और मैं वैसी ही खड़ी रही।

रात बीत गई। मैं वहां बैठी रही। दूसरे ही दिन मैंने भैया को चिट्ठी लिख दी।

उन्होंने चिट्ठी भेजने में कोई बाधा नहीं दी।

दो दिन तक मुझ किसी ने खाने को भी नहीं पूछा।

सुबह उठ कर देखा द्वार पर भाई साहब खड़े थे। उनके चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। उनको देखते ही मेरी आँखों में आँसू आ गये। बहुत रोकने का प्रयत्न करके भी मैं अपने आपको रोक न सकी।

भैया ने कहा— क्या हुआ शिवो?

मैंने कहा— मैं यहाँ नहीं रहना चाहती।

आखिर क्यों? कोई बात भी तो हो।

मैंने उनसे कहा—आपने मुझे कहाँ फक दिया?

क्या सरज बाबू ने कुछ कहा?

मैंने कुछ उत्तर नहीं दिया। बाँह खोल कर बत की मार के निशान दिखा दिये।

एक बार क्रोध से उन्होंने अपना नीचे का होंठ काट लिया। फिर सिर झुका कर कहा— मैं समझता था कि तुम दोनों एक दूसरे से प्रेम करते हो। तुम्हारा जीवन सुख के बीतेगा। लेकिन वह लोग कहीं अच्छे जो दुखी हैं किन्तु दुख का अनुभव नहीं करते क्योंकि वे गुलामी और आजादी का फर्क ही नहीं जानते। हिन्दुस्तान में अव्वल तो प्रेम के विवाह होते नहीं और होते भी हैं तो निभ नहीं पाते क्योंकि यह प्रेम समाज की भीषण बेड़ियों को तोड़ने में असमर्थ रह जाता है।

मैंने कहा—किंतु मैं ऐसी नहीं हूँ।

भैया ने सिर झुका कर कहा हम लड़की वाले हैं। हमें सिर झुका कर ही चलना होगा। बनों मैं नहीं जानता कि क्या होगा? जो वह कहेंगे उसी को करने में हमारा कल्याण है। अन्यथा कोई चारा नहीं।

मैं चुप हो गई। भैया ने फिर कहा—पति ही स्त्री का सब कुछ है सविता!

मैंने सिर उठाया। कहा—पति ही स्त्री का सब कुछ है? किंतु वह पति पुरुष होता है। सीता जिस राम के पीछे चली थीं वह पुरुषार्थी था। जो व्यक्ति अपनी ही रूढ़ियों में जकड़ा हुआ हाँफ रहा है वह मेरे जीवन का आदर्श नहीं हो सकता। किसलिये मैं अपने एकान्त सुख को इतना बड़ा बना दूँ कि मेरे विश्वास मेरी श्रद्धा मेरी शक्ति एक ऐसे व्यक्ति को देवता समझ कर उसके पैरों पर जम जाय जो स्वयं लड़खड़ा रहा हो जो स्वयं निर्बल हो और स्त्री को केवल वासना बुझाने और खानदान की इज्जत की चक्कियों में पीसने वाली दासी और बच्चे पैदा करने मात्र का एक साधन समझता हो जो मेरी इंसानियत को धर्म के नाम पर कुचल कर मुझ पर घृणा से हंस देना चाहता हो!

भैया काँप उठे। उन्होंने कहा—तू क्या कह रही है सविता? तेरी एक छोटी बहिन है। लोग अगर यह सब सुनेंगे तो कहेंगे अरे यह उसी की बहिन है!

मैंने कहा—किंतु मैं यहाँ अब नहीं रहूँगी! तुम मुझे नहीं ले जाओगे तो मैं किसी दिन गले में फाँसी लगा कर मर जाऊँगी।

भैया सोच में पड़ गये। उन्होंने कुछ नहीं कहा।

मैंने कहा—अच्छा, कुछ दिन के लिये तो ले ही चलो।

भैया ने कहा—'अच्छी बात है। जो होना है वही होकर रहेगा! तू यही चाहती है तो चल तेरी मर्जी!

'हम लोग लखनऊ में आ गये। एक दिन भी नहीं रही थी वहाँ कि इलाहाबाद में एक मास्टरनी की आवश्यकता का समाचार देखा। यहाँ आ गई हूँ तब से। स्कूल खुलने के पहले इन्टरव्यू होगी।

मैंने देखा वह संकुचित नहीं थी। हवा में उसके बाल मुह पर बार बार आ जाते थे। मैंने पूछा—तो क्या आप वहाँ लौट कर नहीं जायँगी?

सविता ने कहा—कहाँ?

वहीं गाँव सूरज के पास।

सविता ने दृढ़ स्वर से कहा—नहीं अब मैं निश्चय ही वहाँ नहीं जाऊँगी। आप सोच भी नहीं सकते कि मुझ आते समय भी किसी ने तनिक भी स्नेह से नहीं देखा। वरन् उनके मुख पर घृणा का विकृत रूप अपनी सीमा पार कर चुका था। वे लोग मुझ मार डालेंगे। मैं वहाँ कभी भी नहीं जाऊँगी।

मैंने कहा—इस समय क्रोध में हैं। आखिर सूरज से आप प्रेम करती थीं और वह भी प्रेम करता था?

सविता हँस दी। कहा—आप मुझ जानते हैं। मैं आपको जानती हूँ। अगर शाम को गंगा किनारे आप मुझे पहले देखते और आवाज देते पर मैं आपको पहचानने से इनकार कर देती या टालू बातें करती तो क्या आप फिर कभी मुझसे मिलने की ख्वाहिश रखते?

बात सविता ने ठीक ही कही थी। किन्तु मैंने कहा—फिर?

फिर क्या? उसने कहा—फिर तो साफ ही है।

मेरे मुँह से निकला—बड़ी हिम्मत है आप में।

जी नहीं। उसने रोक कर तुरन्त उत्तर दिया—हिम्मत से काम नहीं चलता अकेले। अगर भैया न आते और मैं अकेली निकल पड़ती तो जब राह में लड़के लड़कियाँ मुझे देख कर तालियाँ बजा-बजा कर चिल्लातीं बाबू की पतुरिया शहर जा रही है। तब सूरज बाबू मुझे

शायद क्रोध के विक्षोभ में गला घोंट कर मार देते। उन्हें तो अपनी ज़मीन अपनी जिन्दगी की सच्चाई से भी ज्यादा प्यारी है। उनके खानदान की इज्जत धूल में मिल जाती। इसी से तो कहती हूँ कि मत से ही कुछ नहीं हो सकता। अगर मैं पढ़ी लिखी न होती अपने खाने कमाने लायक नहीं होती तो क्या कभी ऐसी हिम्मत कर सकती थी? आदर्शों को पूरा करने के लिये उसके साधनों की ठोस बुनियाद की जरूरत है।

मैं सुनता रहा। सविता कहती रही—दुनिया मुझे बदनाम करेगी मुझे कुलटा कहेगी। किन्तु बताइये आप ही मैं इसके अतिरिक्त और क्या करती? जीवन भर वही गुलामी की नफरत को ही पातिव्रत कह कर औरत को समाज में धोखा दिया गया है अब मैं उस जाल को फाड़ कर फैंक देना चाहती हूँ।

वह हाँफ रही थी। मैंने देखा वह उत्तेजित हो गई थी। शायद वह यह जानना चाहती थी कि मैं उसके बारे में क्या सोच रहा था।

मैंने कहा आपकी बहिन का क्या होगा?

उसने कहा—पढ़ी लिखी है। कोई मन का ही नहीं विचारों का भी दृढ़ सामञ्जस्य मिलेगा तब शादी कर लेगी। वर्ना कमा खायेगी। पेट की मजबूरी से ही तो स्त्री सिर झुकाने को मजबूर होती है।

और मैंने कहा—'आप ऐसे ही जीवन बिता देंगी?

वह क्षण भर सोचती रही। फिर कह उठी—नहीं मैं उनके पीछे अपना जीवन बरबाद नहीं करूंगी क्योंकि वह मुझसे छूटते ही फिर दूसरा ब्याह कर लेंगे। और मनुष्य उसी स्मृति के पीछे अपने सुखों का त्याग करता है जिसे वह सुखदायक और पवित्र समझता है।

तो आप विवाह कर लेंगी?

'उसने मेरी ओर घूर कर देखा फिर हँसी। कहा—मैं तो सच अपने को अयोग्य नहीं समझती। समाज में क्या एक व्यक्ति भी ऐसा

न खोज सकूंगी जिसमें आत्मा का थोड़ा भी सत्य हो साहस शेष हो। सब ही तो एकदम निर्जीव कायर नहीं होते। समाज मुझसे भले ही घृणा करे किन्तु मैं तो मनुष्य से घृणा नहीं करती जो अकेली बने रहने की तपस्या का बोझ अपने कन्धों पर रख कर छटपटाऊँ और उस यातना को आदर्श बनाकर सत्ता-स्वार्थियों को एक और मौका दूँ कि वे अपने पापों पर धूल उछाल कर उसे ढंक दें और अपनी अच्छाइयों की झूठी झलक को सब के ऊपर ला धरें।

और मैंने देखा वह शांत थी। कोई डर नहीं था उसे। कोई शंका नहीं थी उसके मुख पर। आज मैंने देखा कि स्त्री भी पुरुष की तरह आत्म-सम्मान की आग में तप कर आजादी माँग रही थी और सारे संसार का अंधकार भरा पाप उस पर घृणा से लांछन लगा रहा था उसे बरबाद कर देना चाहता था पर वह अडिग खड़ी थी।

कल्ला चुप हो गया। सिद्दी और चंदू ने भारी पलकों को उठाया। रात बहुत बीत गई थी।

सिद्दी ने कम्बल को और अच्छी तरह लपेट लिया। तीनों इस समय गम्भीर थे।

कल्ला के मुख पर एक शक्ति दमक रही थी क्योंकि उसने उस नारी की जीवित मानवता की हुंकार सुनी थी उसने नारी का वह विक्षोभ देखा था जिसके सामने परवशता की चिता धू धू जल रही थी।

प्रवासी

बरसात की झड़ी का वेग आसमान से उतर कर फुलवाड़ी में व्याप गया। चार चार सौ बरस पुराने ऊँचे-ऊँचे पेड़ों के पत्ते धुल गये। संध्या की सुनहरी किरणें उन पर झलमलातीं और फिर छोटी नदी की सतह पर फिसलने लगतीं।

यौवन के तीसरे पहर में गोपालन आज कुछ देख रहा था। आयु के इस शुष्क रेगिस्तान में उसकी सारी तरलता सूख चुकी थी। अनेक युवतियाँ आ आ कर पनघट पर पानी भरती रहीं। वे हस कर बात करतीं खड़ी-खड़ी अँगड़ाइ लेतीं और फिर सिर पर दो दो तीन तीन घड़े रख ठुमकती लचकती चली जातीं। उनका निखरा हुआ यौवन दरिद्रता में भी छिप न पाता।

गोपालन को ये स्त्रियाँ देखने में मोहक लगतीं। उसके प्रांत की स्त्रियों से अधिक सुन्दर थीं। किंतु कभी उसने यह विचार प्रगट नहीं होने दिया। उत्तर भारत में आकर वह सदा अकेला रहा है। उसके मन ने जैसे कहीं भी अपनेपन का अनुभव नहीं किया।

आज वह इस सुन्दर प्रांत में अकेला पड़ा है। कोई उसका मित्र नहीं है। सब उसे परदेशी के रूप में देखते हैं। औ वह स्वयं इस भावना का आदी हो गया है क्योंकि वह यहाँ हिन्दी भाषा नहीं जानता।

मन्दिर प्राय सूना हो गया। यहाँ उसने केवल भगवान की पूजा की है पेट भरा है और मन्दिर ही की भाँति उसका जीवन भी एक श्रद्धा के भार को वहन करता चला जा रहा है। इस नीरव कोने में जैसे ससार निस्तब्ध हो चुका है मनुष्य की सारी हलचल समाप्त हो चुकी है और वह बिताये जा रहा है बिताये जा रहा है ऐसी ज़िन्दगी, जो मन्दिर के पत्थरों की ही भाँति कठोर है जिसमें परिवर्तन होता तो हर क्षण है मगर दिखाई कभी नहीं देता।

रात हो गई। आकाश में अगणित तारे छिटक गये। पूजा करके गोपालन सोने चला गया। मठ के स्वामी पहले ही सो गये थे।

आज से दो सौ वर्ष पहले किसी व्यापारी ने यहाँ किसी दक्षिणी ब्राह्मण को गुरू बनाया था। तभी से शिष्य परम्परा चली आ रही है। गोपालन यहाँ पुजारी के रूप में है।

आँख खोल कर देखा आकाश में एक बार जोर से प्रकाश की

एक लीक काँपी और अंधकार में विलीन हो गई। छत पर पड़े पड़े गोपालन ने एक बार फुलवाड़ी के पेड़ों की ओर देख कर हाथ जोड़े और फिर आँख बन्द कर लीं। व्यथा से उसका हृदय भर गया। यह जो एक तारा इस तरह टूटा है ऐसे ही वह भी एक दिन समाप्त हो जायगा। आज भी क्या उसका जीवन निरर्थक नहीं? वह किसी का नहीं कोई उसका नहीं। जैसे अपनी ही सत्ता में अपनी परिधि की समाप्ति है।

गोपालन के मुख से एक आह निकल गई। इतनी तो बीत चुकी। अब और है ही कितनी? ऐसे ही वह भी बीत जायगी। यहाँ क्या है? अनेक बार घंटे बजते हैं अनेक बार पूजा होती है अनेक बार भगवान के दर्शन करने आ कर उत्तरादी (उत्तर के रहने वाले) महाराज और स्वामी कह कह कर लौट जाते हैं। बात बात पर दंडवत करते हैं गन्दे रहते हैं और धर्म-कर्म के विषय में कुछ भी नहीं जानते।

गोपालन मन ही मन हँस उठा। कौन सा है वह धर्म जिसके लिये मनुष्य बली हो? कितने अच्छे हैं ये उत्तर के लोग जो इतना स्नेह देते हैं। हमारे यहाँ तो लोग आपस में ही एक दूसरे को खाने दौड़ते हैं। आडम्बर! आडम्बर!! और कुछ नहीं। उँह! मुझे क्या? जब तक मानो तभी तक परमात्मा जब न मानो तो कुछ नहीं।

वह मुस्कराया। हृदय में एक बार झोंका सा लगा। दीपक की बत्ती हिलने लगी। वह व्याकुल हो उठा। उसे प्यास लग रही थी— प्यास वह जो अतीत की सारी कड़ुवाहट लेकर उसके गले में चटकने लगी। सूनापन सघन हो चला। गोपालन ने आँखों को बन्द करके उन पर हाथ रख लिया जैसे वह बाहर का कुछ भी न देखना चाहता हो।

धीरे धीरे उसे सारी बातें याद आने लगीं।

युवक गोपालन एक ब्राह्मण का बेटा था। पिता वैदिक आचार्य से अपने जीवन के ढाल पर उतरते चले जा रहे थे जैसे एक दिन

गोपालन के पितामह की छाया में वह जीवन के चढ़ाव पर चढ़े थे। उनकी पवित्रता गाँव भर में प्रसिद्ध थी। वृद्ध नयनाचारी प्रात काल ही उठ बैठते और स्नान आदि से निवृत्त होकर बारह तिलक लगा कर पूजा में प्रवृत्त हो जाते। सन्ध्या की झुकती बेला में जब लम्बे लम्बे ताड़ के पेड़ों के पीछे आसमान लाल हो जाता। अद्‌भुत शिल्प से सज्जित गुम्बदों के पीछे एक मन्दिर पर आभा फैल जाती वह बैठे-बैठे घंटों कम्ब रामायण गाया करते। और रात को जब विशाल मन्दिरों से घंटों और शंखों का नाद गाँव में उठता गिरता गूँजने लगता तो वह अपने आपको नारायण की महामहिमामयी शक्ति के चरणों पर डाल कर अपने आपको भूल जाते।

गोपाल अपने स्वस्थ और सुदृढ़ शरीर के कारण अपने को बहुत कुछ समझता। वृद्ध नयनाचारी देखते और मन ही मन पुत्र के उच्छृ खल यौवन को देख कर मुस्कराते किन्तु ऊपर से कभी विचलित होते न दीखते। वह उस परम्परा में पले थे जिसमें पिता पिता ही नहीं एक गुरु भी होता है। उन्होंने ही उसे गुरु मंत्र दिया था। आज गोपालन को आवश्यक धर्म-कर्म सब ज्ञात थे।

संसार समझता है कि गोपालन का आचरण उसकी आयु को देखते हुए अत्यधिक धार्मिक था। किन्तु जब वह मन्दिर की आड़ में अँधेरा होने पर छिप कर खड़ा हो जाता और गाँव में आकर रहने वाले रिटायर्ड पोस्ट मास्टर की पुत्री कोमल को देखता उस समय वेद ब्रह्मा के मुख में लौट जाते कर्म और धर्म पराजित होकर उसके उठते हुये यौवन के सामने हाहाकार करने लगते। गोपालन मुग्ध हो जाता।

ऐसे ही अनेक दिन बीत गये। गोपालन ने कभी अपने मुँह से कोमल से कुछ नहीं कहा। किन्तु सुन्दरी कोमल जानती थी कि तपे हुए ताँबे के वर्ण का यह पुजारी केवल पत्थर के देवता का उपासक नहीं है वरन् उसके भीतर एक हृदय भी है जिसकी वह एकमात्र अधीश्वरी

है। और गोपालन का उदास जीवन आशाओं को ठोकर मार कर जगाने की चेष्टा करता जो पीड़ा से एक बार आँखें खोलतीं और फिर करवट बदल कर सो जातीं।

गोपालन का भाई वरदाचारी आज अनेक वर्षों से प्रवास में था। उसकी पत्नी राजम जिसकी अवस्था ढल रही थी अपने अधिकार की मादकता को सतृ ण उन्माद से अपने हाथ से किसी तरह भी नहीं जाने देना चाहती थी। सब उसकी कर्कशता से परिचित थे। वह जब कभी अवसर मिलता तो दूसरों के सामने अपने पति के गुणों का बखान करने लगती और फिर रोती। किन्तु लोगों को शायद ही उसकी कोइ बात छू पाती। वरदाचारी एक मस्त आदमी था जो अपनी पत्नी को अपने योग्य न समझ कर उसे छोड़ कर कहीं अज्ञातवास कर रहा था। राजम माथे पर कुमकुम लगाती गले में तिरमङ्गल्यम पहनती। उसका सौभाग्य जैसे अक्षय था। यह अज्ञात सुहाग उसके नारी जीवन का एक विराट षड्यंत्र था। वृद्ध नयनाचारी को जब वह पर्व के दिनों दंडवत् करती तो वृद्ध अपने दोनों हाथ उठा कर उसे आशीर्वाद देता। वह पिता था। वरदाचारी उसका बड़ा बटा था।

गोपालन ने करवट बदली। चारों तरफ अँधेरा था। उसने फिर आँख बन्द कर लीं। अँधेरा नाचने लगा।

वरदाचारी जब से घर छोड़ कर गया कभी लौट कर नहीं आया।

गोपालन नीचे गाँव से ऊपर सात मील चढ कर विरुपथीमलय के विशाल श्रीनिवासन के मन्दिर में काम करता। राजम घर का काम काज सँभालती। दो खेत पिता के थे। और चार खेत राजम के दहेज के थे जो यद्यपि नयनाचारी ने बेटे के प्रतिदान में माँगे नहीं किन्तु बेटी का अक्षुण्ण अधिकार बना देने के लिये गर्विता माँ ने अपने आप दे दिये थे। गोपालन निरपेक्ष सा अपना काम किये जाता।

एक दिन घर आकर गोपालन ने देखा पिता उदास से बैठे थे। वह कुछ भी नहीं बो ा। नहा कर उसने अपनी चोटी निचोड़ी और खाने को बैठ गया। राजम ने उसकी ओर क्रोध से देखा और ढेर सा चावल सामने ला कर केले के पत्त पर परोस दिया। गोपालन ने देखा और समझा। वह जता रही थी कि मेरे ही कारण तुम लोगों को खाना मिलता है नहीं तो तुम लोग कुत्तों की तरह भूखों मरते होते। गोपालन के हृदय में तीर-सा चुभा। किन्तु फिर भी वह चुपचाप खा कर उठ आया। पिता आज चुप थे। आज उनके मुख से रामायण की एक पंक्ति भी नहीं निकली।

गोपालन लौट चला। धीरे धीरे फिर सात मील की सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। इधर उधर अनेक यात्री इस समय पैदल और डोलियों में थके माँदे उतर रहे थे।

एकाएक गोपालन ठिठक गया। कोमल भी ऊपर च रही थी।

वह अकेली थी और ऐसा लगता था जैसे थक गई थी। गोपालन को प्रतीत हुआ जैसे सचमुच ही राह बहुत लम्बी थी और वह स्वयं नहीं चढ़ सकता था। यात्रीगण गोविंदा! गाविंदा! पुकारते धीरे धीरे उतरते चले जा रहे थे। गोपालन को लगा जैसे वह नदी की बहती धारा थी और ये दो पत्थर ऊपर की तरफ राह करके निकल जाना चाहते थे।

थोड़ी दूर चलकर कोमल थककर एक सीढ़ी पर बैठ गई। गोपालन जब उसके पास पहुचा, तो कोमल ने उसे पहचाना। मुस्करा उठी। गोपालन ने कहा— थक गइ हो?

कोमल ने लजा कर उत्तर दिया— थकेगा कौन नहीं? लेकिन तुम तो थके हुये नहीं दीखते।

गोपालन को हर्ष हुआ। वह उस स्त्री के सामने एक पुरुष के रूप में खड़ा था और इसे वह स्त्री अपने पूर्ण यौवन से स्वीकार कर रही

थीं। उसने उसकी ओर देखा और देखता रहा। कोमल ने संकोच से आँख झुका लीं। गोपालन ने देखा वह सुन्दर थी। आकाश में चाँदनी फूट फूट कर फैल रही थी। सीढ़ी के दोनों ओर पहाड़ के हरे हरे वृक्ष सन् सन् कर रहे थे। और वह सीढ़ी जो सात मील लम्बी थी जिसकी बिजली की बत्तियाँ आज चाँदनी के कारण नहीं जली थीं साँप सी कहीं करवट लेती कहीं सीधी चलती सफेद-सफेद सी ऐसी लगतीं थीं जैसे आकाश गङ्गा स्वर्ग से पृथ्वी को मिला रही हो। और सामने साक्षात मीनाक्षी बैठी थी जिसका वडक्यएणम [सोने की पेटी] अपने ऊपर विचित्र नक्काशी लिये उसे मनोहर प्रकाश में दमदमा रहा था। गोपालन को क्षण भर अपनी दरिद्रता का आभास हुआ। ऐसी ही चीजों के लिए राज़म मरती थी अपने पति से नित्य झगड़ती थी और अन्त में लाचार होकर वह घर छोड़ भाग गया था। कोमल की साड़ी के किनार की ज़री झलमल झलमल कर गोपालन के मन पर जाल बनकर छा गई। और वह विश्रांत सी उसके सामने बैठी थी। वह देख रहा था मन भर कर जिसे आज तक कोई भी नहीं भर पाया।

कोमल उठी और चलने लगी। गोपालन भी साथ-साथ चलने लगा। कोमल ने ही कहा— तो तुम मन्दिर में अर्चना करते हो!

हाँ! और यहीं रहता हूँ। गोपालन ने धीरे से उत्तर दिया। फिर उसने रुक कर पूछा— आप कहाँ जा रही हैं?

आप' सुनकर कोमल ने मुड़कर उसकी ओर देखा। गोपालन का दिल न जाने कैसा होने लगा।

मैं! मैं भी मन्दिर की ही ओर जा रही हू। पिता से मिलना है। उनको अपने होटल से फ़ुर्सत कहाँ? पहले पोस्टमास्टर थे न! सो सुबह से शाम तक काम में लगे रहने की ऐसी आदत हो गई है कि छोड़े नहीं छूटती। आज वहीं सो जाऊँगी। वाहन भी देख लूँगी। आज किसकी सवारी निकलेगी आयङ्गार? हनुमान की या गरुड़ की?

गोपालन ने सोचकर उत्तर दिया— आज तो शायद गरुड़ की निकलेगी।

गरुड़ की! कोमल ने प्रसन्न होकर कहा—मुझे बड़ी अच्छी लगती है गरुड़ की सवारी।

गोपालन को अफसोस हुआ। आज उसी ने शृङ्गार किया होता तो कम-से-कम जता तो देता कि वह कितना निपुण था।

कोमल ने पूछा— कितने बच्चे हैं तुम्हारे?

गोपालन हस दिया। बोला— बच्चे! कैसे बच्चे?

क्यों? कोमल ने आश्चर्य से कहा— विवाह ही नहीं हुआ क्या?'

नहीं।

गोपालन को लगा जैसे वे एक दूसरे के और पास आ गये। उसे प्रतीत हुआ जैसे कोमल ने यह प्रश्न उससे जान बूझकर किया था।

धीरे धीरे ऊपर बसे पेशेवर भिखारियों के झोपड़े दिखाई देने लगे। कोमल फिर एक स्वच्छ शिला पर बैठ गई। इस समय कोढ़ी और रोगी असली और नकली सब भीतर घुस कर सो रहे थे। चारों तरफ एकान्त था। अद्‌भुत नीरवता छा रही थी। गोपालन भी खड़ा हो गया।

बैठ जाओ आयंगार बैठ जाओ! तुम तो लगता है जैसे थकना ही नहीं जानते!

वह बैठ गया। देर तक दोनों बात करते रहे।

जब वे भगवान् श्रीनिवास के मन्दिर के सामने पहुचे, तो वाद्य ध्वनि के साथ वाहन निकल रहे थे। कोमल चली गई। गोपालन मन की सारी ममता को दोनों हाथ से छाती पर दाब कर भीड़ की ओर देखता रह गया।

दूसरे दिन गोपालन ने देखा कि कुछ शहर के युवक मन्दिर में दर्शन करने आये हैं उनमें एक जरी का कीमती दुपट्टा गले में डाले है

और उसके काल हाथ पर सोने की एक घड़ी बँधी है। उसे पत्थरों पर नंगे पैर चलने में कष्ट होता है। वह अपने साथियों से कह रहा था—अजीब हालत है! मन्दिर के कारण तो इधर-उधर भी जूता पहन कर पहाड़ पर चलने की आज्ञा नहीं है। प्राचीन काल में वैसा होता था तो ठीक था। मगर अब ऐसा क्यों ?'

गोपालन ने घृणा से नाक सिकोड़ ली। ये लोग थोड़ी सी अंग्रज़ी क्या पढ़ गये धर्म-कर्म से हाथ ही धो बैठे। महागरिमामय श्रीनिवास इन्हें अवश्य दण्ड दगे। और वह अपने काम में लग गया।

दोपहर के समय जब वह मन्दिर से बाहर निकला तो उसके पैर ठिठक गये। कोमल के पिता उसी पढ़े लिखे युवक ने खूब हस हस कर बात कर रहे थे। और वह युवक काफी पीता इडली खाता उन्हें कोई बड़ा दिलचस्प किस्सा सुना रहा था। वह भी होटल के भीतर घुस गया। वृद्ध पोस्टमास्टर उस समय प्रसन्न थे। उनके मुख पर एक चमक काँप रही थी और स्थल शरीर फड़क रहा था। गोपालन ने उन्हें नमस्कार किया। वृद्ध ने हाथ उठा कर कहा— अरे गोपालन! तुम इतने दिन कहाँ रहे। इ हें देखा? आओ तुम्हारा इनसे परिचय करा दूँ।

गोपालन ने उस युवक की ओर देखा और एक आशंका उसके हृदय में उतर गई।

वृद्ध ने फिर कहा— ये हैं वेंकटराजन! मदरास में पढ़ाई समाप्त कर दी है। एम ए हैं एम ए! अब यहीं तिरचानूर में रह कर अपनी जमींदारी सँभालगे। आना विवाह में। जल्द ही हो जायगा। मेरी तो सारी चिन्ता मिट गई। कोमल के योग्य तो मुझे कोई दिखता ही नहीं था। अन्त में उसी ने उन्हें देखा। भाई वक्त बदल गया है न! सभी। भगवान की मर्ज़ी है वर्ना हमारे समय में क्या यह सब होता था?

गोपालन ने सुना। हाथ जोड़े। युवक ने हँस कर सिर हिला दिया जैसे वह जमाई होने की लाज रख रहा था। गोपालन चला आया।

उस समय ब्रह्मचारी दिन में निकलने वाले वाहन के चारों ओर चार दलों में खड़े होकर वेद पाठ कर रहे थे और नाक के श्वास से एक ही समय बाँसुरी बजा रहे थे। जब एक दल ऋगवेद के कुछ मंत्र पढ़ चुकता था तो दूसरा सामवेद प्रारम्भ करता था। और अंतराल में वेदों का वह गम्भीर घोष गूज कर पाषाणों से सहस्रों वर्ष पुराना गौरव टकरा कर आकाश की ओर सहस्र रश्मियाँ बन कर फूट निकलता था।

गोपालन भीतर अंधकार में एक विशाल स्तम्भ के सहारे बैठ गया। सिर चक्कर खा रहा था। पैरों के नीचे से धरती खिसक रही थी। हृदय में उन्माद घूसे मार मार कर हस उठता था।

धीरे धीरे साँझ हो गई। गोपालन फिर भी वहीं पड़ा रहा। वृद्ध ताताचारी अन्त में हाथ में दीपक लेकर उसे ढूढने निकल पड़ा। नित्य गोपालन दिन में अनेक बार उसके पास जाता और कहता कि उसके अतिरिक्त मन्दिर में और कोई ऐसा न था जिसके प्रति उसकी श्रद्धा हो। ताताचारी वृद्ध हो गया था उसी मन्दिर की पूजा करते करते और उसे गोपालन से पुत्र का-सा स्नेह हो गया था।

वृद्ध की छाती पर जैसे किसी ने प्रहार किया। गोपालन उस नीरव अंधकार में पड़ा हुआ था। वृद्ध नें दीपक रख दिया और घुटनों के बल बैठ कर पुकारा— गोपालन!

गोपालन ने आँख खोल दीं। वृद्ध ने उसका हाथ पकड़ कर कहा— वत्स! क्या हुआ है तुझे? अँधेरे में क्यों पड़ा है!

गोपालन ने कुछ नहीं कहा।

वृद्ध ने फिर कहा— पुत्र तुझे ऐसी क्या पीड़ा है? गोविन्द सब का मङ्गल करते हैं। मुझसे कह।

गोपालन ने नीचे देखते हुए कहा— स्वामी मुझने एक भूल हुई!

वृद्ध ने कहा— क्या ?

गोपालन ने दबे स्वर से कहा—मैंने आकाश की ओर हाथ बढ़ाया था। मैंने सोचा था कि कोमल से विवाह कर सकूँगा। मैं समझता था कि वह मुझसे प्रेम करती है।

वृद्ध ने कहा— तूने आकाश की ओर हाथ बढ़ाया लेकिन यह नहीं देखा कि तेरे पैरों के नीचे ज़मीन तक नहीं है। पागल ! कोमल से तू विवाह करेगा ? मन्दिर का अर्चक एक पोस्टमास्टर की पुत्री से विवाह करेगा ! घर में तेरे है क्या जो तू ऐसी मूर्खतापूर्ण बात सोचने लगा ? राजम क्या रहने देगी तुझे ? क्या वृद्ध नयनाचारी को मालूम है कि उसका बेटा वह काम करने लगा है जो प्राचीन काल में राजा किया करते थे ? गोपालन होश की बात कर होश की !

गोपालन ने गर्दन झुका ली। उसका गला रुध गया। वह कुछ भी नहीं कह सका।

वृद्ध कहता गया— मैं तेरा ब्याह करा दूगा। विश्वनाथ की कन्या अब चौदह बरस की हो चली है पिता भी अर्चक है। मुझे आशा है कि वह तुझे अवश्य अपना जमाई बना लेगा। उठ चल ! बेकार अंधेरे में पड़ा-पड़ा क्या कर रहा है ?

किन्तु गोपालन नहीं उठा।

वृद्ध देर तक समझाता रहा। किन्तु जब कोई नतीजा नहीं निकला तो बड़बड़ाता हुआ चला गया।

आधी रात के बाद जब गोपालन बाहर निकला तो हाथ पाँव टूट रहे थे। चाँदनी देख कर लगा जैसे चारों तरफ आग लग रही हो। पुष्करिणी पर चन्द्रमा की शुभ्र किरण खेल रही थीं। ऐसे ही दमयन्ती के विरह में नल बैठा रहा होगा। ऐसे ही उसके हृदय में भी आग लग रही होगी।

वह उन्मत्त हो उठा। रात अगड़ाई ले रही थी। वृद्ध ताताचारी का उपहास अब भी उसके काना में गूँज रहा था।

धीरे धीरे भोर हो गई। ठंडी ठंडी हवा चलने लगी। उसने देखा कोमल घड़ा लिये पुष्करिणी की ओर आ रही थी। गोपालन को देखकर वह मुस्कराई। फिर उसने कहा— कहो आयंगार! क्या रात सोये नहीं? तुम्हारा मुह पीला क्यों पड़ गया है?

गोपालन का श्वास भीतर घुट उठा। उसके मह से निकला— 'तुम्हारा विवाह हो रहा है?

हाँ हाँ! क्यों? उसने हँस कर कहा— आशीर्वाद दे रहे हो आचारी? तिरच्चानूर में ही होगा। कोई दूर तो है नहीं। बस पहाड़ से उतरने की देर है। और जैसे मन ही मन वह कल्पना के सुख में मस्त होकर मुस्कराइ। फिर एकाएक उसने सिर उठाया। देखा गोपालन का मुख और भी उतर गया था। लगा जैसे उसका हृदय असह्य यंत्रणा से छुटपटा रहा हो।

ओह! उसके मुह से निकल गया— तुमको हुआ क्या है ब्राह्मण?

गोपालन गुम सुम खड़ा रहा। कोमल जैसे समझ गई। उसने विद्रूप से कहा— आओगे विवाह में? वहाँ कई अर्चक होंगे। आना! खूब दक्षिणा मिलेगी! सच! मैं झूठ नहीं कहती!

गोपालन के रोम रोम पर किसी ने अंगारे फेर दिये। फिर भी वह प्रतिकार की भावना को प्रोत्साहन नहीं दे सका। अपमान का घूँट उगल न सका। जैसे संसार को उस विष से बचाने के लिये वह उसे पी गया। उसके मुह से केवल निकला— आऊँगा देवी! तुम्हारे सौभाग्य को दृढ करने के लिये मैं मन्त्र उच्चारण करने आऊँगा।

कोमल ने स्नेह से उसकी ओर देखा। जैसे उसकी शंका दूर हो चुकी थी।

गोपालन खड़ा नहीं रह सका। वह लौट आया। भीतर आकर एक स्तंभ के सहारे खड़ा हो गया। लगा जैसे वह भी पाषाण की एक मूर्ति हो ।

शहनाई बजने लगी। उसका तीव्र शब्द मङ्गल का सूचक बन कर कानों में गूंजने लगा। चारों ओर अगरबत्ती की मोहक गंध उठ रही थी। पके हुए केलों की गंध उठती और हवा के साथ कभी मङ्गल कलशों पर जाकर थिरकती कभी द्वार पर बंधे केले और आम के पत्तों को खड़खड़ा देती।

कोमल का विवाह हो रहा था।

गोपालन उदास सा पास की धर्मशाला में बैठा शहनाई की आवाज़ सुन रहा था। जैसे यह समस्त वैभव जो आँखों के सामने चल रहा है इसमें उसका कुछ भी नहीं है वह दलित और दयनीय सा उठा कर किनारे रख दिया गया है कि अमृत की लहरें बहती जाय और वह केवल उनका कल कल शब्द सुनता रहे बोले कुछ नहीं छुए कुछ नहीं।

ब्राह्मण वेद मन्त्रों का उच्चारण कर रहे होंगे। अग्नि में घी पड़ते ही लपटें हरहरा कर किलकिलाती उठती होंगी और धुये से कोमल की आँखें लाल पड़ गई होंगी। अनेक युवक युवती अच्छे अच्छे कपड़े पहने वहाँ इकट्ठे होंगे। किंतु गोपालन तो वहाँ नहीं जा सकता। वहाँ जाकर होगा भी क्या?

पीछे से वृद्ध ताताचारी ने कंधे पर हाथ रख कर कहा—अरे गोपालन! तू अभी यहीं है? चलेगा नहीं? वहाँ तो अनेक ब्राह्मणों को बुलाया गया है। जो जायेगा दक्षिणा पायेगा कोई कम-ज्यादा नहीं। आखिर इस स्थान के वही तो पुराने जमींदार हैं। अब भले ही उतने नहीं रहे। एक समय था जब वही यहाँ के सबसे बड़े आदमी थे। तू तो तब था भी नहीं। तेरे बाबा इन्हीं के यहाँ अर्चक थे इनके निजी

मंदिर में। और खाना बनाना तो उन्होंने और मेरे बड़े भाई ने इन्हीं के बाबा के यहाँ सीखा था। चल न।

गोपालन ने कुछ नहीं कहा। वृद्ध ताताचारी के मुख पर एक बर्बरतापूर्ण हास्य खेल उठा। उसने कहा— मूर्ख! तू मेरे पुत्र के समान है! क्यों बेकार की बातों में पड़ा है? तुझे शर्म नहीं आती कि प्रेम करने चला है?

गोपालन ने फिर भी मौन रहना ही सबसे अच्छा समझा। जाने क्यों वह बहुत कुछ कहना चाह कर भी कुछ नहीं कह सका।

अनंत हाहाकार की तरह बाजे की आवाज उसके कानों में गूजती रही जैसे उसके प्राणों पर वज्रों का भयानक प्रहार हो रहा हो। वह दरिद्र था। कोमल एक धनी की पुत्री थी। सोचते सोचते वह रो पड़ा।

घर पहुँचने पर राजम ने आँखों को कपाल पर चढ़ाकर हाथ नचा कर कहा— तुम तो जैसे 'बड़यवर (रामानुजाचार्य्य) ही हो जो तुम्हें कुछ चिन्ता नहीं! सभी तो गये थे। कम-से कम बीस बीस रुपया हर एक को मिला है। लेकिन तुमने तो जाने की ज़रूरत ही नहीं समझी! वह कह कर चुप हो गई। गोपालन के मुख पर असह्य व्यथा थी। लेकिन वह कुछ भी नहीं समझ सकी। अपार विस्मय से उसने देखा वह सामने से हट गया। वह मुह खोले ही खड़ी रह गई। अंत में उसने कुछ समझने का प्रयत्न किया। मुस्कराई। किन्तु इस योग की असम्भवता पर केवल हँस दी। नहीं गोपालन कुछ भी हो इतना मूर्ख नहीं हो सकता। राजम को फिर भी उससे कुछ स्नेह अवश्य था। पति के चले जाने पर वह उससे बात बात पर चिढ़ती तो थी किन्तु कुछ अपना अधिकार समझ कर ही तो उससे जो चाहे कह जाती थी। खाने के समय भी व्यंग्य कसती किन्तु कभी उसे भूखा न उठने देती। ऐसा होता, तो रोती लड़ती और अपनी करके ही रहती। जब कुछ समझ में नहीं आया, तो वह फिर अपने काम में लग गई।

गोपालन की व्यथा बढ़ती ही गई। वह रात को बहुत कम सो पाता। कोमल सामने आकर खड़ी हो जाती। संध्या समय वह देखता पति पत्नी घूमने जाते। कोमल का गर्व से उन्नत मस्तक देखकर गोपालन का रहा सहा धैर्य भी लुप्त हो जाता। मन ही मन वह तर्क करता 'मैं क्या किसी से कुछ कम हूँ ? अरे अर्चक का बेटा अर्चक ही तो होगा ! पहले क्या हमारी कम इज्जत थी ? अब जो लोग अङ्गरेज़ी पढ़ पढ़ कर धर्म को भूल केवल धन से मनुष्य के महत्त्व का माप करते हैं वे ही हमारी उपेक्षा करते हैं। मैं अपना काम करता हूं खाता पिता हूं। किसी से माँगने तो नहीं जाता ? और फिर अमीर गरीब होना क्या किसी के हाथ की बात है ?

और सोचते-सोचते वह बड़बड़ा उठता— बूढ़ा ताताचारी सठिया गया है। कहता है वेंकटरामन् को रसोइये की जरूरत है जाकर नोकरी कर ले ! मैं कोमल की नौकरी करूगा ? मैं उसका सेवक बनकर रहूँगा ? और अपने आप से उसे घृणा हो आती। वह अँधेरे में मुँह छिपा लेता ।

धीरे धीरे बात आई—गई हो गई। गोपालन का उद्वेग कभी उठता कभी गिरता। वह बहुत कम बात करता। मन्दिर में ही अधिकांश समय बिताता। कभी कभी जाकर पिता से मिल आता।

नयनाचारी अवसर पाकर गोपालन के सामने राजम को बुला कर कहते— बेटी तेरे सामने तो यह बच्चा है। वरदाचारी इसे बहुत प्यार करता था। लेकिन ईश्वर की इच्छा। वह तो इसे छोड़ गया अब तू ही इसकी माँ है। क्यों नहीं इसका भी ठिकाना कर देती ? मैं तो अब बूढ़ा हुआ। देख जाऊँ इसका ठिकाना लगते भी नहीं तो फिर ।

गोपालन ऊब जाता। देख जाने की इस तृष्णा में पिता के वात्सल्य पूर्ण हृदय की कितनी अथाह ममता थी वह न समझ पाता। वृद्ध कभी अपनी बात के विरुद्ध कुछ भी न सुनते क्योंकि उन्हें अपनी आयु का

गर्व था। वह औरों को अपने सामने बच्चा समझते थे। अभी क्या जानें ये? जाने क्या क्या सोचते हैं? ऋषि मुनियों ने भी यही तथ्य निकाला है। और इस संसार में है ही क्या?

राजम इसे तुरन्त स्वीकार कर लेती। वह दिल ही दिल में सोचती और प्रसन्न होती आयेगी एक और। घर भर जायगा। गृहस्थी बढ़ जायगी। जीवन की यह नीरसता दूर हो जायगी। और सबसे बड़ी बात यह होगी कि अधिक छोटों के होने पर वह अधिक बड़ी हो जायगी और अधिकार जताने को उसको अधिक लोग मिल जायगे। फिर वह काम-काज से मुक्त होकर पूर्णतया स्वामिनी की तरह शासन कर सकेगी।

किन्तु प्राय जैसे बात उठती वैसे ही दब जाती। गोपालन की अरुचि अधिक बढ़ती जाती। राजम अपने विचार दौड़ाती किन्तु कहीं अन्त न मिलता। वह हार कर लड़ने लगती। वृद्ध कहते— देख मेरी आत्मा भटकेगी। किन्तु गोपालन को यह विश्वास न होता कि आत्मा है भी या नहीं। एक दिन तो परमात्मा की सत्ता पर जो पहले अडिग विश्वास था वह भी डाँवाडोल हो गया। डर कर गोपालन ने एक हज़ार आठ बार गायत्री महाजप किया। तब कहीं मन का विकार दूर हुआ।

इतने सब पर भी उदासी दूर न हुई और जीवन का रेगिस्तान तरल होता न दीखा।

एक दिन गोपालन जब खाने बैठा तो राजम ने कहा— कुछ सुना तुमने?

गोपालन ने पूछा— क्या?

कोमल के बाप की अपने जमाई से खटपट हो गई। बाप ने कहा— हम एक ही जगह रहते हैं। फिर लड़की यहाँ चली आया करे तो क्या हर्ज है? मगर वेंकटरामन् तो अंग्रेजी पढ़ा है। वह क्या बहू के बिना एक भी मिनट रह सकता है? लड़ाई हो गई। कोमल ने बाप को

दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंका। देखा आज कल का ज़माना? जन्म भर पेट काटकर खिलाया और यह नतीजा हुआ। और फिर दो क्षण रुक कर राजम ने कहा—लड़की भी क्या कभी किसी की हुई है? यह तो पूर्व जन्म का दण्ड होता है कि खिला पिला कर लड़की को बड़ा करो और पैर पूज दूसरे को दान कर दो।

गोपालन ने राजम की बात की सत्यता स्वीकार की। लड़की फैशन में पड़ गई है। नहीं तो क्या बाप की अवहेलना करती? किन्तु फिर दिमाग में ख्याल आया पति ही तो विवाह के बाद सब कुछ है। फिर भी व्यक्तिगत विद्वेष ने कोई सामंजस्य स्थापित नहीं होने दिया। गोपालन यह सुनना चाहता था कि कोमल वैंकटरामन् से विवाह करके सुखी थी।

चार महीने बीत गये। गोपालन ने फिर एक बात सुनी। छाती के घावों पर मरहम सा लगा। विद्वेष की धधकती आग बुझी। कितना निकृष्ट सुख था वह। किन्तु यह वह उस समय अनुभव नहीं कर सका। कोमल का पति बीमार था। इलाज हो रहा था किन्तु कोई लाभ होता नहीं दिखता था। गोपालन की व्यथा फिर भड़क उठी।

अँधेरा हो गया। द्वार पर खटखटाहट सुनकर कोमल ने आकर खोल दिया। गोपालन उसे देखकर सकपका गया। उन दिनों कोमल के घर बहुत कम लोग जाते थे। किन्तु गोपालन को देखकर उसने तनिक भी विस्मय नहीं प्रकट किया जैसे उसे मालूम था कि वह आयेगा।

उसने कहा—कहो आयंगार! कैसे कष्ट किया?

गोपालन ने देखा उसके मुख पर उदासी थी और वह उद्विग्न-सी लग रही थी जैसे भविष्य का भूत उसे रह रह कर डरा देता हो और वह आने वाली आपत्तियों को झेलने के लिये तैयार हो रही हो।

गोपालन ने कहा—कुछ नहीं। हाल पूछने आया था।

अब तो वह अच्छे हैं पहले से। डाक्टर कहते हैं जल्द ही अच्छे हो जायगे।

गोपालन नें चलते चलते कहा— कभी आवश्यकता हो तो मैं सेवा के लिए प्रस्तुत रहूँगा।

'जानती हू। किन्तु विश्वास तो तब होगा जब तुम प्रत्यक्ष कुछ कर दिखाओगे। समय पर बुलाऊँगी? पीछे तो न हटोगे?

नहीं! गोपालन ने चलते चलते कहा।

कोमल ने नमस्कार! कह कर द्वार बंदकर लिया।

गोपालन सोच रहा था चलते चलते मुझसे वह क्यों कुछ आशा करती है? यह मान करने और रूठने का अधिकार उसे दिया किसने? विश्वास करती है फिर भी शंका की चाबुक मार कर आहत करने का भी प्रयत्न करती है।

कुछ दिन बाद घर घर में एक नई अफवाह फैल गई। गोपालन ने सुना। उसे विश्वास नहीं हुआ। मगर राजम छोड़ने वाली नहीं थी। उसने उसे देखते ही कहा— अरे सुना तुमने? कोमल का आदमी शराब पीने लगा है।

शराब! गोपालन के मुह से निकला। ऐसा लगा उसे जैसे आस मान फट गया हो या जमीन खिसक गई हो।

हाँ हाँ शराब विलायती शराब! मैं तो पहले ही जानती थी। पोस्टमास्टर घमण्ड नहीं कर सकेगा। और एक मुक्का सीने पर मारा, जैसे कोई कमाल किया हो और मुस्कराती हुई गोपालन की ओर देखने लगी।

क्यों पीता है वह शराब? गोपालन ने धीरे से कहा—'ब्राह्मण का बेटा! एक पवित्र वंश में उत्पन्न होकर ये चाण्डालों के से कर्म! क्या ऐसे ही वह बाप का नाम चला रहा है? पोस्टमास्टर तो कहते थे कि वह पढ़ा लिखा है।'

नाम तो तुम भी एसे ही चलाते। यह तो कहो कि अंग्रेज़ी का काला अक्षर तुम्हारे लिये भैंस बराबर हैं। वैसे भी क्या तुमने कभी बाप की बात मानी है? मैंने कितनी लड़कियाँ देखीं लेकिन तुम्हारी टेक तो जैसे पत्थर की लकीर है।

गोपालन ने उस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। दो क्षण बाद उसने कहा—'क्या यह बात सबको मालूम है?

अरे बाप रे! राजम ने हाथ बजा कर कहा—मालूम कैसे न होगी? क्या सब लोग जहर खाकर सो गये हैं? वह पी पीकर सड़क की नालियों में गिरता फिरे और किसी को मालूम न हो!

गोपालन का चित्त खिन्न हो गया। अतीव घृणा से उसके मुह में भी एक कड़वाहट सी फैल गइ। यह क्या हुआ? क्या बेचारी कोमल को कोई सुख बदा नहीं है?

बाहर आकर सुना बात सचमुच फैल गइ थी। ब्राह्मण सभा ने एक मत से उसका बहिष्कार करने का निश्चय किया था। फिर भी किसी को एकदम आगे बढ़ने का साहस नहीं होता था। वंकटरामन् को सब लोग धनी जो समझते थे। गोपालन विक्षुब्ध हो उठा।

करीब चार महीने और बीत गये। गोपालन के हृदय में एक तूफान सदा हाहाकार करता रहता। ऊपर से देखने में वह पहाड़ की तरह गंभीर और शान्त दिखाई देता।

एक दिन शाम को जब वह पहाड़ से उतरने लगा तो ताताचारी ने रास्ते में उसे रोक कर कहा—वैंकटरामन मर गया। पोस्टमास्टर की बेटी विधवा हो गई।

गोपालन हत बुद्धि सा खड़ा रह गया। वृद्ध ताताचारी ने कोमल के प्रति उसके स्नेह को जानकर घृणा से मुँह फेर लिया। निस्सहाय कोमल के अंधकारमय भविष्य की बात सोचकर गोपालन का हृदय काँप उठा।

इसके बाद कुछ दिन चुपचाप बीत गये। फिर एक दिन गोपालन

चौंक उठा। सामने एक लड़का खड़ा था। उसने लड़के की ओर बिना देखे ही पूछा—कौन है तू? कहाँ से आया है?

लड़का उसकी ओर निस्संकोच आँखों से देखकर बोला—कोमल अम्माँ ने भेजा है।

गोपालन जानकर भी अनजान बन गया। उसने अपरिचित की भाँति सिर उठा कर पूछा—क्या बात है? कहता क्यों नहीं? बेकार क्यों खड़ा है?

उन्होंने आपको बुलाया है? लड़के ने कह कर जीभ काट ली।

गोपालन हँस दिया। उसने कहा—बुलाया है! क्यों? कह दो जाकर गोपालन उसका नौकर नहीं है! समझे? जा चला जा यहाँ से!

लड़के की जीभ तालू से सट गई। वह कहना चाह कर भी और कुछ नहीं कह सका। इधर उधर देखकर चला गया।

गोपालन का हृदय उन्माद-जनित संतोष से भर गया। सोचने लगा वह आज सब कोई साथी नहीं हैं तब गोपालन की याद आई है! किन्तु मैं तो एक दरिद्र अर्चक हूं! वह तो धनी घर में पली है। रुपया पानी की तरह बहा सकती है। वह क्यों मेरी प्रतीक्षा कर रही है? और उसको शांति सी अनुभव हुई। आज वह विधवा है। आज वह किसी काम की नहीं है। आज समाज में उसका कोई स्थान नहीं है। दो दिन बाद पुष्करिणी में नहा कर गले में गीला आँचल डाल कर आयेगी तब देखूंगा उसका गर्व! जब ब्राह्मण अपने हाथों से उसके गले का तिरमङ्गल्यम तोड़ कर फैंक देंगे जब उसका यौवन सिर धुन धुन कर सुहाग के लिये तड़पेगा तब देखूंगा उसकी शेखी! वह पागलों की तरह हस उठा। और स्वयं वह? उसके होठों पर घृणा की हँसी सर्पिणी की तरह तड़प उठी। क्या है गोपालन? कुछ नहीं। निरी मिट्टी!

इस द्वन्द्व ने उसे पराजित कर दिया। वह छत की ओर देख कर एक बार मन ही मन कांप उठा।

सहसा पग चाप सुन कर सिर मोड़ा । देखा तो विश्वास नहीं हुआ। सामने वज्राहत-सी कोमल खड़ी थी। वह आज भी सिर में तेल डाले थी। माथे पर कुम कुम लगा था हाथों में चूड़ियाँ थीं। पूरी सुहागिन बनी थी आज भी। किंतु आज वह एक प्रेत के लिये अपने आप को सजाये हुई थी क्योंकि ग्यारहवें दिन ही धर्म के अनुसार वह अपना यह स्वरूप त्याग सकेगी।

गोपालन को लगा कि कोमल का सारा शृङ्गार ऐसा था जैसे स्वर्ण चिता लपटें उछाल उछाल कर धधक रही हो। उसकी छाती धक से रह गई। उसने देखा और देखता ही रह गया।

कोमल ने कहा— आयङ्गार मैंने तुम्हें बुलाया था। जानते हो क्यों?

नहीं! उसने कहा— किन्तु सोचता अवश्य हूँ।

क्या? उसने निर्भीकता से पूछा।

यही कि तुम एक जमींदार की पत्नी हो और

पत्नी नहीं आयंगार कोमल ने बात काट कर कहा— विधवा कहो एक मृत जमींदार की विधवा! और वह हँस दी।

गोपालन के शरीर में वह हँसी ज्वाला बन कर फैल गई। उसने नितान्त कठोरता से कहा— विधवा ही सही। किंतु तुम्हारे स्वामी मर कर भी जमीन तो अपने साथ ले नहीं गये! उसकी तो तुम्हीं स्वामिनी हो। धन तो तुम्हारे पास है ही। तभी तुम्हें आज्ञा देना आता है। इसी से बुलवाया था न? मुझ-जैसे ब्राह्मण खरीद लेना क्या तुम्हारे लिये कठिन है?

कोमल मुस्कराई और बोली— नहीं आयंगार यह गलत है! यदि मैं अपने को घर के भीतर रखने का प्रयत्न न करती तो संसार मेरी ओर उँगली उठा कर कहता है कि देखो मरने का आसरा देख रही थी। उसके जाते ही इसका रास्ता खुल गया।

गोपालन ने सुना। पर वह कुछ भी नहीं समझ सका। वह चुप खड़ा रहा। कोमल ने फिर कहा– जानते हो मैं तुम्हारे पास क्यों आई हू?

नहीं! उसका स्वर गूज उठा! अब भी जैसे उसे उससे कोई समवेदना नहीं थी।

कोमल कहती गई— जानते हो मेरे स्वामी शराब पीने लग गये थे?

जानता हू! वह पापी था! गर्व से उसने सिर उठा कर कहा।

हू! कोमल हस दी। पापी कौन है यह तो ईश्वर ही जानता है। मैं तो केवल यह जानती हूँ कि वह मेरे स्वामी थे!

गोपालन ने सिर उठाया। देखा वह तनिक भी लज्जित न थी जैसे चिता की राख कभी लज्जित नहीं होती चाहे उस पर कुत्त चलते रहें या गीदड़!

स्वामी! गोपालन के मुँह से निकला— तो वह शराब क्या पीता था?

'डाक्टर ने कहा था कि दवा के रूप में पिया। किंतु वह भी आदमी ही थे आदत पड़ गई। बहुत पीने लगे स्वास्थ्य गिर गया। किन्तु छोड़ नहीं सके। दोष तो मेरे सुहाग का है उनका नहीं! आखिर गलती आदमी से ही तो होती है।

गोपालन ऊब गया। उसने पूछा— तो तुम मुझसे क्या चाहती हो?

पिता जी की उनसे लड़ाई थी यह भी तुम शायद जानते हो। और मैं पिता के घर नहीं जाती यह भी तुम्हें शायद मालूम है। मालूम है न?

गोपालन ने सिर हिला दिया।

आज उनकी मौत पर मेरे पिता ने हर्ष मनाया है। सारा समाज उनकी ओर है क्योंकि उनके पास पैसा है।

पैसा तो तुम्हारे पास भी है। गोपालन ने व्यंग्य से कहा।

कहाँ। जब था तब था। अब तो नहीं है।

क्यों? सब क्या हो गया?

शराब मुफ्त तो मिलती नहीं? और वह फिर हसी। गोपालन अचरज भरी आँखों से देखता रहा।

वह फिर बोली— तुम्हारे धर्म में पिता पुत्री का शत्रु होकर भी धार्मिक ही रहता है। लेकिन मैं भी सिर नहीं झुकाऊँगी। देखते हो जो गहने पहने हूँ। बच दूगी इन्हें। पति का क्रिया कर्म तो करना ही होगा। नहीं मानती न सही नहीं जानती न सही। किन्तु मनुष्य मर कर प्रेत नहीं होता यह भी तो नहीं जानती। पुरखे जो कुछ करते आये हैं उसे कर देना भी तो जरूरी है आयंगार? और फिर एक ज़मीदार का क्रिया कर्म भी तो उसकी प्रतिष्ठा के अनुकूल और अनुरूप ही होना चाहिये न? वह रुक गई जैसे श्वास लेने के लिए।

तो तुम तैयार हो? दो क्षण निस्तब्ध रहने के बाद उसने कहा— ब्राह्मण आते नहीं। मैं तो कहीं आ जा नहीं सकती। तुम अपने ऊपर क्रिया कर्म करा देने की ज़िम्मेदारी लेते हो।

गोपालन चुप रहा।

नहीं होता साहस? उसने पूछा— यदि तुम्हारा धर्म एक बात आवश्यक करके उसका साधन केवल रिश्वत के बल पर दिला सकता है तो मैं कुछ नहीं कहती। क्रिया कम न होगा तो न हो। तब मेरा सुहाग भी समाप्त न होगा। जब तक वह प्रेत हैं तब तक मैं विधवा नहीं हूँ। मैं ऐसे ही शृङ्गार करती रहूँगी। तब एक दिन लाचार होकर तुम ब्राह्मणों को शायद मेरी हत्या करने के अतिरिक्त और कोई चारा नहीं रह जायगा।

गोपालन के हृदय को जैसे किसी ने से जोर से नोच लिया। प्रेत की पत्नी। कौन? कोमल। नहीं नहीं यह अत्याचार नहीं हो सकता।

उसने सिर उठा कर दृढ़ स्वर में कहा— जाओ। लौट जाओ। मैं आऊँगा तुम्हारे सुहाग का अन्त करने। जिस धर्म ने ब्राह्मण को सब कुछ बनाया है उसी ने ब्राह्मण का सबसे बड़ा अपराध धर्म के काम न आना भी कहा है। तुम्हारा पति पापी था। मैं उसकी आत्मा को न केवल प्रेत योनि से छुड़ाऊँगा बल्कि उसे पवित्र भी करूँगा। युग युग के अंधकार में वह नहीं भटकेगा। उसकी प्यास बुझेगी उसकी भूख मिटेगी। तुम्हारे सौभाग्य का कुमकुम मिटा कर मैं तुम्हें भी पवित्र कर दूँगा। तुम्हारी यातना को मैं मंत्रों से केवल समाप्त ही नहीं करूँगा वरन् एकादश के दिन स्वयं प्रेत का यम भोज करूँगा और वह सीधा स्वर्ग चला जायगा कह कर गोपालन ने उसकी ओर इस तरह देखा जैसे आशा कर रहा हो कि वह कृतज्ञता से नतमस्तक हो जायगी क्योंकि एकादश का यम भोज अग्नि की भेंट किया जाता है क्योंकि परम्परा का विश्वास है कि पवित्र वैदिक रीति से चलने वाला ब्राह्मण उसे खाकर अधिक दिन जी वत नहीं रहता।

किन्तु कोमल अप्रभावित-सी खड़ी थी। उसने सिर हिला कर कहा— वह सब तो नहीं होगा आयंगार! जो खाली हो गया है वह तो कभी भी नहीं भर सकेगा। हाँ क्रिया कर्म अवश्य हो जायगा। मैं कृतज्ञ होऊँगी।

गोपालन किंकर्त्तव्य विमूढ़ सा हो गया। वह क्या कहे?

तभी कोमल ने मुड़ कर कहा— तो आयंगार कल नया दिन है। कल ही से काम प्रारम्भ होगा।

तुम निश्चिंत रहो! गोपालन ने उत्तर दिया।

कोमल झुकी और प्रणाम किया। उसकी आँखों से दो बूँद आँसू पृथ्वी पर टपक पड़ा। उसने कहा— जाती तो हूँ! यह मैं जानती हूँ कि मेरे आने के पहले तुम मुझसे क्रुद्ध थे। अब तो नहीं हो?

नहीं! गोपालन ने निर्विकार हो कर कहा।

तुम पूरे प थर हो । तु हारा हृदय शायद मेरे अ याचारों के कारण अब बिलकुल निर्जीव-सा हो गया है ?

नहीं । गोपालन ने कह कर मुँह फेर लिया । फिर उसने एक क्षण रुक कर कहा— यह गर्व लेकर न जाना कि तुम ने मुझे मूख बना दिया है । जो कुछ मैं कर रहा हू वह केवल इसलिये कर रहा हू कि ब्राह्मण होने के कारण लाचार हूँ । मैं तुम पर कोई भी एहसान नहीं कर रहा हूँ । और न मैं तुम्हें प्यार करता हूँ ।

कोमल हस दी । उसके होठा पर एक तरलता सिहर उठी । उसने स्नेह भरे स्वर में कहा— बालक ।

जब वह चली गई तो गोपालन काम में लग गया ।

दूसरे ही दिन धूम धाम से क्रिया कर्म प्रारम्भ हो गया । पहले जो ब्राह्मण हिचक रहे थे अब वे अपने आप आने लगे । गोपालन ने अपने हाथ से कोमल के गहने बेच कर उसके सामने रुपय रख दिये । काम चल निकला । प्रारम्भ के सारे विघ्न राह से हट गये ।

इस सब से जो सबसे अधिक क्रुद्ध हुई वह राजम थी । उसने पूछा क्यों काफी मिलेगा ?

गोपालन ने उपेक्षा के भाव से कहा— मौत का काम है शादी का नहीं कि जिद करूँगा । जमींदार की विधवा जो दे देगी ले लूगा ?

ओ हो । अब तो पूरे धर्मात्मा बन गये । यहाँ मुफ्त भर पेट खिलाती हू न बाप-बेटे को इसी से दिमाग आसमान पर चढा जा रहा है । अगर सौ रुपये लाकर मुझे न देना हो तो यहाँ मुँह मत दिखाना । हयादार होगे तो आप ही यहाँ लौट कर न आओगे । भली कही । रोज बड़े आदमी मरते हैं न कि उनका भी काम मुफ्त किया जाय । देने को पैसे न हा तो मान भी लिया जाय । जमीन तो छाती पर बाँध कर ले नहीं गया । अभी बहुत हैं । फिर अभी से क्या फटी जा रही है उसकी

छाती ! मरे का परलोक सुधारने में भी पैसा खर्च न करेगी। कंजूस कहीं की।

भाभी। पहली बार गोपालन ने कठोर प्रतिकार किया— मैं कुत्ता नहीं हू। समझीं ?

तो मैं भी गाय नहीं हूँ। समझे ? बैल भी जब हल चलाते हैं तब खाने को पाते हैं। और यहाँ बाप और बेटे दोनों की जुगाली सुनते सुनते मेरे तो कान पक गये। मैं कहे देती हूँ

गोपालन से अधिक नहीं सुना गया। चिल्ला उठा— भाभी ! तेरा पाई पाई चुका दूगा। जब तूने खिलाया था तब मैं छोटा था नहीं तो कभी यह जहर न खाता। पिता वृद्ध हैं। तू जो अपना सुहाग लिये फिरती है सो अपने पति को तू ने नहीं खिलाया था। इस बूढ़े ने ही अपनी हड्डी निचोड़ कर उसे खिलाया पिलाया था। समझीं ?

राजम अवाक देखती रह गई। गोपालन के चले जाने पर उसने वृद्ध नयनाचारी को जा घेरा। कहा— देवर वेंकटरामन् के एकाह (एकादश) में बैठने वाले हैं।

सो तो उसे करना ही चाहिये। ब्राह्मण का बेटा है न। वृद्ध ने कहा। उनकी वाणी हमेशा नम्र रहती।

और पैसा कुछ भी नहीं मिलेगा। राजम ने उकसाया।

न सही। वृद्ध ने प्रसन्न होकर कहा— किन्तु धर्म का काम तो करना ही होगा। यदि पैसे के बल पर ही क्रिया कर्म हो तो मुझ जैसे गरीब का तो कभी न हो सकेगा।

राजम लाचार हो गई। वृद्ध के पीछे ही वह बड़बड़ाती थी। सामने कुछ कहने का साहस नहीं होता था। उसने अंतिम बाण मारा— देवर ब्रह्मचारी हैं। क्या उसका एकाह में बैठना उचित होगा ? यदि वह भी नहीं रहे। तो फिर वंश कैसे चलेगा ? कौन देगा हम सबको पानी ?

वृद्ध चौंक उठा। उसने सोचकर कहा— तो उस मूर्ख से किसने

कहा कि वह एकाध में भोजन करे ? किसने कहा उससे ? बाप के रहते बेटा बैठ जाय ऐसा तो कभी नहीं सुना। मैं बैठूगा। घबरा मत। तेरे देवर का बाल भी बाँका न होगा। न जाने मुझसे कौन कहता था कि अब समय आ गया। सचमुच समय आ गया। और वृद्ध गंभीर हो गया।

दिन बीत गया। साँझ बीत गई। रात हो गई। वृद्ध वैसे ही चिंता में मग्न सा बैठा रहा जैसे अपने लम्बे रास्ते को मुड़ कर देख रहा हो और अपने पिछले प्रत्येक कर्म को याद कर रहा हो जैसे उसे उन पुराने पथों से मोह हो गया हो जो अब उसे सदा के लिये छोड़ देने होंगे। वह नहीं रहेगा नहीं रहेग और दुनिया फिर भी चलती जायगी चलती जायगी। किंतु फिर भी उसे दुख नहीं था डर नहीं था। जसे जीवन को उसने स्वीकार किया था वैसे ही मृत्यु को भी वह चुपचाप स्वीकार कर लेगा। सारा जीवन एक खेल सा लग रहा था। कल तक सब के केन्द्र वही थे और कल जब वह नहीं रहगे तो बेटा छाती पर पत्थर रख कर रो लेगा। और क्या करेगा बेचारा ? सदा के लिये सब काम तो रुकेंगे नहीं। कितु इसके लिये क्या दुख ? यह परम्परा तो ऐसे ही चलती जायगी। पिता पुत्र का संसार बनाये और पुत्र पिता का परलोक बनाये। इसीलिये तो इतने स्नेह इतनी भक्ति की सृष्टि हुई है। एकाह में बैठना होगा। ब्राह्मण होकर केवल धन के लिये मरे तो वह कुत्त से भी बदतर। आज ब्राह्मण जो लोलुपता दिखा रहे हैं इसी कारण तो उनका मान नहीं रहा। अब बड़्डन (भंगी) भी राहों पर आते समय आवाज देकर हट नहीं जाते। फिर मन में विचार आया—क्या वे मनुष्य नहीं हैं ? क्या अब उनकी छाया लगने से भगवान अस्पश हो गये ? नहीं मृत्यु की महान् समता के उच्च आदर्श के प्रकाश में वृद्ध ने उस जड़वाद को दुतकार दिया।

कल गोपालन याद करेगा कि वृद्ध यहाँ बैठता था यहाँ पूजा करता था और बैठकर घंटा सोचेगा घबरायेगा। किन्तु होते होते

सब ठीक हो जायगा। समय अपने आप ठीक कर लेगा। वृद्ध का हृदय अतीव स्नेह से एक बार विह्वल हो गया। मृत्यु आकर सब कुछ समाप्त कर देगी और पागल बेटा उस मि ी को चिता पर रखते समय रोयेगा।

मृ यु! वृद्ध के मुह से वेद के महामृत्युंजय मन्त्र के श द फूट निकले— र्यं बकं जैसे आज वह अनेक शक्तियों से पूर्ण महारुद्र त्र्यंबक का यम को क्षण भर रोकने के लिए आवाहन कर रहा हो।

और जो कुछ अभी तक हुआ है कल ऐसे लगने लगेगा जैसे कभी नहीं हुआ। राख को बहा कर जब पुत्र लौटेगा तब संसार में नयनाचारी नाम का कोई चि ह तक नहीं रहेगा। आज तक जिस सबको अपना समझा था यह सब पराया हो जायगा। सब पीछे छूट जायगा सब रह जायगा। कि तु केवल वही नहीं रहेगा। कल मैं ही एकाह में बैठूगा! और वृद्ध वैसे ही बैठा रहा। जैसे आज जीवन मृ यु का महान् आवाहन कर रहा हो!

राजम स्तंभित-सी डरी सी सोच विचार में पड़ गई। यह बूढ़ा क्या करने वाला है? क्या सचमुच वह जाकर एकाह में बैठ जायगा? एकाह का भोजन वह अग्नि की भेंट क्यों नहीं कर देते? किन्तु उनकी बला से! जब एक मूर्ख ब्राह्मण मिल रहा है तो अग्नि में क्यों डाले? और दक्षिणा के नाम पर दिखा दगे सींग! कुछ नहीं! कौन देता है सिधाई से? वृद्ध नयनाचारी और गोपालन के प्रति उसके मन में ममता जाग उठी। कुछ भी हो अपने तो ये ही हैं! ईश्वर की इ छा! जो होता होगा वह होगा ही।

एकाएक वह ब्राह्मण जाति को मन ही मन तिरस्कार से गाली दे बैठी। किन्तु फिर ध्यान आया कि यह ब्राह्मण की ही महिमा थी कि वे जान गये कि मरने पर आदमी प्रेत होता है और वह डर गई और प्रायश्चित के रूप में भगवान के समक्ष सिर झुका कर हाथ जोड़ दिये।

वह चुपचाप देखती गोपालन व्यस्त रहता। ब्राह्मणों को कोमल उसी की राय लेकर द त्तणा देती। सब काम वही करता। कोइ-कोई स्त्री उसकी ओर संदेहपूर्ण दृष्टि में देखती कि इसे इन सबमें इतनी दिलचस्पी क्या है। कि तु वह शोक का काम था इसीलिए उसकी चर्चा चल न पाती वर्ना यहाँ कोइ ऐसा न था जो कोमल और गोपालन के सम्ब ध के अनौचित्य की संभवता पर विचार करना पस द न करता हो।

उन दोनों के स ब ध के विषय में स न्देह लोगों को बहुत पहले से ही था। अब सन्देह सत्य सा लगने लगा।

राजम को क्रोध आया। तभी सब काम मुफ्त किये जा रहे हैं। राँड़ से लगाव जो हो गया है! देखो तो ऊपर से कैसा चिकना बादाम लगता था! मगर अन्दर की किसे खबर थी?

बारहवाँ दिन अपनी पूरी भयंकरता के साथ सिर पर आ गया। जब कोमल को देखकर स्त्रियाँ इधर उधर से आ आकर छाती पीट पीट कर रोने लगीं तब वाद्यार (पुरोहित) ने अग्नि में आहुति दी। खाना केले के पत्त पर परोस दिया गया। कोमल चुप खड़ी रही। उसकी आँखों में एक भी बूँद आँसू नहीं था बल्कि एक गव था कि देखो किसी के किये कुछ न हुआ क्रिया-कर्म हुआ और हो रहा है।

वाद्यार और अनेक ब्राह्मणों ने म त्र पढ़ने शुरू किये। प्रेत शब्द साक्षात कराल प्रेत बनकर आग से उठते धूए को झकझोर गया। वाद्यार ने एकाएक पूछा — एकाह में कौन कौन बैठेगा?

ब्राह्मण एक दूसरे का मुँह देखने लगे। किसी को नहीं मालूम था कि दक्षिणा क्या मिलेगी। व्यथ कौन मौत सिर पर मोल लेता? शठकोपन् ने बैठे-बैठे ही कहा— अग्नि को होम करो बृहस्पती!

नहीं। गोपालन ने आगे बढ़ कर कहा— मैं बैठूँगा।

सब ने अचरज से उसकी ओर देखा। वाद्यार रुककर बोला—तुम्हारा नाम ?

उसी समय गोपालन ने विस्मय से देखा एक वृद्ध ने पीछे से कहा—'नयनाचारी।

वाद्यार ने पूछा—पिता का नाम ?

'वजयराघवाचारी।' उसके मुख पर एक मुस्कराहट फैल गई।

गोपालन चिल्ला उठा—पिताजी यह तुमने क्या किया ?

वाद्यार तब तक नयनाचारी पर यम का आवाहन कर चुका था। गोपालन का हृदय भर आया। वह बोला—किन्तु पिता जी तुम मर जाओगे। क्या तुम नहीं जानते कि पवित्र आचरण रखने वाला ब्राह्मण इसके बाद अधिक दिन तक नहीं जीवित रहता ?

वृद्ध ने मुस्करा कर कहा—श्रीनिवास ने स्वप्न में जो कह दिया है वह क्या झूठ होगा ? जा राजम तेरा विवाह करा देगी। इसके बाद मुझे पितृ ऋण से मुक्त कर देना।

किन्तु गोपालन नहीं हटा। वृद्ध ने धक्का देकर उसे हटा दिया और खाने बैठ गया।

वाद्यार मन्त्र पढ़ता रहा। कभी कभी अन्य ब्राह्मण भी स्वर में स्वर मिलाते। उनके गम्भीर शब्द से अग्नि थरथराने लगी धुँआ चारों ओर फैल गया और प्रेत की अनन्त यात्रा सजीव होकर आँखों के सामने नाच गई।

जब वृद्ध खाकर उठा तो वह मुस्करा रहा था। वाद्यार ने दक्षिणा देने को जब हाथ उठाया तो वृद्ध ने अंजलि लेकर सब ब्राह्मणों को बाँटने का इशारा किया। प्रेत व धन पर डट गया। पच्चीस रुपये ब्राह्मणों में बट गये।

वृद्ध चला गया। क्रिया कर्म सम्पन्न हो गया। घर घर नयनाचारी

की तारीफ होने लगी। किन्तु राजम ने गोपालन और कोमल की बद-नामी करनी शुरू कर दी।

वृद्ध घर पहुँचते ही शैय्या पर जा लेटा और जाने क्यों इतना अशक्त हो गया कि उठ नहीं सका। तीसरे दिन जब राजम गोपालन घर पर नहीं थे हाथ-पैर फैंककर वह अपने विश्वासों पर बलि हो गया मर गया।

घर आकर राजम और गोपालन ने देखा और रो धोकर उसका दाह कर दिया। किन्तु क्रिया कर्म के लिए रुपये नहीं थे।

गोपालन कोमल के सामने उपस्थित हुआ।

सुना आयङ्गार! बहुत दुख हुआ! कोमल ने कहा— तुम्हारे पिता मनु य नहीं देवता थे! और बिना माँगे ही सौ रुपये निकाल कर दे दिये।

गोपालन रो दिया।

कोमल ने कहा — आयङ्गार एक बात कहूँ? बुरा तो नहीं मानोगे?'

नहीं। गोपालन ने उसकी ओर देखते हुए कहा।

जानते हो दुनिया हमें बदनाम कर रही है?'

'मालूम है। गोपालन ने छोटा-सा उत्तर दिया।

डरते तो नहीं? उसने फिर पूछा।

नहीं। डरूँ क्यों? क्या हममें अनुचित सम्बन्ध है?

अनुचित सम्बन्ध तो है आयङ्गार! उसे तुम यों नहीं मिटा सकते! कोमल ने उसके चेहरे पर आँखें गड़ा कर कहा।

क्या कह रही हो? गोपालन का स्वर काँप गया।

क्या? कोमल ने कहा — स बन्ध क्या शारीरिक होने से ही अनुचित होता है मानसिक होने से नहीं?

वह तो केवल धारणा मात्र होती ह उसने सकपका कर कहा।

कोमल हँस पड़ी! उसने सिर हिलाकर कहा— तो तुम्हारा प्रेम

उ माद, पागलपन सब केवल एक साधारण धारणा थी जो आई और चली गई ? फिर जान देने पर क्या तुले थे ?

गोपालन लजा गया। कोमल ने ही फिर कहा— हम बदनाम तो हो ही गये। अब और किसी पर तो मैं विश्वास कर नहीं सकती। तुम्हारा ही भरोसा है। तुम्हीं जमींदारी का काम सँभालो। जानते हो मैं औरत हूँ। सब काम अकेले नहीं कर सकती।

गोपालन चुप रहा। अर्थात् उसने प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

राजम को चैन न आता था न आया। पहले गोपालन रोटियों के लिये उसका मुहताज था पर अब नहीं रहा। जमींदारी का इन्तजाम करता और बड़ी खूबी से करता। सारा रुपया कोमल को दे देता। वह जो देती ले लेता। बात पलट गई। पहले वह रोटियों को तरसता थे अब वह राजम को उल्टे रुपया देता। पहले राजम के दस काम-कर था अब राजम अकेली पड़ गई। इसी से जब कोई अधिकार जताने और लड़ने को नहीं रहा तो वह व्याकुल हो उठी। सुहागिन वह अब भी थी कि तु कुंकुम लगा कर क्या पत्थरों पर सिर पटकती ? वृद्ध जहाँ जहाँ बैठता था वहाँ-वहाँ उसे बैठ कर एक विश्रांति की सा त्वना-सी मिलती। वृद्ध की मृ यु का एकमात्र कारण गोपालन को समझ कर वह और भी उसके विरुद्ध हो गई। ढल चली थी मगर अभी बूढ़ी तो नहीं हुई थी। धीरे धीरे उसको इस बात से स तोष होने लगा कि कोमल और गोपालन के सम्ब ध की बात घर घर चल रही थी। सब उस बात का रोकना चाहते से कि तु कोई सिलसिले का छोर हाथ में नहीं आता था कि पकड़ कर खींच लें और सारा पर्दा सरे से खुल जाय।

कोमल ने गोपालन को देखा और चिंतित स्वर में बोल उठी— 'सुना, आयंगार ? अब तो रहना भी कठिन होता जा रहा है। ऐसे कब तक चलेगा ?

गोपालन ने पानों पर चूना लगाते हुए कहा— तुममें तो साहस था न ? फिर डरती क्यों हो ? कहते हुए उसने सुपारी मुह में डाल कर आठों पानों को मुह में भर लिया और चबाने लगा।

कोमल कुछ देर तक चुप खड़ी रही। फिर बोल उठी— डरती हूँ ! सच आयंगार मैं अपने मन से डरती हूँ।' वह हठात् चली गई।

गोपालन के हृदय में एक कील-सी चुभ गई।

सांझ बीत गई। दीपक जलने लगे। उनके धूमिल प्रकाश में गोपालन ने देखा कोमल चुपचाप खड़ी थी ! वह उसके पास चला गया।

कोमल उसे देखकर सिहर उठी। कुछ देर चुप रह कर उसने कहा— मैंने तुम्हें बहुत दुख दिया है। क्यों ?

गोपालन ने सिर हिला कर अस्वीकार किया। फिर मुँह खोला और बन्द कर लिया।

कुछ कहना चाहते थे ? कहते क्यों नहीं ? मैं क्या तुमसे कुछ कहती हूँ ? तुम्हारी ही दया से तो सब काम ठीक तरह चल रहे हैं। कहने को तो कह गई पर फिर नीचे का होंठ दाँत से काट लिया।

गोपालन ने वह सब नहीं देखा। वह बोला— दया तो तुम्हारी है कोमलम्मा ! तुम्हारे पास रहकर मुझे जितना सुख मिलता है उतना और कहीं भी नहीं मिलता !

क्यों ! उसने उसे और उसकाया।

तुम मुझे बड़ी अच्छी लगती हो ! गोपालन ने कहा— सच बहुत अच्छी लगती हो !

देखा वैधव्य में भी वह वैसी ही सुन्दर थी और उसकी मादकता अब भी धीरे धीरे उस पर रेंग रही थी। गोपालन का हृदय आतुर हो उठा। धुँधला प्रकाश एक नशा सा दे रहा था। दोनों आँख खोल कर एक दूसरे को ऐसे देखते रहे जैसे चार दीपक और जल उठे हों !

गोपालन ने आन्दोलित होकर कोमल का हाथ पकड़ लिया। कोमल ने बेसुध सी होकर आँखें मूद लीं। किन्तु सहसा वह हाथ झटक कर खड़ी हो गई।

गोपालन चौंक कर पीछे हट गया। कोमल की आँखों में क्रोध की भीषण ज्वाला धधक रही थी। वह ठठा कर हस पड़ी। गोपालन भय से काँप उठा।

कोमल ने उसकी ओर उँगली उठा कर कहा— तम ! तुम एक स्त्री को अकेली जान कर उसका अपमान करना चाहते थे? तुम एक विधवा को अपवित्र करना चाहते थे? तुम कहोगे शरीर से क्या होता है? किन्तु मन? मन भी तो तुम्हारा साँप जैसा काला और विषैला है? तुम जिसे मैंने दया करके इतने दिन खिलाया तुम मेरी जड़ काटने पर उतारू हो गये। पापी!

गोपालन जड़ हो गया। चेहरे पर काला रक्त पुत गया।

किन्तु कोमल चुप नहीं हुई। वह बोलती ही गई— घर पर तम कुत्तों की तरह भाभी की दया पर पड़े थे। एक दिन तुमने मेरी ओर हाथ बढ़ाया था किन्तु मैंने तुम्हें फिर भी अपना स्नेह दिया। और अन्त में तुमने यह चाहा कि मैं कहीं की भी न रहू।

गोपालन का कंठ अवरुद्ध हो गया। वह कुछ भी नहीं कह सका।

कोमल उसके पास आ गई। उसकी आँखों में आँसू थे। उसने रोते रोते उसके कन्धे पर हाथ रख कर कहा— मैं जानती हू आर्यंगार! समुद्र तीर की बालू पानी सोखती नहीं तो क्या भीगने से बची रहती है? तुम ने मेरे पीछे ही सब कुछ त्याग दिया। नाम भी छोड़ दिया। मैं जानती हूँ, तुम्हारे मन में मेरे लिये अटूट अक्षय स्नेह है एक काम करोगे?'

गोपालन पत्थर की मूर्ति की तरह खड़ा रहा।

कोमल ने फिर कहा— जाओ गोपालन। आज मैंने पहली बार

तुम्हारा नाम लेकर पुकारा है । सदा के लिये इस देश से चले जावो । कौन है तुम्हारा यहाँ जिसके लिये रहना चाहते हो ? आग और फूस साथ एक साथ नहीं रह सकते गोपालन । मुझे डर है कि मैं इस अग्नि में भस्म हो जाऊँगी । मैं तुम से भीख माँगती हू मुझे अकेली तड़पने दो जाओ । कहीं सुदूर चले जाओ । विवाह करके सुखी जीवन बिताओ । जाओगे ?

गोपालन ने सिर हिला कर स्वीकार कर लिया । वह निश्चल खड़ा रहा ।

कोमल ने कमर से नोटों की एक गड्डी निकाल कर कहा— यह लो गोपालन ! ले लो इसे ।

किन्तु गोपालन ने नोटों को नहीं छुआ । वह द्वार की ओर चलने लगा ।

कोमल ने हठ करते हुए कहा— लेते जाओ इन्हें नहीं तो दर दर भटकोगे । ब्राह्मण के बेटे को भीख लेने में लाज क्या ?

गोपालन ने फिर भी उत्तर नहीं दिया । वह बढ़ता ही गया ।

कोमल ने फिर कहा— भूखों मर जाओगे । यहीं कौन मालिक थे जो इतनी अकड़ दिखा रहे हो ? मुझ पर एहसान रहने दो । तुम दरिद्र हो

किन्तु गोपालन चला गया ।

कोमल ने कुछ देर इधर उधर देखा और फिर फूट फूट कर रो उठी ।

अनेक वर्ष बीत गये थे । उसका हृदय अब भी अपमान से तड़प उठता था ।

गोपालन ने आँख खोल कर देखा । वही प्राचीन अंधकार अब भी छा रहा था । वह उठा और छत पर घूमने लगा । सामने ही कुआँ था नीरव । पेड़ भी निस्तब्ध थे । दूर किसी प्राचीन काल का वह ऐतिहासिक खंडहर भी मौन था । चारों ओर भयानक नीरवता थी ।

कहाँ है जीवन की ममता का उन्माद ?' हृदय अहंकार से पूछ बैठा।

दूर कहीं फुलवाड़ी के किसी पेड़ पर बैठा उल्लू हँस उठा—एक डरावनी हँसी जो उस प्राचीन मन्दिर की इटों से टकरा गई।

और गोपालन विक्षुब्ध सा देखता रहा अविश्वास के कगारों पर खड़ा अपनी ही यंत्रणा में घुटा सा चुपचाप।

आज वह परदेस में है। कहीं कोई उसका नहीं। जीवन यंत्र सा चलता जा रहा है। इसके अतिरिक्त और कोई चारा भी नहीं।

नरक

१

मैं एक चौमंजिला मकान हूं

उस मकान को देखकर यही लगता है कि वह किसी मुग़ल ने सराय के रूप में बनवाया होगा मगर कालांतर में उस पर काई जम गयी और वह काला हो गया। तब कुछ दिन तो उसके बारे में यह अफ़वाह उड़ी कि वह लालाओं की बगीची हो गया है। मगर उसके भाग्य में इज्जत बदी थी कि उस नाम को पूर्णतया सफलतापूर्वक अपने ऊपर सिद्ध न कर सका और वह ऐसा न रहा जहाँ शाम को रोज़ भंग घुटती। इसके कारण तो कई थे मगर किस्सा असल में यह था कि टॉमसन साहब जिनकी कि नील की कोठियाँ थीं उनके नाती हैरिसन साहब कोठियों के बन्द होने पर खर्चा न चला सकने के कारण पहले महायुद्ध के समय उसको लाला हरदयाल के नाम बेच गये थे। और जो हरदयाल जवानी में सर पर पट्टे लम्बी कलम चिकन का अङ्गरखा और काली किनारी की धोती पहनता था अब बुड्ढा होकर नतिनी की धोती पहनता है।

कन्धे पर पाप का गट्ठर है और मुँह में गाली। बेटे और नाती से चिन्‍
है क्योंकि उन्हें कमा कमाया धन मिल जायेगा। इसलिये घर से अलग
रहता है। धुंधली हो गयी हैं आँखें मगर मजाल है कोई उस पर खोटा
रुपया चला ले। वह दो रुपये लेकर संसार पथ पर चला था आज
लाखों की जायदाद खड़ी थी। क्या नहीं किया जवानी में—जूआ नहीं
खेला या शौक नहीं किये। मगर जो किया अपने बूते पर किया। किस
चीज से रुपया नहीं कमाया? चुङ्गी के चुनाव में उसी को वोट दी जिसने
सबसे ज्यादा रुपया दिया। बीमा कराया दूकान का और आग लगाकर
जल्दी ही तमाम रुपया ले लिया। थैली बिना सूद खाये वापिस नहीं
ली—जैसे राजपूत की तलवार एक बार निकल कर बिना खून पिये फिर
म्यान में नहीं घुसती।

मकान के चारों तरफ एक बड़ी बगीची है जिसके एक ओर लम्बा
मैदान है सरकारी। बगीची में अनेक पेड़ हैं कहीं आम के कहीं
जामुना के कहीं घनी छाँह कहीं बिल्कुल नहीं। दो एक नल हर जगह
नज़र आ ही जाते हैं और मकान बड़ी अजीब तरह से बना हुआ है।
यों कहिए कि वह चारों ओर को बसा हुआ है। चार मंज़िल हैं। नीचे
की कोठरियों में ग़रीब लोग बसते हैं।

आज हरदयाल को यहीं रहते हुए तालीस बरस हो गये किन्तु उसे
सिवाय रुपये के और किसी बात की चिन्ता नहीं। बगीची के मन्दिर में
ही वह अक्सर बैठा रहता है। मकान को देखकर लोग अचरज करते
हैं। युगांतर से वह स्तब्ध मूर्त्ति खड़ी है। पक्षी पत्तों में घुसे रहते हैं
जानवर उसकी मोरियों और छज्जों के बीच या पीछे की ओर नीचे।

पूछा है—तू कौन है? और वह प्रतिध्वनि कर पूछता है—तू कौन
है? मानो पूछने का अधिकार सबको नहीं होता। मगर कभी-कभी रात
के सन सन समीरण की झिल झिल ध्वनि में कोई कहने लगता है—मैं

मकान हूँ मैं समाज हूं मैं मानव हूँ सब ही तो मुझमें हैं। न मैं पथ का आदि ही हूं न अन्त ही।

—२—

पहिली यातना ग़दर

सुधीर अपने कमरे में पड़ा पड़ा दीवार पर मकड़ियों की कारीगरी देखता रहा। एक दिन था जब उसके पास सब कुछ था। किन्तु आज वह केवल एक क्लर्क था। कॉलेज में जो गर्म गर्म बहस की थीं उनका नतीजा आज केवल पतालीस रुपयों का भयानक बोझा था।

उसने मन ही मन कहा जो नहीं जानता वह भी पिसना नहीं चाहता पर जो जान जानकर पिसता है वह कितना निर्बल है। आज पराजय और परतन्त्रताने उसे कुचल दिया था। यह भी तो सामाजिक जीवन का एक ग़दर ही था। बग़ल ही एक कमरा लेकर मिडिल स्कूल के मास्टर साहब रहते थे। वे अक्सर कहा करते— देखिये सुधीर बाबू अपनी मर्जी से कुछ नहीं होता। हमारे पिता एक ज़मींदार साहब के यहाँ कारिन्दा थे। तनख्वाह आठ रुपये महीना पाते थे। मगर ऊपरी आमदनी थी कि हम दसवें दर्जे तक बेख़ौफ पढ़े। उसी साल वे स्वर्गवासी हुए और हम नौकरी ढूँढ़ा किये। मगर नौकरी? राम राम। हमारे पिता अङ्गरेजी एक अक्षर नहीं जानते थे लेकिन काम बड़े-से बड़े काम उन्होंने इशारे पर चलाये। बड़े साहब से मिलना कलक्टर साहब से मिलना। हमने उनकी तमाम कमाई धूप में लुटा दी और फिर भी कुछ नहीं। तब प्राइवेट ट्यूशन करना शुरू किया और आज आपकी दुआ से मास्टर होकर दिखा दिया।

सुधीर सुनता और कुढ़ता। मास्टर का जीवन इतना दयनीय था कि उसे उस पर घृणा हो आती थी। मगर मास्टर था कि कभी उसके मुँह से कोई भी शिकायत नहीं निकलती थी। नीचे की मञ्जिल में यही दो कमरे अच्छे थे। उनके नीचे ही ग़रीब लोग रहते थे। उनकी कोठ

रियों की दुर्गन्ध कभी कभी उसके कमरे में भी आ घुसती थी। ऊपर ही कुछ अच्छे कमरे थे और उनमें कौन रहता था यह यद्यपि वह जानता था वे लोग नहीं जानते थे न उन्होंने कभी उसे बुलाया ही। अपने यही ले-देके पढ़े लिखों में एक मास्टर साहब थे और या फिर वे मज़दूर जो पहले तो उससे डरते थे मगर धीरे धीरे दोस्त हो चले थे। उन्हें मालूम था कि बाबू सिर्फ पैंतालीस रुपये पाता है। दोनों वक्त खा कर खास तौर पर साफ कपड़े पहनने को उसके पास कुछ नहीं है। और इसमें उसका कोई दोष नहीं क्योंकि वह पढ़ा लिखा है।

सुधीर का असन्तोष उसकी अपनी अभिशप्त विवशता थी। वह मन ही मन कुढ़ता कि कोई ऊपर वाला उससे कभी भी बात नहीं करता। जब कभी वह मास्टर साहब से कविता की बात करने लगता मास्टर साहब सुनाने लगते अजी साहब अब तो लोगों को कविता का शौक ही नहीं रहा। पहले जब हम पढ़ते थे तो वह अन्ताक्षरी होती थी कि देखने वाले दङ्ग रह जाते थे। अब भी जब गाँव जाते हैं एक आध तो जम ही जाती है।

सुधीर वहीं बात खत्म कर देता। किन्तु मास्टर साहब कहते— सुधीर बाबू कवि तो गिरधर हुए हैं। क्या क्या कुंडलियाँ कहीं हैं। वाह लाठी पर तो कमाल कर दिया है।

सुधीर क्रोध से दूसरी बात छेड़ देता। मास्टर साहब फिर से सहयोग देने लगते।

× × ×

किसी ने द्वार को थपथपाया। सुधीर ने पड़े पड़े पूछा— कौन है?

अरे भाई मैं हूं —कहते हुए खड़ाऊँ की खट खट से कमरे को गुँजाते हुए मास्टर साहब घुस आये। सुधीर खाट पर बैठ गया। मास्टर साहब भी बैठ गये।

क्यों कुछ तबियत खराब है क्या? मास्टर साहब ने धीरे से पूछा।

हाँ कुछ ऐसी ही थी।

सो ही तो मैंने कहा। दिया जले ही तुम तो आज खर्राटे भरने लगे।

मास्टर साहब हँस दिये। सुधीर मन ही मन भुनभुनाया। आज मास्टर साहब कुछ प्रसन्न-से थे। अपने आप बोले— तुमने सुना यार?

नहीं तो क्या हुआ?

और कोई खास बात नहीं मास्टर साहब ने उपेक्षा दिखाते हुये कहा— ऐसे ही।

तो भी। तो कुछ हम भी तो सुनें?

आज बुलाया था।' मास्टर साहब ने ऊपर इशारा करते हुए कहा। हाँ। और फिर सिर हिलाया उनकी चुटिया ने उनकी गर्दन को दो चार हल्की हल्की थपकियाँ भी दीं।

सुधीर ने विस्मित होकर पूछा— यार किसने बुलाया था?

ऊपर जो बाबू रहते हैं उन्होंने। मास्टर ने गर्व से कहा।

क्यों?

उनकी एक छोटी सी बच्ची है। उसे हिन्दी पढ़ानी है। उस्ताद चार रुपये महीना देंगे। घर के घर की बात है। हम तो कहते हैं मेल जोल बढ़ेगा तो अपना ही तो फायदा है। क्यों है न?

सुधीर ने मास्टर साहब की प्रसन्नता देखी और उसने सिर झुका लिया।

मास्टर साहब हर्षित से कहते रहे— आदमी बड़ा सज्जन है। पाँच सौ पाता है मगर घमण्ड छू तक नहीं गया। साहब, यह तो खानदान का असर होता है। आप अपने अच्छे खून के हैं तो रुपये की गर्मी आपको जल्दी नहीं चढ़ सकती। परमात्मा देता उन्हीं को है जो वास्तव में योग्य होते हैं।

सुधीर के दिमाग़ में बड़ी बड़ी क़ब्रें थीं। यह बात भी उसके दिमाग़ में एक लाश बनकर उतर गयी।

—२—

दूसरी यातना ईश्वर की दया

मन्दिर में झाँझ बजती रही। रात के एक बजे तक कीतन होता रहा। कहने को तो सेठ रामलाल ने भी आने को कहा था किन्तु वह अभी तक नहीं आये थे। उनके पिता ने खो चा लगा लगाकर इतना रुपया इकट्ठा कर लिया था कि नौ बेटों के अलग अलग मकान खड़े थे। बेटों की बहुएँ आयी थीं। जब से पाँचवी बहू आयी घर में बँटवारा शुरू हो गया। घनश्याम सिर पीट कर रह गया। बहू मिडिल पास थी। तब लोगों ने समझाया कि पढ़ी लिखी लड़कियाँ ऐसी ही होती हैं।

झाँझ बजती रही और राधे राधे श्याम श्याम का सम्मिलित स्वर गूँजता रहा।

सुधीर को लगता जैसे दिन भर के शोपण के बाद यह प्रयत्न वैसा ही था जैसा कि कोई विद्यार्थी साल भर तो कुछ नहीं पढ़े और इम्तहान पास आने पर ईश्वर से कहे मुझे पास कर दे मुझे पास कर दे। किन्तु मास्टर साहब कहते — पुण्य की बात है। भगवान् का स्मरण है। और कुछ तो कलियुग में कर ही नहीं सकते नाम तो ले लेना चाहिए। ज़माना ही बदल गया है तो कोई क्या करे?

राधेश्याम राधेश्याम श्याम श्याम राधे राधे का अविरत स्वर पीपल के पेड़ में खड़खड़ पैदाकर स्याहीवाले आसमान की सलेटी सी छाया में डोल उठता था। धीरे धीरे एक बूढ़ा आकर स्वर में स्वर मिलाने लगा। उसको देखकर पास बैठा घीसा जरा खिसक कर भीड़ में मिल गया और धीरे धीरे हटने लगा।

थाही घीसा द्वार पर पहुँचा हुआ कह घुटमण्डे बाबा ने पूछा—घीसा कहाँ चला ?

कुछ नहीं। जरा थाही। अभी आया। उसने सकुचते हुए कहा।

किन्तु बाबा ने उसका हाथ पकड़कर कहा—तुम्हारी कसम जाना नहीं।

घीसा ने अपराधी के स्वर में कहा—अच्छा तो चलो न जाऊँगा। उसके शरीर में एक सिकुड़न सी दौड़ गयी। साहस भरा और भीतर जाकर बैठ गया।

बूढ़ा हरदयाल हाथ में माला लिये बैठा था। पास ही एक नया मकान बनवा रहा था। मकान धर्मादा और सूद के साथ-साथ उठ रहा था। घीसा हरदयाल का क़र्ज़दार था। पहले महीने रुपया देर में पाकर वह गरज उठा था—क्यों बे हमीं से साहूकार बनने चला है, साले ? और वह दो आने ?

मालिक घीसा ने कहा—वह भी आजायगे। यह तो जबान की बात थी। यह भी घर वाली को रोती छोड़कर उसके कड़े रख के लाया हूँ। वह तो तुम मिले नहीं जबान की बात थी वर्ना मैं तो कल ही दे दिये होता। क्या करूं लालाजी फेरी लगाते लगाते देही निचुड़ गयी मगर आमदनी की वही मन्दी।

और सट्टा लगाने को कौन तेरा बाप तुझे पैसे दे जाये है।

लो लालाजी सुन रहा हूं देर से। गाली गुस्सा करोगे तो हाँ। कोई इज्जत थोड़े ही बेच दी है।

अबे बड़ा साहूकार आया। खाली कर दे मेरी कोठरी समझा। खाली कर दे। हाँ क्या कही मैंने ?

घीसा लौट आया था। घर आते ही जो देखा कि रामस्वरूप का बुखार बढ़ता ही जा रहा है हिम्मत पस्त हो गयी। उल्टी के बाद भी हिचकियाँ बनी रहीं। वैद्यजी ने जो काढ़े दिये वह दो दिन बाद हलक

के नीचे उतारना हराम हो गया। जाने कौन सी बीमारी थी यही पता न लगा। उसी रात बहू को जाने क्यों गश आ गया। और सुबह होते न होते वह चल बसी। शायद चार पाँच दिन से वह पेट खाली भूखी रहकर मेहनत करती परास्त हो गयी और उसने मरघट में ही जाकर चैन लिया। घीसा ने देखा और वह रो न सका। जब वह लौटा तो बूढ़ी महरिया बहू के कपड़े इकट्ठे कर रही थी। घीसा ने करम ठोक लिये। अन्त में उसकी फेरी पर आँच आयी। पैर टूटने लगे। आँखों के सामने अँधेरा छा गया। बच्चा फिर कराह उठा। उस मांस के लोंदे में अपूर्व शक्ति थी। उसने आँखों के सामने लाचारी का धुँधलका छावी कर रखा था। बुढ़िया भीतर गयी। बहू की खँगवारी उठा लायी। वह घीसा के हाथ पर धर कर बोली— जा लाला के पास जा इसे धर के कुछ ले आ।

घीसा ने देखा। हाथ पर साँप फन सिकोड़े किये कुण्डली मारे बैठा था। यही उसकी बहू के गले से लिपटा रहता था। वह रो दिया।

हरदयाल उस समय मन्दिर में बैठे थे।

घीसा ने झुककर कहा— लालाजी पालागन।

लालाजी ने आँख उठाकर देखा और फिर भजन करने लगे। घीसा ने खँगवारी आगे रख दी और गिड़गिड़ाने लगा— लालाजी अब कभी गुस्ताखी नहीं होगी।

क्या है? क्या है? हरदयाल चिहुक उठे।

बहू गुजर गयी। बच्चा बीमार है।

वह चुप हो गया। हरदयाल ने नर्मी से कहा— अपना अपना भाग्य है भइया। वह सब कुछ करते हैं। सामने शिवलिङ्ग था। उस पर कुछ चन्दन आदि चढ़ा हुआ था। घीसा ने देखा। कठोर सत्यों ने कहा— यह कभी कुछ नहीं करते। किन्तु अज्ञात भय ने कहा—कुछ नहीं करते तो बता हरदयाल आज कैसे इतना रुपये वाला है?

घीसा बोला—सब उन्हीं की माया है। उनकी दया से दुनिया चलती है।

हरदयाल माला जपने लगा।

लालाजी गुजारिस है कि यह खगवारी

कितने की है? भजन करते करते लालाजी ने पूछा।

तेरह रुपया भर है।

तो क्या है? कुछ नहीं। खैर तेरी मर्जी। मगर एक बात है। इधर मेरा हाथ बहुत तङ्ग है। सोचता हू क्या करू?

'महाराज निरास न करना। ब चा तड़प तड़प कर मर जायेगा महाराज।—उसका गला रुध गया।

हरदयाल जैसे औरतों की अदाओं पर मरना भूल या था वैसे ही आंसू से बहल जाने का लड़कपन भी वह प्रारम्भ में नुकसान उठाकर छोड़ चुका था।

उसने कठोर स्वर से कहा—नखरे नहीं घीसू। चार आने सूद की रही।

अजी लालाजी मर जाऊँगा। जान से ही मर जाऊगा। तुम्हारी कसम बुरी मौत मर जाऊँगा। लालाजी तुम्हारे दरवाजे का जस है जो आया वह खाली हाथ नहीं लौटा फिर आज मेरे ही लिए लालाजी दया करो

तब दो आने रुपया लूँगा। समझा? अब इधर की उधर नहीं होगी। क्या समझा?

अब उसी का मूल नहीं तो याज तो चुकाना ही था। कल का दिन था सो निकल गया। तभी घीसा हरदयाल को देखकर खिसक रहा था। उसने धर्म भाव से हाथ जोड़े—हे परमात्मा। हे परमेसुर। मेरे बच्चे को अ छा कर दे।'

कीर्त्तन समाप्त हो गया था। हरदयाल ने घीसा के कन्धे पर हाथ

रख कर कहा—परमात्मा की दया अपार है उसकी महिमा अपरम्पार है।

घीसा ने भक्ति से सिर झुका लिया। तभी हरदयाल ने पूछा—कहो घीसा बच्चा कैसा है?

लालाजी उसकी बीमारी का ही पता नहीं लगता।

अच्छा हो जायगा, चिन्ता की कोई बात नहीं। वह सब अच्छा करते हैं। उनकी दया से जीवमात्र चलते हैं। पूर्व जन्म के पाप ही दुनिया को अँधेरे में डाले हुए हैं। हाँ अब कब तक दे दोगे?

अभी तो नहीं लालाजी जरा हाथ खुले तो ?

अरे! हरदयाल ने टोककर कहा—हाथ तो धीरे धीरे खुलता रहेगा। मगर मैं भी तङ्ग हूं इधर। भैया यों तो काम चलेगा नहीं। अपना मकान बन रहा है न? आ जाइयो उधर ही मजूरी मिलेगी कोई बेगार नहीं है समझे! काम भी हो जायगा और चुकाना फुकाना तो हो ही जायगा।

घीसा ने सुना। पुजारी बाबा ने शङ्ख में श्वास भरा। स्वर गूंज उठा लहराता भरमाता

मन्दिर की अँधेरी छाया में निस्तब्धता मँडराने लगी। चारों ओर हाथ हाथ करता सन्नाटा छा गया। उस विशाल अनेक मंज़िला थाने घर में लोग चुपचाप सो गये। किसी तरह वे सब जिये जा रहे थे। उनमें से किसी का भी भ व य निश्चित नहीं था। आसमान की सल्तनत बन रही थी। मनुष्य ने जैसे पृथ्वी से मोह छोड़ दिया था।

यह भी ईश्वर की दया थी।

—४—

तीसरी यातना परम्परा

दिन थका हुआ सा निकला। बग़ीची के पेड़ सूने-सूने से खड़े थे। बादल अभी अभी बरस कर बन्द हुए थे। अब वे आसमान में इधर

से-उधर भाग रहे थे। उनकी सूनी उसासों से अंतस कुछ कुछ विह्वल हा आता था।

चूरा मर गया था। उसका शव कपड़े से ढँका रखा था। केव ा मुंह खुला हुआ था। आँख निकली पड़ रही थीं और गालों पर डरावनी स्याही छायी हुई थी।

हरगोविन्द ने बाँसों को बाँधा और अर्थी सजाने लगा। महरी रोती रही। ाड़े की अ य स्त्रियाँ आँसू बहाती हुई उसे सान्त्वना देने लगीं। कि तु उसके आँसू बहे जा रहे थे। वह गा-गाकर रो रही थी। हरदयाल ने दूर से सुना और कोठरी बन्द करके पड़ रहा।

चूरा मर गया था। ज़ि दगी जब तक रही उसने अपनी बहू को खूब मारा। पर उसमें एक बहुत बड़ी बात थी। किसी दूसरे की चुगली सुनकर उसने महरी से कभी भी कुछ नहीं कहा।

लेकिन जब उसका हाथ उठता था मजाल थी कि कोई रोक जाय। तब एक बार जब वह जवान थी चूरा अपने दमे की कशिश में खाँस रहा था।

थोड़ी देर बाद भीड़ इकट्ठी हो गयी। महरी गाली दे रही थी—

हाय कढ़ी खाये तेरे कीड़ा पड़

जवानी को जवानी ने लोहे की तरह खींचा। चूरा का हाथ उठ गया था।

गफ़ूरा ने कहा— क्यों बे क्यों मार रहा है साले?

बालिश्त भर के चूरा ने कहा— कतरनी से कपड़े काट जाकर बीच में मत बोलियो, खून हो जायगा खून।

अबे होश की दवा कर मुर्ग़ा बनाकर छोड़ूगा। औरत पर हाथ उठाता है शरम नहीं आती?

शरम आये तेरे माँ-बाप को समझा? जीभ काट लूँगा जीभ!

ग़फ़ूरा बिगड़ गया। हो गये होते दो-दो हाथ। महरी बेबस

बकरी-सी उसकी तरफ देख रही थी और मन में संशय लिये आने वाले तूफान को सहने का साहस भर रही थी। चूरा का हाथ बढ़ने को उठा। गफूरा को लोगों ने पकड़ लिया। हाँ हाँ क्या करते हो?—भीड़ गरज उठी। गालियाँ चल रही थीं। शमसू कह रहा था—हिंजड़ा है साला। गफूर ने बहुत कुछ वज़नी गालियाँ दीं और कहा—औरत तेरी कुतिया है क्या? मगर चूरा को समझाने वालों के कोलाहल भेदकर चिल्ला उठा—औरत मेरी है कि तेरी? अबे मैं इसे फेरे पाड़ कर लाया था कि तू? मेरी चीज फिर तू कौन लाटसाहब का बच्चा है कि बीच में बोलेगा। मैं मारूंगा खोद के गाड़ दूँगा। टुकड़े टुकड़े करके कव्वुओं को खिला दूंगा। तू कौन बीच में बोलने वाला आया?

एक बुजुर्ग आगे बढ़कर गफूरा से कहने लगे—उसकी जोरू उसकी मलामत। कल को फ़िर दोना एक होंगे तू किधर का रहेगा तब? खुदा ने जब अक्ल दी थी तब ये लोग गैरहाजिर थे। तू क्यों बिगड़ रिया है? तू बीच में मीजान बैठाने वाला कौन है?

सब चले गये। चूरा का हाथ चलने लगा।

हरामजादी यहाँ यारों को लिये मौज कर रही है वहाँ ईंट ढोते ढोते मर गये।

बाड़े में यही प्रसिद्ध था कि असल में चूरा अपनी बहू को दिल में बहुत चाहता है। भाई मरद ही का तो हाथ है जाने कब उठ जाये।

चूरा जब तक जिया महरी को चैन नहीं मिला। उसका सुहाग था कि वह घरों में जाकर चौका बासन करती और कमा-कमाकर लाती। चूरा दसे में पड़ा पड़ा बर्राया करता और उन दिनों गिरस्ती उसी पर आ झूलती। इकलौता पता एक नम्बर ढीठ था। वह बाप की भी नहीं सुनता था। उम्र करीब उन्नीस साल की। आज तक कसम

है कि कभी एक पैसा कमाया हो। दिन भर खेलना आवारागर्दी करना। बाप की नजर बचायी माँ से माल ले उड़ा। फिर तो यह देखो वह देखो।

परसों बुखार में बर्राते बर्राते चूरा ने कहा—'देख री जरा उस्तरा तो ले आ।'

महरी ने शङ्कित होकर पूछा— क्यों ?

किंतु चूरा शांत था। फिर भी स्वभाव से बोला— देख री लाती है कि मैं उठूँ ?'

महरी चुपचाप उस्तरा ल आयी। चूरा उसे सिल्ली पर तेज करने लगा।

क्या करोगे ? महरी ने पूछा।

चूरा ने देखा। वह गयी-गुजरी बात-सी एक औरत ; अब कहाँ है वह जोर ? पलक झुक गयीं। बोला— दाद में फोड़ा उठा है काटूगा।

महरी चुप हो गयी। उस गंदे उस्तरे ने घाव करके उस पर जहर का काम किया। चूरा बर्राने को पड़ गया। दिन आय और अपने नि ठुर प्रकाश में उसके मुख को पीलापन दे गया। सन्ध्या अपने जाने के साथ उसके चेहरे का सारा खून ले गयी और रात ने अपनी काली छाया उस पर नि शङ्क होकर अङ्कित कर दी। रात भर चिल्लाकर आज सुबह चूरा उजाले के पहले ही चल बसा। वह मरा और संसार के नियम के अनुसार फूक दिया गया। जैसे जीर्ण चादर हटाकर हड्डियों को तपा दिया गया। महरी रो पड़ी। दो बूँद नीचे गिरीं और वह गा उठी— हाय मेरे राजा ! बात आयी गयी समाप्त हो गयी।

× × ×

पन्ना देर से उठता देर से नहाता देर से खाता और जो भी सब करता देर से ही करता। महरी के बारहमासी कठोर परिश्रम ने खीक

में पुरुषार्थ बन कर प्रकृति पर भी विजय प्राप्त कर ली थी। पन्ना रात को ग्यारह बारह बजे लौटता और अपनी जरूरतों का बखान करता और तब फिर वही फिर वही

पन्ना धीरे धीरे जुआ खेलने लगा। कुछ भी हो उसे जुआ खेलने से काम। औरत और शराब की तरह जुआ भी एक नशा है।

रात हो गयी। आज महरी का शरीर टूट रहा था। कल्लू हलवाई ने पोस्ट मास्टर के लड़के की शादी में ठेका लिया था। वह वहीं से पूरी बेल कर आयी थी।

इसी समय पन्ना ने प्रवेश किया। कमीज़ फटी हुई सिर के बाल बिखरे हुए। एक धमा चौकड़ी से वह घुसा और बोला— अम्माँ दस रुपये दे दे।

महरी ने कराह कर करवट बदली।

पन्ना अधीर-सा फिर बोला— देती है कि नहीं?

महरी कुछ नहीं समझी। लड़के की इस बदतमीज़ी पर उसे क्रोध हो आया। वह उठ खड़ी हुई और चिल्लाकर बोली— दे दूं सो तेरा बाप ही तो कमा-कमा के जमा कर गया है हरामी। यहाँ हाथों से पत्थर तोड़ दिये और लल्ला की पहुची लचक गयी।

पन्ना ने सामने रखे मटके में जोर से ठोकर मारी। मटका तड़ककर टूट गया। सारी दाल बाहर फैल गयी महरी उसे चिल्ला कर गालियाँ देने लगी और रोने लगी। पन्ना ने कहा— देख दे दे। चुपचाप नहीं तो कुट्टी करके धर दूँगा।

अरे देख लिये। कुट्टी करैगा तू? महरी ने दाल बीनते हुए कहा– कमीन नहीं तो कहीं का। आया बड़ा लाट का

इसके बाद उसने कुछ अश्लील गालियाँ दीं। पन्ना फिर चिल्लाया— देख मान जा। नहीं हड्डी तोड़ दूँगा हड्डी मारते मारते

महरी पर बिजली की चोट हुई। वह तड़प कर उसके सामने जा

खड़ी हुई और बकने लगी—'उठा तू हाथ उठा। आज तू मार! अपनी माँ को मार! सपूत बेटा। अरे तेरे मुह पै आग बराय दू कन्ही खाये

पन्ना का हाथ चल गया। परम्परा चल निकली।

बूढ़े गफुरा ने सुना और कहा— जैसा बाप वैसा बेटा

अब वह बूढ़ा था। उसमें बीच बचाव करने का जोर नहीं रहा था।

रामधन ने सुना। हुक्के पर से मुह हटा लिया और फिर ठठा के हँसा और बोला— वाह जिजमान इस घर में रोज़ दिवाली मन रही है। हम तो पहले ही कहते थे

महरी अपमान और विक्षोभ से तड़प तड़प कर रो रही थी। पन्ना उससे छीनकर सारे रुपये ले गया था। कोठरी में मटके फूट गये थे। दाल में आटा मिल गया था। वह उठी और बुखार में बुरबुराते हुए रोते हुए समेटने लगी। आज उसका हृदय टूक-टूक हो रहा था। एक बार उस आदमी की याद आयी जिस पर उसका दारोमदार था। कैसा भी था अपना आदमी था। उसका तो हक था। वह होता तो क्या यह कल का लौंडा यों हाथ उठा जाता। ककड़ी की तरह तोड़ देता कलाई

गरीबी की दुनिया पूँजी के अवैतनिक रूप में पल रही थी।

—५—

चौथी यातना चक्कर फिर चक्कर

लच्छो का आदमी चल बसा। पहले तो वह रोयी लेकिन बाद को उसके जीवन का सहारा उसका आठवाँ लड़का जो किसी तरह जी रहा था उसी पर ममता बनकर केन्द्रित हो गया। लच्छो काली थी। यौवन ढल चुका था। बूढ़ी चाची समझती थी कि वह सारी गिरस्ती पाल रही है लच्छो का दावा था कि उसके बूते पर चूल्हा जल रहा है। चाची के लड़के हालांकि लच्छो के रामचन्द से बड़े थे फिर भी वह रामचन्द को कभी किसी से कम नहीं समझती थी। रात के तीन बजे ही उठ कर

हल्दी या गेहू या चना पीसने बैठ जाती। कोठरी में उसकी चक्की का शोर उसके गीतों से मिलकर बाहर तक मँडरा उठता। जब वह बाहर निकलती बालों पर उन पर पीसन का रङ्ग चढ़ा होता। उसे फटकारती और एक लोटा पानी ले मुह हाथ पाँव धोकर लहगा फरिया पहनती सिर पर कनस्तर धरती और बाजार के पसारी के यहाँ जाकर उसे देकर, पैसे ले आकर घर आ बैठती। दालान में ही देवरानी सुरसुती बैठी रहती लच्छो के पहुँचते ही उठकर जाती और दो मोटी मोटी मिस्सी रोटियाँ फटकारती हुई लाती और पानी का गिलास सामने रखकर रोटियाँ उसके हाथ पर रख देती।

सूखा रोग से पीड़ित बालक लिये सुरसु‍ी बैठकर अपने पति की निन्दा करने लगती। पतली तीखी आवाज में उनको दुहराती कभी बालक को पुचकारती कभी अपने रामच‍न्द को डाँटती रोती खाती हुई ल‍च्छो सुरसुती की आधी बात सुनती आधी टाल देती।

सुरसुती कहने लगी— जीजी मैं तो कुछ भी नहीं समझी। कल तो दो आने लाकर दिये थे। मैंने पूछा था कि दिन भर की पल्लेदारी में बस दो ही आने मिले तो बोले हाँ।

ल‍च्छो ने चौंककर कहा— पतला दुबला है तो क्या? है तो मर्द मानुस। दो आने तो हमारा रामचन्द ही कमा लेगा।

इतना कह कर उसने गर्व से रामचंद की ओर देखा जो इस समय दो का पहाड़ा याद करने में अपनी जान की पूरी ताकत लगाये हुए था।

सुरसुती ने कहा— जीजी वे तो समझाने से मानते नहीं। बेटा हुआ तब से तो घर की सुध ही छोड़ दी और न जाने कहाँ-कहाँ चिन्ता व्याप गयी है राँड कि बस बोलते ही नहीं। मैंने जो कुछ कहा कि मारने मरने को तैयार।

इसी समय नल पर से पानी लाकर चाची आ खड़ी हुई। सुरसुती ने उतरवाया।

अंतिम बात सुनकर उन्होंने कहा—तू तो बेटी रानी है रानी ! नैक मरद ने छू दिया कि इज्जत चली गयी।

सुरसुती सकपका गयी। किन्तु लच्छो ने कहा—चाची तुम समझो तो हो नहीं। कल को बेटे का ब्याह करेगा। खिला पिला कर आदमी बनायेगा

चाची ने हाथ मटका कर कहा— बेटा न बेटा की पूछ। मेरे ही से आग ले गयी नाम धरा बैसानर ! तुमने भली गधा के कान में फूँक मारी ! हाय राम।

लच्छो ने बिगड़ कर कहा—मैं जो उसकी माँ होती तो एक दिन में बेटा को छटी की याद दिला देती। समझीं ! तुम्हारे ही लाड़ हैं कि ऊधम को लाड़ है बरबादी को दुलार है।

चाची ने ताली पीटकर कहा—अरे मेरी छल्लो ! तू ही ने न उसे इत्ता बड़ा किया है अपनी छाती के बलपै ? बेटी मन्दोदरी। जब उसका बाप मरा था तब तू कहाँ थी ? उस बखत तो मैं थी। मैंने पाला है उसे दूध पिलाकर अपना। एक वो आयी है न कि फूलों पर चलूँगी मैं तो। काम नहीं किया जाता मेरी सौत ? सुरसुती ने आंखों में आँसू भर कर कहा—खाजाओ मेरी सौगंध जीजी ! मैंने कुछ भी कहा है ? देखो मुझे दोस लगा रही हैं ?

लच्छो ने तीव्र स्वर में कहा—देख ली भैना ! देख ली जैसे पाला है वैसे ही वह करम कर रहा है। इनने ही बिगाड़ा है उसे। मैं तो चटनी करके धर देती चटनी।

चाची ने गरम होकर कहा—तूही न एक खैरखा है उसकी ? हम तो दुसमन हैं दुसमन। आयी बड़ी

और चाची ने उसे कुछ गालियाँ दीं। इसके बाद चाची और लच्छो में स्त्री और पुरुष के गुणाङ्गा के विशद विवेचन करने वाले शास्त्रार्थ होने लगे। सुरसुती चुपचाप घूँघट माथे पर सरकाये बैठी

रही। इसी समय सुरसुती के पति सुरजन ने प्रवेश किया। आज उसका सिर घुटा हुआ आँख चनी हुई और कदम लड़खड़ा रहे थे। उसने कुछ भी नहीं कहा। एक खटिया पर घुटने मोड़कर वह पड़ गया। चाची को आवताव कुछ भी नहीं सूझा। वह उसके पास जाकर चिल्ला कर उसे एक एक बात सुनाने लगी।

एकाएक सुरसती चिल्ला उठी। सुरजन की देही काँप रही थी। हाथ पाँव थरथरा रहे थे। आँख मुँद रही थीं। लच्छो उठी। उसने पास जाकर देखा।

देखते देखते वाड़े के लोगों की भीड़ इकट्ठी हो गयी। शमसू ने कहा— जाओ किसी हकीम अकीम को बुलाकर लाओ। यहाँ खड़ी खड़ी क्या कर रई हो?

लच्छो ने सकपकाकर पूछा— वह कित्त रुपये लेगा?

शमसू ने कहा— ये ही दो तीन और क्या? इस बखत जानकी बात है। जान है तो जहान है।

लच्छो ने चाची की ओर देखा। चाची ने सुरसुती की ओर। सुरसुती घूँघट काढ़े बैठी थी। चाची ने कहा— सुरसुती लाज तो तेरी तब है जब ये जीता है। अब ला निकाल के भीतर से।

सुरसुती ने घूघट में से कहा— चाची मेरे पास क्या है जो दूँ?

चाची ने तड़पकर कहा— और चूल्हा अलग कराने को जीभ बहुत बड़ी है न? ले ले के जो भर रखी है उसे उगल दे महारानी! नहीं तो यह ही नहीं रहा तो

छि छि —बूढ़े रामधन ने कहा— असुभ बात मत किया कर तू बिंदिया!

चाची ने पलटकर कहा— तो मामा मेरे भी दो हैं। ये जमा कर और मैं उन्हें भूखा मार दू सो मेरे देखते न होगा।

तो हैं किसके पास? सुरसुती ने घूँघट में से कहा और वह ज़ोर

ज़ोर से रोने लगी। हरगोविन्द ने कहा— क्या देख रही है लच्छो! बुला किसी स्याने को। आनन फानन ठीक कर दे।

बात पसन्द आयी। तुरन्त भोपा बुलाया गया। उसने आकर पहले तो कुछ मन्तर पढ़े फिर लगा उसे झकझोरने। सुरजन के दाँत थोड़ी देर तक तो बजते रहे फिर वह मूर्छित होकर भूमि पर फैल गया। भोपा बड़ी देर तक चिल्लाता रहा— साले तेरी खोपड़ी तोड़ दूँ। और बजरंग बली की जय। भतपलीत की ऐसी तैसी, पास आये तो आग लगाय दू हुई बजरंगबली का साँचा

भीड़ छँट गयी। भोपा अपनी दक्षिणा लेकर उठ खड़ा हुआ। जाँघा से ऊँचा लाल घुटन्ना लाल फितरी माथे में सिन्दूर लगाये जब वह चला तब कमर में बँधे बड़े बड़े घुघरू गोले जैसे बजने लगे।

सुरजन मूर्छित सा पड़ा रहा। रामचन्द्र बैठा रहा। चाची के लड़के भी आ गये। साँझ का चूल्हा जला सुबह का चूल्हा जला मगर सुरजन वैसे ही साँस खींचता पड़ा रहा। कभी कभी वह जब किचकिचाने लगता लच्छो उसके मुह में पानी डाल देती। सुरसुती बच्चे को गोदी में लिटाये उसका रोना बन्द करने को बारी बारी से अदल बदलकर अपने स्तन उसके मुह में देती घूँघट काढ़े पंखा झलती रही।

दोपहर ढले उस उदासी का गतिरोध टूट गया। सुरजन ने आँख खोल दीं। उसने पानी माँगा। सुरसती दौड़कर ले आयी। पानी पिया।

लच्छो ने पूछा— अब कैसा है तेरा जीव

सुरजन ने टूटे फूटे शब्दों में कहा— बाबा ने दम लगवायी थी जड़ी रखकर तभी मन खटा गया।

लच्छो ने कहा— तो क्या तू साधू होने गया था जो मूँड़ मुँड़ा दिया? यह किसके नाम को रोती?

सुरजन ने कोई जवाब नहीं दिया। पागलों की तरह देखता भर रहा जैसे कुछ भी नहीं समझा। लच्छो ने बिगड़कर कहा— मैं तो

कहूँ मान जा मान जा और त है कि सिर पै ही चढ़ा जावै। मैं कहूं सीधे मुँह बात कर सीधे मुँह समझी?

सुरजन ने इधर उधर देखा और निराश सा दोनों हाथों में सिर थाम कर बैठ गया। सुरसती फिर हवा करने लगी। छुन्नो ने पङ्खा छीनकर फेंक दिया। वह ज़ोर से बोली— क्या कही? अब तो नहीं जायगा बाबा आबा के पास?

सुरजन ने फिर सिर उठाकर देखा और हताश की भांति सिर हिला दिया।

वह बहरा हो गया था।

—६—

पाँचवीं यातना विषैला धुँआ

कुछ दिन से किसी काम से पुलिस की छावनी ने कुछ दूर पर पड़ाव डाल रखा था। उससे बाड़े में एक दहशत-सी बैठ गयी थी। लोगों ने आपस में ही खूब चर्चा भी की लेकिन नतीजा नहीं निकाल सके। एक दिन छावनी में हजामत बनाने वाला नाई आया था तो वह भी रौब डाल गया था। कुछ पुरबिया किसान आकर बाड़े में रहने लगे थे। पहले वह पुलिस में थे फिर निकाल दिये गये थे। तब से पाँच मील दूर एक कारखाने जाते थे और अँधेरे में लौटकर आते। चूल्हा चढ़ाते और चौका काढ़ते। दिन में मुंह में अंगूठा डालकर पानी और हरीमिर्च के सहारे ढेर का ढेर सत्तू पेट में उतार देते।

हरदयाल का नया मकान उठने लगा था। अनेक मजर वहाँ काम करते और हरदयाल बैठा गिद्ध की तरह सब देखता रहता। ईंट पर ईंट रखने का मतलब उसे खून की बूँदें देने के समान था। घीसा वहीं काम करने आता। हरदयाल का पठा ी क़र्ज़ धीरे-धीरे चुकता जा रहा था या वास्तव में द्रौपदी के चीर की तरह बढ़ता जा रहा था। जब से

सुरजन बहरा हुआ वह वहीं काम करता। सुरसती ब च्चा गोद में लिए बैठी बैठी गिट्टी फोड़ा करती। सुधीर देखता और देखता। उसकी नज़र जहाँ जाकर अटक गयी वह स्थल एक स्त्री का शरीर था जवानी से गदराता। ऊचा भारी लहँगा ओढ़नी और नाक-कान से लेकर शरीर के प्र येक अङ्ग पर कोई न कोई सस्ता गहना। लगभग अठारह-उन्नीस साल की डंकमारती जवानी। जो आता उससे दिल्लगी करता जो आता छेड़ता और सब की बात सुनकर हँसती स्वयं चुहल करती और किसी के आँख मारने पर लजा जाने का अभिनय करती। कठोर हा य हरदयाल उसे जब मिलता तब डाँटता और वह उस बूढ़े की तरफ़ एक अजीब तरह देखती कि बूढ़े हरदयाल में भी एक हल्की कँपकँपी-सी हो आती और क्षण भर को वह भी सीना निकालकर बैठता। अ य मज़ दूरिनें उसे देखकर जननीं गालियाँ देतीं लेकिन जैसे उसे इन स्त्रियों से कोई दिलचस्पी नहीं थी। जब देखती तब पुरुषों की ओर देखती। बिढ़ला बिढ़ला की बदनाम जात की वह स्त्री अकाल के कारण मारवाड़ छोड़कर आगयी थी। सुधीर देखता। उसे ऐसा लगता जैसे प्राचीन काल में कोड़ो के ज़ोर पर ग़ुलामों से काम कराया जाता था।

शाम हो गयी। पुरबिया किसान लौटकर खाने पीने लगे। हरदयाल आज कुछ विचलित हो उठा था। उस बुढ़ापे में भी उसका हृदय कुछ कुछ सा करने लगा था। वह बैठकर भजन करने लगा। जब इससे भी उसका मन नहीं माना तब म दिर में चला गया।

पुरबिया किसान खा पीकर आराम से लेट रहे। वे देह के ताकतवर थे। कभी उन्होंने किसी के हाथ का छुआ नहीं खाया। एक बार उन्होंने लच्छो की ओर ललचाई आँखों से देखा भी था किन्तु लच्छो की निर्भय आँखों को देखकर उनकी दृष्टि पथरा गयी और भूमि से टकराकर चूर चूर हो गयी। तब से उन्होंने उसकी ओर कभी भी नहीं देखा।

रात का अँधियारा सनसनाने लगा। इसी समय रामसिंह ने सुना

उधर पेड़ों के पीछे कुछ न होने वाली बात हो रही है। उसने चुपचाप हरीसिंह को जगा दिया। दोनों चुपचाप छिपकर देखने लगे।

हरदयाल खड़ा था। उसकी बगल में मारवाड़िन थी।

हरदयाल कह रहा था— देख मानजा, मालामाल कर दूँगा।

मारवाड़िन ने कहा— मरद का क्या? ऐसे कह के मुकरने वाले बहुत देखे हैं।

हरदयाल ने उसकी ओर व्यंग से देखकर कहा— जमाना तो अठन्नी का गुन गा रहा है।

स्त्री ने निस्संकोच होकर कहा— बोहरे अपनी अपनी सरधा है। तुम्हारे क्या कमी है? भगमान् ने तुम्हें क्या नहीं दिया?

हरदयाल ने बिवश होकर जाल फका— हटा एक रुपया ले ले।

वाह बौहरे! मारवाड़िन ने कहा— अपने बुढ़ापे को भी देखा है? बन्दर की-सी तो सूरत हो गयी है। हाथ नचाकर ब ली— एक रुपया ले ले! घर की बात समझ रखी है? जाओ-जाओ पाँच रुपये लूँगी। वे तो अपने जैसे हैं तुम तो बौहरे हो समझी? एक बात कैसे हो जायगी?'

रामसिंह को हँसी आ गयी। इससे पहले कि हरीसिंह उसे रोके रामसिंह चिल्ला उठा— शाबास बौहरे। खूब हाथ मारा है! बुढ़ापे में पीपल लचक रहा है?

हरदयाल चौंक उठा। उसने एक बार इधर उधर देखा और फिर अपनी कोठरी की ओर चल पड़ा। मारवाड़िन फिर अपने तम्बू में सोने चली गयी। हरीसिंह और रामसिंह लौट आये। रात भर इसी की चर्चा रही प्राय पूरे बाड़े को बात सुना दी गयी। जवान औरतें खूब हँसी। लोगों को मारवाड़िन के प्रति एक श्रद्धा-सी हो गयी। औरत कहर है— करती है तो मन की करती है! कोई फुसला के जबरन कुछ नहीं कर सकता। सुधीर ने भी सुना। और मास्टर साहब को जाकर सुनाया।

दोनों खूब हँसे। हरदयाल जब अपनी जगह जाकर बैठा उसने देखा मजदूर आज कुछ कानाफूसी कर रहे थे। आज उन लोगों के चेहरे पर एक कुटिल मुस्कराहट थी। दो एक जवान छोकरों ने पीछे से आवाज भी कसी किन्तु हरदयाल ने उनसे कुछ भी नहीं कहा।

दोपहर को जब वे लोग एक किनारे बैठकर रोटी खाने लगे जब कुछ लोग बहरे सुरजन को छेड़ रहे थे मारवाड़िन ने रोते हुए प्रवेश किया। सब चौंक उठे। घीसा ने पूछा— क्योंरी क्या हुआ?

मारवाड़िन चुप खड़ी रही। मजूर मजूरिन ने उसे चारों तरफ से घेर लिया।

हरदयाल ने उसे निकाल दिया था और उसकी आधी मजूरी दाब ली थी। हरगोविन्द ने कहा— तो क्या करेगी तू? मैं भी एक प्रोफसर का नौकर था। उसकी बीबी ने मुझसे कहा— मेरे पैरों में मालिस कर दे मेरी साड़ी धो दे मैंने इन्कार कर दिया। तो उसने मेरी तनखा दाब के मुझे निकाल दिया। मैंने कहा पुनी करके उस पै कचहरी में दावा किया। मगर क्या नतीजा निकला। ऐसा इन्साफ हुआ कि मैं तो सुन के दङ्ग रह गया। जज ने कहा कि हरगोविन्द पेशे का नौकर है। उसके साथी कमीने हैं। प्रोफेसर इजत का आदमी है। वह बारह रुपये के लिए झूठ नहीं बोल सकता। मुकद्दमा खारिज। क्या कही? मुकद्दमा खारिज। सो लक्षी जो आठ रुपये खरच हुए सो अलग बीस की बैठी। पूरी रकम थी।

घीसा ने कहा— और कोई थोड़ी नहीं सो भी जमा समझो पूरी।

'क्या कर लिया? हरगोविन्द ने आँख निकाल कर पूछा— क्या कर लिया? कुछ नहीं। प्रोफेसर अब भी फल-फूल रहा है। हम हैं कि मेहनत करते हैं तुम्हारे बाल बच्चा या हो रहे हैं या उसने उगली दिखा कर दुबलेपन की ओर इशारा किया और कहता गया—'मगर वे साले

पान पान-सौ रुपये तनखा पाने वाले गेहू की खा रहे हैं और तुम बेटा चने की भसको चने की !

घीशा ने कहा— तो क्या करेगी ?

मारवाड़िन यह सुनकर हँस दी । बोली— कहाँ चली जाऊँगी और क्या ! पेट को नहीं होगा तो यहीं क्या करूँगी ? देश छोड़ा तो पेट की खातिर ही न ? और सब तो राग झमेला लग बैठे—सोये का ह। मुक्ख तो पेट है लाला। जाऊँगी मजरी करके खाऊँगी।

सब उदास-से तितर बितर हो गये । मजरिन उसके स्वाभिमान और स्वतन्त्र साहस को देखकर दंग रह गयीं। मजर उदास हो गये कि वह उनके बीच में एक रौनक थी जिसके चले जाने पर बातचीत का एक केन्द्र ही खो जायगा। मारवाड़िन वहाँ से चली गयी।

दूसरे दिन अचरज से लोगों ने देखा कि रामसिंह और हरीसिंह की कोठरी में मारवाड़िन सो रही थी। रात भी वह शायद वहीं रही थी। फिर से चर्चा चल पड़ी। अब के बड़ी निंदा हुई। मगर वह बोली— लाज उसकी जिसकी लाज ढाँकने को तन पर बस्तर हो।

लछो को अपने पातिव्रत पर विशेष गर्व था। जब वह महरी से मिली दोनों ने उसे कुलटा और हरजायी कुलच्छनी करार दिया। चलते चलते महरी ने कहा— मैना धरम नहीं रहा नहीं तो मरद किसका नहीं होता ? मगर मरद तो एक और ऐसा जैसा अपना चोला कि मौत से पहले न छोड़ा जाय

उसकी बात की कद्र थी। उसने चूरा के साथ जिस तरह निभायी थी उसे देख लोग उसे सती मानते थे । कुछ दिन से पन्ना भी इधर उधर न जाकर मारवाड़िन की कोठरी के ही चक्कर लगाता फिरता।

शाम को जब पुरबिया लौटते चोका काढ़ते चूल्हा सुलगाते खुद खाते फिर बाकी बचा चौके के बाहर बिठाकर मारवाड़िन को खिलाते। सुबह उनके चले जाने पर जब वह अकेली रह जाती कोई उस बात

नहीं करता तो वह पन्ना से ही दिल्लगी किया करती। बाड़े के लोग देखते। महरी ने सुना। उस दिन शाम को घमासान हुआ किन्तु हरीसिंह ने डाँटकर कहा— खबरदार जो चीं चपाट की है मुह तोड़ दूँगा मु ह। लौंडा तो तेरा बदमास है परायी बहू-बेटी के पीछे डोलेगा तो उसका भैला क्या कसूर है?

सुनने वाले हँस पड़े। जाने क्यों महरी भी चुप हो गयी। रामसिंह ने पन्ना की गर्दन पकड़कर कहा— बेटा जब मुह का दूध सूख जाय तब इधर आइए। समझा? समझा कि नहीं बोल नहीं तो अभी लाश पटक के मानू गा बोल! पन्ना ने सुना और फौरन ही जब पन्ना समझ गया उसने उसे छोड़ दिया। फिर यही कार्यक्रम चलने लगा। धीरे धीरे मारवाड़िन से स्त्रियाँ मिलने-जुलने लगीं। बिन्दिया चाची ने कहा— तो क्या हुआ? धोखा ही सही बेसा तो नहीं है। जात पाँत तो तब तक है जब तक देश है जब माँ बाप ने ही छोड़ दिया तो वह क्या करे?

बात फैल गयी जम गयी और बीच के गड्ढे पर प थर की पटिया की तरह पड़ गयी। आवागमन सरल हो गया। पुरबियों का धरम चलता रहा। लोगों में रामसिंह उसका पति प्रसिद्ध था किन्तु वास्तव में वह द्रौपदी की भाँति जीवन बिताये जा रही थी। भेद इ ाना ही था कि पुराने ऋषि मुनि तरह दे गये थे आजकल मास्टर साहब को यह बिल्कुल असह्य था। बड़ी दिलचस्पी से पूरा किस्सा सुनते और अन्त में कहते— हटाओ यार तुम भी क्या गन्दी बातें ले बैठे?

सुधीर हमेशा मारवाड़िन की तरफ बोलता। मास्टर साहब विरुद्ध मोर्चा डाटते। एक दिन हरगोविन्द और घीसा के सामने ऐसी ही बात होती रही। शाम तक मशहूर हो गया कि ऊपर का बाबू मारवाड़िन पै फ़िदा हो गया है। सुधीर ने सुना। पहले तो हसा और फिर निष्प्रभ-सा कुछ सोचने लगा। मारवाड़िन ने जब सुना तो कोइ ध्यान नहीं दिया।

पूछने पर कहा— श्रो तो बाबू है उसका क्या? जैसे बाबू होने के कारण वह कोई पराया था और उसके दायरे के बिल्कुल बाहर था।

धीरे धीरे कुछ महीने बीत गये। सुबह शाम पुलिस के पड़ाव के सामने सिपाहियों की कवायद होती। कभी-कभी जमादारों की गन्दी गालियाँ गूँज उठतीं और फिर से जीवन चलने लगता।

लेकिन एक दिन फिर बाड़ में हलचल मच उठी। हरदयाल बाहर खड़ा चिल्ला रहा था। मारवाड़िन भीतर पड़ी कराह रही थी। उसकी आँखों में आँसू छा रहे थे। आज उसकी सारी अकड़ खतम हो चुकी थी। सुधीर ने देखा। नीचे उतर आया। पूछने पर हरदयाल ने कहा— भाग गये वे दोनों बदमाश इस कुतिया को छोड़ गये हैं।

सुधीर ने सुना और चुपचाप लौट आया। एक बार जी में आया जाकर मारवाड़िन से पूछे तो क्या हुआ?

घीसा ने कहा— बाबू भैया कौन सुख नहीं चाहता! इसी दिन के लिए पुरखों ने धरम बनाये हैं। अब क्या करेगी? मरद को क्या ठोका पीटा छोड़ गया! लेकिन यह तो औरत है किसका नाम होगा? उनका क्या? वे तो बदमाश थे—जोखम आयी भाग निकले कि अब बोझा कौन सम्भाले इसे तो लादी उठानी होगी।

मारवाड़िन के दोनों में से किसी एक का गर्भ रह गया था। आज वह शर्म से बाहर निकल नहीं सकी। हरदयाल कुछ देर तक तो देखता रहा। फिर चिल्ला कर बोला— निकल जा यहाँ से छिनाल अब रो रही है? तब न सूझा था हरामिन कुतिया?

घीसा की माँ ने बढ़कर कहा— लाला दया करो गाभिन है! कहाँ जायगी! दो दिन की बात है माफ कर दो। पेट उत्तर जायगा तो तुम्हारी चाकरी करेगी

हरदयाल चला गया। बूनी अपनी कोठरी को लौट गयी। सब चले गये। केवल मारवाड़िन पड़ी पड़ी रोती रही। आज उसमें इतना

भी साहस न था कि बाहर चली जाय। बाड़े में हरदयाल की दरिया दिली की इ तहा तारीफें हो रही थीं। ऐसा दिल है ाभी तो परमा मा ने इतना दिया है नहीं तो किसके पास है ऐसी माया!

मारवाड़िन जब निकली तब पे में एठा चल रहा था और चेहरे पर पीलापन झुमक रहा था। वह माँ बननेवाली थी—एक और कीड़ा पैदा होने वाला था!

—७—

छठी यातन पशु

सामने के मैदान में शोर होने लगा। सूरज डूब रहा था। और एक कोलाहल जो मानों दूर क्षितिज के पार कलरव करती लहरों का मृ॒ मृदु क पन हो या बड़े दिन की ारजे की घंटियों की तुमुल ऊर्मिल प्रतिध्वनि हो और इसी बीच कभी-कभी कोइ गीत जैसे तारा टिमटिमा उठा हो। सुधीर ने ऐसे देखा जसे वह तूफा में फसी एक छोटी-सी नाव थी, जिसके पतवार खो गये थे कि तु बही जा रही थी। कञ्जर डेरे गाड़ रहे थे। उ के पास विश्वासा की कैसी भी पराजय नहीं थी। वे खाते थे पीते थे सोते थे और उनकी सत्ता और एक पशु की सत्ता में कोई भेद नहीं था। उनकी जवान स्त्रियाँ मदमाती डोलतीं बच्चे नंगे घूमते और पुरुषों के चेहरे की कठोरता देखकर लोग उन्हें बदमाश कहते। कोई कोई उनमें से ामाशे दिखाता। एक गाना गाता साथ की जवान लड़की नाचती और ऐसा अश्लील अङ्ग चालन करती कि बरबस लोगों को बाद में निन्दा करने के लिए रुककर उसे देखना पड़ता।

वे लोग अपना दिन अधिकांश में घूमते हुए निकाल देते। इतनी ज़ोर से बात करते कि देखने वाला समझता लड़ाई हो रही है और लड़ते तो किचकिचा कर झपटते नाखूना से नोंचते या काट खाते। कभी कभी उनके हाथों में छूरियाँ चमक उठतीं। तब दूसरे मर्द कञ्जर आकर छूरी छीन लेते और फिर अलग जा बैठते। फिर धड़ाई होने

लगती। बहुधा रोटी या औरत के पीछे लड़ाइ होती। शाम को इटा के बने बराय नाम चूल्हों से धूआ उठने लगता और रात को चिथड़ों के तम्बुओं में वे सब जानवरा की तरह घुस जाते और खाँसते खखारते चिमट चिमटा कर सो रहते। वासनाआ का नग्न से नग्न रूप उनके लिये एक स्वाभाविक बात थी। एक तरफ त बू में माँ-बाप सोते रहते दूसरी तरफ बेटा और बहू।

मोती ने कुछ दिन से कमाल को छोड़कर रामझू कर लिया था। इस पर एक दिन खून ख-चर होते होते बचा। दिन में छोटे छोटे लड़के लड़की ही नहीं बड़ी बड़ी जवान लड़कियाँ राह के किनारे डोलती रहतीं। कोई निकला नहीं कि पीछे होलीं। उनका घिघियाना भीख माँगना इतना ग दा था कि ल-जित होकर राहगीर को उ हें कुछ न कुछ देना ही पड़ता।

एक दिन एक बाबू अपनी पत्नी को लिए जा रहा था। सड़क पर काफी भीड़ थी। मोती उस बाबू के पीछे लग गयी। वह रिरियाने लगी—बाबू, तेरी जूती चाटूँ! ऐ बाबू तेरी बहू के गोरे गालों पै काले तिल की कसम! तेरा घर फूले फले! तेरे बच्चे बड़े हों

गोरे ालों पै तिल का वर्णन सुनकर राहगीर मुड़ मुड़कर देखने लगे। बाबू को लाचार होकर पैसा देना पड़ा।

दूसरे दिन ही पास में किसी रइस के घर चोरी हो गयी। दारोगा जी ने फौरन कञ्जरा के चारों तरफ घेरा डाल दिया। उन्होंने देखा कंजरियाँ बड़ी कटीली थीं। उनका जी आ गया। कानून था कि ऐसे लोगों को संदेह पर भी गिरफ्तार किया जा सकता है क्योंकि यह होते ही चोर हैं। इन पर मुकद्दमा चलाने की भी कोइ आवश्यकता नहीं होती। न्याय उनकी ओर था। जितने भी जवान कञ्जर थे वे सब गिरफ्तार कर लिये गये। औरतें देखती रहीं बच्चे सहम गये। रोया-धोया कोई नहीं। उन्हें यह सब देखने की आदत थी। उनके पुरुष

अक्सर गिरफ्तार कर लिये जाते थे। जब तक वे छूटकर न आते, त बू गड़े रहते। उनके आने पर तुरंत वह स्थान छोड़ दिया जाता।

सुधीर अपने कमरे से यह सब चुपचाप देखा करता। बाड़े में सब उनसे नफरत करते थे। पुलिस चली गयी। थोड़ी देर तक मैदान में एक दमघोट सन्नाटा छाया रहा किन्तु उसके बाद फिर वही हलचल होने लगी।

मोती ने पुकार कर कहा— ओरी सुहैल सुनती है? अब तो कोई मरद नहीं रहा।

सुहैल ने ठहाका मार कर कहा— बुड्ढे तो हैं ही। मोती भी हस पड़ी। बूढ़ी कामनी भी आ गयी। कामनी ने कहा— ओहो दो दिन मरद नहीं रहा तो परान सूख गये। बेटी अब तो यह लड़के कुछ नहीं करते। हमारे मरद तो दिन दहाड़े लूट लेते थे।

मोती ने आँख मिचका कर कहा— तू भी तो तब जवान थी।

काकी हस दी।

दो-तीन दिन बाद ही बूढ़े सुबह के गये बहुत रात हुए लौटते। वे चोरी करने में असमर्थ थे क्योंकि उनमें अब फुर्ती नहीं बची थी। अब जो कमायी होती वह अलग अलग न रखी जाकर सामाजिक संपत्ति होती। कि तु फिर भी पूरा न पड़ता।

मोती ने सुहैल को बुला कर कहा— इस देस के मरद कैसे हैं? किसी में दम ही नहीं लगता।

सुहैल ने कहा — उधर सिपाही रहते हैं। मुझे बुलाते थे। दूर से रुपया दिखाया था। मैं डर के मारे न गयी।

मोती ने कहा— हत्तेरी की! सच! रुपया दिखाया था?

सुहैल ने कहा— मगर दे ही देगा इसकी क्या पक्की है। वह तो पूरी छावनी है। मारगे तो?

ओहो, मोती ने कहा— मारेंगे ऐसे ही? चल सभा को चलेगी?

सुहैल ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। धीरे धीरे सिपाही इधर ही आने लगे। अब फिर मस्ती छाने लगी। दिन रात मैदान में नाच-गाने हुआ करते। रात में अब बूढे भी शायद जान जानकर काफी देर से लौटते। अब वे पैसे बचा कर नहीं लाते। जो पाते हैं वहीं शराब पीते हैं और जब लौटते हैं तो बूढे बुढ़ियों में दङ्गा होता है। जवान लड़कियाँ देख देखकर हँसते हसते लोट पोट हो जाती हैं।

बूढ़ी श्यामा कानी हो गयी थी। उसका आदमी देखने में बिल्कुल भयानक पशु सा लगता था। जब दोनों मस्त होकर नाचने लगते बच्चों की टोली हर्षित होकर ताली बजाने लगती।

शाम हो गयी। मोती और सुहैल राह के किनारे बैठी बातें कर रही थीं। अब थोड़ी ही देर में सिपाही आने लग जायगे। सारी की सारी कंजरियाँ त म्बुओं में तैयार हो रही थीं। उनकी तैयारी कोई प्रसाधन नहीं था। मन की चाह-मात्र थी। उसी समय सुधीर उधर से निकला। मोती ने लपक कर उसका हाथ पकड़ लिया। सुहैल ने पल भर को देखा और फिर दौड़कर दूसरा हाथ पकड़ लिया।

सुधीर बोला— क्या है क्या है? उसको परेशान देखकर उनकी हिम्मत और भी बढ़ गयी। मोती ने कहा— बाबू! एक अठन्नी देजा! ए बाबू तेरा पैर धोऊँ! ऐ बाबू तेरा

सुधीर भीख माँगने के इस भद्दे तरीके पर स्तब्ध रह गया। उसने जेब में हाथ डाला। केवल एक इकन्नी थी। उसने दोनों की ओर देखा दोनों में से यौवन की गंध आ रही थी। देखने से ही लगता था कि यह स्त्रियाँ केवल इसीलिये हैं कि इनसे कोई ऐसी ही वासनात्मक बात की जाय। न जाने कितने युगों के संकोच ने उसके हृदय को जकड़ लिया। उसने अपने को छुड़ाते हुए इकन्नी फक दी। सुहैल ने झुक कर उठा ली। किन्तु मोती ने कहा— ऐ बाबू मुझे! मुझे भी कुछ देजा!

सुधीर ने कहा— एक को दे दी। अब मुझे तुझे क्या ?

मोती ने एक बार ठुमका मार कर हस दी। उसने अपनी आँख मिचका दी। कोई देख न ले इस संकोचसे सुधीर पानी पानी होकर लाज में गड़ गया। सुहैल ठहाका मार कर हस दी।

सुधीर ने कमरे में आकर जब उस तरफ झाँका उसने देखा उसकी इकली झुककर उठने वाली स्त्री अपने भारी लहँगे को नीचे से दो जगह पकड़े उसे फैलाये हुए खड़ी थी। लहँगा नीचे से चाँद की तरह गोल फूल गया था और पर्दा बनाने का प्रयत्न कर रहा था। फिर भी अपर्याप्त था। पीछे की झाड़ी के पीछे दो स्त्री के पैर थे और दो बड़े बड़े सिपाहियों के बूट पहने।

सुधीर ने देखा और घृणा और अपमान से विक्षुब्ध होकर भीतर लौट गया। वे वास्तव में बिल्कुल पशु थे। उसका हृदय इसे देखकर उद्विग्न सा एक बार भीतर ही भीतर हाहाकार कर उठा। कुछ ही दूर पीछे कुछ लड़कियाँ नाच रहीं थीं। उनका गीत आसमान में भँवर मारता काँप रहा था। किन्तु नारी का यह मोल देखकर उसकी अंतरात्मा में शूल-सा चुभने लगा। जिनके न लज्जा थी न संकोच न पवित्रता न अन्य ही कोई भाव—वे पशु नहीं तो क्या हैं ? किन्तु न जाने कहाँ से सुधीर के मन में एक करुणा जाग उठी। उसने कहा—वे पशु हैं क्योंकि वे अशिक्षित हैं दरिद्र हैं और संसार उनकी मजबूरियों को लूटता रहा है और सुधीर उदास हो गया।

—८—

दिन में ही घने बादल छा गये। लच्छो ने देखकर बाहर धूप में फैले गेहूँ उठाकर भीतर टाट बिछा लिया और बैठकर बीनने लगी। रामचंद्र को बुखार था। वह चुपचाप खोल ओढ़कर पड़ा था। मारवाड़िन दर्द से कराह रही थी। चीसा की माँ उसके पास बैठी थी।

मास्टर साहब बादलों को देख देखकर मगन हो रहे थे। सुधीर चुपचाप बैठा था।

दोपहर ढले नन्हीं नन्हीं फुहार आने लगीं। पेड़ पत्ते जमीन आसमान सब धीरे धीरे भीगने लगे। दूर कछार गीत गा रहे थे। उनके बूँदे उठ उठकर तमुओं में चले गये। युवतियों का गीत प्रबल और चुभीला बनकर आसमान में गूँज रहा था।

चिड़ियाँ चहचहाती हुई घोसलों को लौट चलीं। हवा सनसनाने लगी। हरदयाल एक बने हुए कमरे में बैठा काम देख रहा था। मज़दूर काम पर से हटने लगे। उसने गरज कर कहा— किये जाओ काम। खबरदार जो हाथ हटाया है। मुफ्त की मजूरी नहीं मिलेगी। ऐसी क्या कोई बाढ़ आ गयी है?

घीसा फिर काम करने लगा। हरगोविन्द तथा अन्य सब भी फिर काम में लग गये किन्तु पानी का वेग बढ़ता गया। मुँह पर बौछार पड़ने लगी। तमाम बदन भीग गया। तब वे लोग भागकर अपनी अपनी कोठरियों में आ गये। हरदयाल छतरी लगाये अपनी कोठरी में जा घुसा। पानी बरसता रहा। उस भयानक वर्षा में आसपास के घर गिरने लगे।

थोड़ी देर को पानी रुक गया। किन्तु फिर जब वह बरसने लगा तो एक धार। रात बीत गई दूसरा दिन भी बीत गया। तीसरे दिन सब लोगों के दिल बैठने लगे। घरों में खाने का सामान खत्म हो गया था। बाहर जाने की कोई राह न थी। पानी बरस रहा था एकधार।

आज उन दलितों को अपनी अपनी चीजों से मोह हो रहा था। वर्षा का पानी धीरे धीरे बढ़ता देखकर उनका हृदय स्तब्ध हो रहा था। बिंदिया अपने दोनों बच्चों का मुँह देख देखकर काँप उठती थी। महरी ने पन्ना को खींचकर अपने पास कर लिया और रोते हुए बोल उठी— पन्ना बेटा अब क्या होगा? किन्तु उसने कुछ नहीं कहा।

सुधीर तीन दिन से दफ्तर नहीं जा सका था। मास्टर बार बार कहता था— सुधीर बाबू हेडमास्टर तो कहेगा हमें कुछ नहीं मालूम। नहीं आना था तो इत्तला क्यों न दी?

सुधीर सुनता और चुप हो रहता। नीचे की मंज़िल भर में शायद दो एक चूल्हें जल सके थे। सारे कंडे और लकड़ियाँ गीली हो गयी थीं। बाहर मैदान के तम्बू हवा से तितर बितर होकर उड़ गये थे। कञ्जर उन्हें खींच खींचकर फिर घर बनाने का प्रयत्न करते थे किन्तु आँधी में उनका सब कुछ उड़ा जा रहा था।

चारों तरफ पानी भर गया था। पानी की भयंकर बाढ़ अट्टहास करती हुई सिर पर गरज रही थी। बच्चे रो रहे थे औरतें सिसक रही थीं। जिस समय नरक के प्राणी आकाश की शरण में जा रहे थे उस समय भगवान अप्सराओं को गोद में लिए आसव पी रहा था और उसके न्यायदण्ड को लेकर लक्ष्मी नंगी नाच रही थी। इसके बाद ऊपर की मंजिल से धीमा सा संगीत पानी के गर्जन में हिलोरें भर उठा। सुधीर लुटा सा ग़मग़ीन सा देखता रहा। उसका हृदय खोया सा सकपकाया सा बिल्कुल चुप था। जब नीचे की मञ्ज़िल में पानी भरने लगा दौड़ दौड़कर नीचे से लोग ऊपर जाने लगे। जङ्गल में आग लग गयी थी। शेरनी और बकरी साथ साथ आ खड़े हुए थे। औरतें अपनी छाती खोलकर बच्चों के मुह से लगा लगा देती थीं किन्तु बच्चे दूध पीते हैं खून नहीं। मुहर्रम के धर्मान्ध मुसलमान जैसे हा हा करके छाती पीटते हैं उससे भी भयानक स्वर मच रहा था। तमाम काम बंद था। जीवन की सत्ता बनाये रखने वाले निर्जीव दकियानूसी प्राणी आज उदास और पराजित-से बैठे थे।

आसमान में बादल भीषण गर्जन कर रहे थे ऐसा गर्जन कि मचोदर जिसे सुनकर थर्रा उठती है।

इतने में ऊपर की मञ्ज़िल से एक ज़बर्दस्त ठहाका लगा। न जाने

वह किस रईस का अभिमान था कि नाचने वाली की पायल बजती ही चली गयी। उस ठहाके की प्रतिध्वनि आसपास सब कहीं गूँज उठी। सुधीर ने सुना जैसे रोम जल रहा था और नीरो अपने फिडिल पर लगातार अपनी उगलियों को चला चलाकर अट्टहास कर रहा था। जैसे चंगेज लाखों के सिर काटकर तलवारों की झनझनाहट में उन्माद से हँस रहा हो। पानी की भीषण ठोकरों और बादलों की गरज ने उस ठहाके को वीभ स बना दिया। बादलों के रुई-से बदन पर बिजलियों के कोड़े पड़ रहे थे और वह भयंकर स्वर से आर्त्तनाद कर उठते थे।

सुधीर ने देखा जि दगी का घर डूब रहा था कि तु वे सबहारा अब भी नहीं मरे थे। उसने देखा कञ्जरों की बस्ती बह गयी थी और वे सब इधर ही भागे आ रहे थे। आज उनके पास कुछ भी नहीं था। कल तक जो टूटे फूटे त बू थे वह भी अब नहीं रहे। अनेक दिनों के भूखे वे कञ्जर कुत्ता के झुण्ड की तरह इधर ही भागे आ रहे थे। उनकी इस भगदड़ ने सबको शंकित कर दिया। लोगों ने दौड़ दौड़कर उनके पथ में बाधा उपस्थित करने को दरवाजे लगा दिये

कञ्जर और कञ्जरियाँ कुछ देर पानी में इधर उधर भागते रहे। जब उन्हें कोई जगह नहीं मिली वे ऊपर चढ़ने को भागे। भीषण वर्षा में कई फिसल गये और गिरकर कराहने लगे कि तु फिर भी उन लोगों के लिए किसी ने भी द्वार नहीं खोला। वे वहीं पानी में भीगते हुए खड़े रहे। उनके छोटे छोटे ब च्चे पेड़ों के नीच तनों को पकड़े खड़े थे। हवा से उनके दाँत बज बज उठते थे। पानी घुटने घुटने बह रहा था। औरतों के कपड़े भीगकर उनके शरीर से चिपक गये थे। वे प्राय नंगी-सी प्रतीत हो रही थीं बूढ़ों को कुछ भी सूझ नहीं पड़ता था। वे पानी में खड़े केवल चिल्ला रहे थे। आकाश में कभी कभी बिजली कड़क उठती थी जिसको सुनकर कञ्जरियाँ आर्त्त स्वर से चिल्ला उठतीं थीं और बच्चों की तरफ दौड़तीं कि तु ठोकर खा खाकर गिर जाती थीं।

और तब ही अचानक कोठरी में हरदयाल अपने रुपये गिनने लगा। सुधीर ने सुना रुपये को महाना खनखन करके गूज उठा। यह रुपया नहीं था गरीबों की हड्डियाँ कड़कड़ा रही थीं यह रुपये की आवाज़ नहीं थी यह पोम्पिआई की सल्तनत लुढ़क रही थी। यह खनखन की मधुर ताल नहीं थी यह मौत के घण्टे का ढन ढन शब्द तुमुल कोलाहल कर रहा था। आदमी के जीवन का कोई मोल नहीं था। यह रुपया नहीं था यह जीते जागते आदमी का कफन था। यह दौलत नहीं थी यह खोखली पीठवाली उभरी छाती थी। यह माँ नहीं थी यह सरे बाजार जोबन बेचने वाली हरजाई थी।

किन्तु वे असहाय थे। उनके सामने इस भीषण समुद्र में कोई ध्रुव तारा नहीं था। वे ऐसे भयभीत और बेजबान थे जैसे दुनिया के शुरू के वन मानव खोहों और पहाड़ों में विशालकाय मोटी खालवाले अजदहे को देखकर चट्टानों में दुबकते थे और वह उनकी तरफ हुकार गरज कर दुम फटकारता बढ़ा आता था।

कञ्जरों ने सुना। एकाएक उनके सामने बिजली सी कौंध उठी। पानी निरन्तर भरता जा रहा था। बच्चे तो प्राय डूबने लगे थे। वे लोग एक साथ हरदयाल की कोठरी की ओर टूट पड़े। ऊपर से बाड़े के लोग देखते रहे। ऊँची ऊँची मञ्जिल वालों ने भी घबराकर इधर ही देखना शुरू किया। किसी का भी साहस नहीं हुआ कि बाहर आए।

कञ्जरों ने बल करके दरवाजे को तोड़ दिया और उन्होंने हरदयाल का रुपया ऐसे लूट लिया जैसे वारन हेस्टिंग्स ने बेगमों की लुटी हुई इज्जत को लूटा था जैसे करोड़ों भूखे हिन्दुस्तानियों ने अङ्गरेजों के न्याय को लूट लिया है।

लूटकर वे लोग भाग चले। घायल हरदयाल पड़ा छटपटा रहा

था। बाहर तूफ़ान गरज रहा था। भीषण हवा की प्रतिध्वनि हो रही थी—सूँ साँ

साझ के शिकारी

समुद्रतीर पर वह शांत सा होटल जिसके पास के सामने मनोहर सिकता है। दिन होने के कारण लोग सिकता पर कम चलते हैं होटल में कम आते हैं। होटल में घुसते ही एक बड़ा कमरा है। उसमें मेज कुर्सियाँ सजी हुई हैं जिन पर बैठ कर लोग चाय कॉफी पी सकते हैं। बाईं ओर एक बरा दा है। बरा दे के सामने भी सिकता है। कमरा बहुत साफ है। एकदम नीरव। और उस नीरवता में केवल दुबला पतला गेहुए रङ्ग का कृष्णन् सूट पहने बैठा था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह किसी की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके मुख पर घबराहट भी थी स्थिरता भी जैसे वह कोई अपनी समझ में बहुत बड़ा काम करने वाला था और इसीलिये बात खुल जाने के भय से खामोश था।

वेटर ने प्रवेश किया। गाहक को देख कर कहा—सर ?

कृष्णन् ने उसकी ओर बिना देखे ही उत्तर दिया—कॉफी टोस्ट उपमाव। ठीक टोस्ट नहीं उपमाव ही ले आओ।

वेटर भीतर चला गया। उसी समय कृष्णन् ने देखा द्वार पर एक निम्न श्रेणी का मुसलमान खड़ा था।

कृष्णन् ने इशारे से बुलाया। कहा—ए भाई। यहाँ जरा सुनो।

वह आदमी पास आ गया। बोला—जी बाबू ?

कृष्णन् ने व्यंग से पूछा—इस होटल में सब लोग अपनी बोली भूल गये हैं। सब सब अंगरेजी बोलते हैं ? क्या नाम है तुम्हारा ?

हुजूर मुझे इशरत कहते हैं। वह तो आप लोगों का फ़ैशन है।

कृष्णान् हँसा। कहा—अच्छा। ठीक रहे।

इशरत ने पूछा—बाबू कहाँ रहते हैं?

त्यागरायनगर

तब तो पटनम (महानगर) में ही?

हाँ हाँ मदरास में ही।

वेटर भीतर आ गया। पहले प्याला रख दिया फिर शीशे की तश्तरी में उपमाव। और इशरत को घूर कर कहा—तू यहाँ क्या कर रहा है? चल निकल यहाँ से।

कृ णान् ने देखा कि इशरत दबा हुआ सा कमरे के बाहर हो गया। कृष्णान् खाने लगा।

हुजूर।

कृष्णान् ने वेटर को देखा।

इस बदमाश से सौ दफा कह दिया यहाँ न आया कर तेरे आने से होटल बदनाम होता है। मगर मानता ही नहीं।

पर आखिर बात क्या है? कृष्णान् ने पूछा।

हुजूर यह हुजर ठीक नहीं है दलाल है

वेटर कहते कहते रुक गया। तीन विद्यार्थी होटल में घुस आये थे। वे एक मेज़ के चारों ओर ठ गये।

एक ने कहा—देखो जी सारंगपाणि! हम यादा देर तक यहाँ नहीं बैठ सकते।

घबराये क्यों जाते हो यार! अभी सब हुआ जाता है और मुड़ कर आवाज दी—वेटर!

वेटर ने आगे बढ़ कर कहा—सर!'

सारंगपाणि ने चपलता से कहा—चीस! फौरन! और फौरन से पेश्तर!

वेटर चला गया। तीसरे लड़के अशोक ने दूसरे लड़के से कहा हाँ भाइ श्रीनिवासन्। तो फिर क्या तय रहा?

यही कि वे दोना यहीं आते होंगे।

फिर भागगे?

कहाँ भाग कर जा सकगे वह?

क्यों, अशोक ने पूछा– मैसूर कैसा रहेगा। रियासत है।

श्रीनिवासन् ने सिर हिला कर कहा—कोई बुराइ नहीं।

लेकिन सारंगपाणि ने टोका—उनके लिये काइ जगइ खतरे से खाली नहीं।

क्या मतलब? श्रीनिवासन् की भौं तन गइ अशोक को भी तो बोलने दो? और उसने अशोक की ओर देखकर कहा हाँ फिर?

रात को अशोक ने कहा वे मेरे पास आये सीधे कालीकट से भाग कर। देखा तो अचरज हुआ। तुम बताओ तुम सोच सकते थे कि उस बोधे बालकृष्णन् में ऐसा साहस होगा? साथ में ही कमला थी। समझ में नहीं आता उस काले पर वह रीझ कैसे गई?

अरे उसका क्या? श्रीनिवासन् ने हँस कर कहा—दस नॉवेल पढ डाले। मार दिया कस कर कलम का हाथ। प्रेम हो गया। लगे हाथों दिमाग आसमान पर च गया कि अब तो नई दुनिया बसायगे भाग निकले।

सारंगपाणि ने व्यंग की यथा को समझते हुए कहा—आपको शायद अफसोस है कि आप न हुए।

सब हस पड़े। अशोक ने कहा—रात को मैंने उसका बिस्तर ज़नाने में लगवा दिया और बालकृष्णन् नीचे सोने लगा मगर वह तो बोली कि मैं भी नीचे ही सोऊँगी। औरतों ने जीभ काट ली शर्म हया कुछ बाकी नहीं रहा।

अजी उसे डर था श्रीनिवासन् ने सिर हिला कर कहा—कहीं रात को ही छोड़ कर न भाग जाये।

अशोक ने हाथ मेज़ पर मार कर कहा—बिल्कुल ! मैंने देखा था छिप कर वह रो रहा था वह ढा स दे रही थी।

हाथ की उगलियां ऊपर की ओर खोल कर श्रीनिवासन् ने कहा उसका क्या है ? वह तो लौट कर घर भी जा सकता है। पर वह तो नहीं घुस सकती अब ?

फिर भी कि तु बात पूरी करने के पहले ही याद आ गया और सारंगपाणि ने आवा ज दी—वेटर !

वटर द्वार पर दिखाई दिया। उसके हाथ में ट थी। मेज पर उसने चाय रख दी। सारंगपाणि ने बात पूरी की—बड़ी देर लगाई तुमने ?

वेटर उत्तर दिये बिना ही चला गया।

श्रीनिवासन् ने यालों में चाय उडेलते हुए कहा—डर लगता है वह बेवकफ कहीं उसकी जिन्दगी न बिगाड़ दे।

दूध मिलाते हुए अशोक ने कहा—लेकिन डर से कुछ होता तो नहीं इस वक्त हिम्मत की ज़रूरत है। शादी तो हो नहीं सकती।

श्रीनिवासन् चीनी डाल रहा था। च मच छिटक कर कुछ चीनी बिखर गई पर उसने पूछा—क्यों ?

पैसा नहीं हैं अशोक ने मुस्करा कर कहा—कहीं भी पकड़े जाने का डर है। और रजिस्ट शन भी नहीं हो सकता क्योंकि

शायद लड़की छोटी है ? सारंगपाणि ने पूछा।

बिल्कुल। अशोक ने कहा—वह इक्कीस की नहीं है। सिविल सजन कह देते हैं कि नहीं वह इक्कीस की है पर उस के लिये रुपया खर्च करना पड़ता है सो है नहीं

बात ठीक ही थी। श्रीनिवासन् ने कहा—चाय भी पीते चलो न ?

अरे हाँ दोनों ने एक साथ कहा और अपने अपने याले उठा लिए। एक घूट लेकर श्रीनिवासन् ने कहा—फिर अब क्या करना है ?

उन्हें मदरास के बाहर कर देना है

तीनों चुपचाप चाय पीने लगे। समस्या बहुत बड़ी थी। अपना खाली प्याला मेज पर रखते हुए श्रीनिवासन् ने आवाज दी—बेटर !

वेटर ने प्रवेश करके कहा—सर !

बिल।

वेटर ट पर चाय के याले आदि रख कर भीतर चला गया। अलग बैठे कृ णन् ने ऊब कर अंगड़ाइ ली। वेटर बिल प्लेट में लाकर पेश किया। श्रीनिवास ने दो आने अधिक रख दिये। वेटर सलाम करके लौट गया।

अरे। अशोक ने चौंक कहा—उनका तो बहुत पहले आने का वायदा था। अभी तक नहीं आये ?

हम स्वयं आधे घन्टे बाद आये हैं कहीं वे लोग आकर चले तो नहीं गये ?

पूछो तो।

अशोक ने अलग बैठे कृ णन् से मुड़कर कहा—जन्टलमन ! क्षमा करिये।

कृष्णन् ने ठंडे स्वर से कहा—जी।

क्या आप बताने की कृपा करेंगे कि आप यहाँ कितनी देर से बैठे हैं यदि आप बुरा न मानें तो

कृ णन् ने काट कर कहा—आप पुलिस ?

देखिये अशोक ने हिचकिचा कर कहा—यह बात नहीं। क्या आपने लड़के को एक लड़की के साथ देखा था ?

जी हाँ कृष्णन् ने कहा—जब मैं होटल में घुस रहा था। मैंने उस

पर्दे के हट जाने से लड़की को देखा था। वह कपड़े ठीक कर रही थी और आदमी उसके पास खड़ा था

जी जी अशोक ने सन्तोष से सिर हिला कर पूछा—वह लड़की गोरी थी ?

कृष्णन् ने कहा—गोरी ? वह तो थी ही गोरी। एन्लोइण्डियन।

श्रीनिवासन् जोर से हसकर कह उठा—अरे मैं भी क्या सोच रहा था कहीं बालकृष्णन् ने इतनी उतावली न की हो।

हठात् कृष्णन् ने बाहर के द्वार की ओर हाथ उठा कर कहा—देखिये वही आ रही है। अब के उसके साथ एक लड़की है।

श्रीनिवासन् ने मुड़ कर कहा—अरे यह तो डॉरोथी है। यह, यह तो

बात पूरी नहीं हो पाई। लड़कियाँ आकर बैठ गईं। सारंगपाणी ने उठते हुये कहा—तो फिर चला जाय। वह लोग अभी तक नहीं आये। कहीं पकड़े तो नहीं गये ?

अशोक और श्रीनिवासन् ने एक साथ मिश्रित दृष्टि से देखा। और अशोक ने उठते हुए स्वीकार किया—अच्छा चला जाय।

श्रीनिवासन् लाचार सा उठ खड़ा हुआ। उसने देखा। डॉरोथी मुस्करा रही थी।

—२—

जब वे तीनों चले गये कृष्णन् ने आवाज दी—वेटर।

वेटर ने प्रवेश किया।

कौन थे ये लोग ?

वृद्ध का मुख गंभीर हो गया। उसने विरक्त स्वर से कहा—साँझ के शिकारी। दुनिया को बेवकूफ समझते हैं। एक औरत भगा दी है उस पर इतना घमंड। समाज समाज सुधार। सुधार। दिन भर लड़कियों का चक्कर उसने यह कहा, उसने वह कहा, किसी की

आँख अ छी है किसी के कान अच्छे हैं बहुत हुआ ब्रिज का जोर मारा और घर जाकर माँ बाप को उल्लू बनाया। और क्या? हराम का मिलता है जो?

कृ ष्णन् ने हसकर कहा—तुम बूढ़े हो न? तभी तुम्हें यह बातें नहीं सुहातीं। एक कप काफी और ला दो।

यस सर। वेटर के स्वर में हठात् दूसरी गंभीरता आ गई। वह चला गया।

उस समय एक लड़की ने कहा—मारगेरेट! ओह डियर मी! मैं बहुत थक गई हूं।

मारगेरेट ने मुस्करा कर कहा—तुम्हारा दोस्त! मुझे तो उसका यकीन नहीं

उससे पहला तो उफ उफ

वह तो जानवर था।

वह सीधा है।

बहुत पैसा है इसके पास। शादी क्यों नहीं कर लेती?

निभेगी नहीं डॉरोथी ने उदासी से कहा—यह सिड़ी भी तो है

क्यों? मारगेरेट ने उत्सुकता से पूछा—झगड़ा हुआ है कभी?

हो सकता है।

चुप चुप मारगेरेट ने धीरे से कहा—यह आदमी सुन रहा है।

डॉरोथी हसी। कहा—यह मुझे कपड़े ठीक करते देख चुका है। उससे क्या छिपाना?

उठकर उसके पास चली गयी। मारगेरेट ने घबरा कर आवाज दी—डॉरोथी!

किन्तु डॉरोथी ने नहीं सुना। उसने कृष्णन् से कहा—जन्टलमन! आप हमारी बातें सुन रहे थे?

कृष्णन् ने अचकचा कर देखा और उसके मुँह से निकल गया—ओह नो। लेडी नो।

वेटर कॉफी ले आया थी।

आप पीजिये।

ओह नो थैंक्स। कहती हुई डॉरोथी वहीं बैठ गई। कृष्णन् ने कहा—वेटर। दो याले और ले आओ। मुड़कर डॉरोथी से कहा—उन्हें भी बुला लीजिये न?

डॉरोथी ने कहा—मारगेरेट।

मारगेरेट आकर पास बैठ गई। वेटर दो प्याले और ले आया। उसके मुख पर असंतोष था। जब वह चला गया कृष्णन् ने कहा—लोग काफी कांच के गिलासों में पीते हैं मुझे वह पसंद नहीं। और मारगेरेट से कहा—आप कुछ नाराज लगती हैं। पीजिये?

नहीं तो मारगेरेट ने कहा—आपको यह शक क्यों हुआ मैं सोच रही थी कि जरा बाजार जाती।

चलियेगा। मोटर बाहर खड़ी है।

गुड डॉरोथी ने स्वीकार किया तुम जाना मारगेरेट लेकिन मैं नहीं जा सकूँगी। मुझे काम है।

मारगेरेट ने कॉफी पीते हुये कहा—आप पहली बार इधर आये हैं? कल आइयेगा?

क्यों? कृष्णन् ने उत्सुकता से पूछा।

मारगरेट' डॉरोथी ने ऊबे हुए स्वर से कहा— तुम्हें सदा नये आदमियों को सिनेमा दिखाने की सूझती है।

'तो आज ही चलिये न? कृष्णन् ने स्वर का आनन्द छिपाते हुए कहा— यहीं से चलेंगे।

ममी नाराज होंगी। मारगेरेट ने अबोध आँखें उठाते हुये कहा।

ओह ! कोई बात नहीं। मैं समझा दूँगी डॉरोथी ने कहा—एक शरीफ आदमी के साथ जाने में क्या हज है।

तो चलिये न ! मारगेरेट उठ खड़ी हुई।

लेकिन कृष्णन् ने कहा—बिल तो मँगा लूँ ?

मैं बाहर ही दे दूगी।

कृ णन् का हृदय गद्‌गद्‌ हो गया। उसने मारगेरेट के साथ बाहर चलते हुए डॉरोथी की ओर मुड़कर कहा—बाई बाइ

डॉरोथी ने हाथ उठा कर हिलाया। कुछ देर वह चुपचाप सिगरेट जला कर धुँआ छोड़ती रही। बगल के द्वार से इशरत घुस आया। उसने पास आकर कहा—मिसी बाबा !

डॉरोथी का ध्यान टूटा। उसने कहा—मारगेरेट तो गई। उसमें अभी बड़ी चकाचौंध है।

आप भी तो

इशरत की बात को काट कर डॉरोथी ने डाट कर कहा— चुप रहो बेवकूफ ! क्या है ?

मिसी बाबा ! इस बाबू का पता बताया है। इनाम !

यू डॉग ! डॉरोथी ने एक रुपया बटुए में से निकाल कर मेज़ पर डाल दिया। इशरत ने रुपया उठा कर सलाम किया। डॉरोथी उठ खड़ी हुई। इशरत ने धीरे से कहा—हुजूर !

'क्या है ?'

हुजूर उसने हिचकिचा कर कहा—'एक अर्ज है।

डॉरोथी जैसे समझ गई पर अनजान बन कर कहा—क्या है ? बोलो।

'हुजूर, कसूर माफ हो।'

बोलो। क्या बात है ? और पैसा चाहिये ?

हुजूर पैसे की क्या कमी है ? आपकी खिदमत में किसी चीज की ज़रूरत नहीं पड़ती।

तो फिर कहता क्यों नहीं ?

हुजूर डर लगता है। आप नाराज हो जाएगी।

ओह तो ! तुम हमारा आदमी है।

हुजूर ! इशरत ने एक बार निगाह भर कर डॉरोथी को देखा। फिर आँख झुक गई— आप बहुत खूबसूरत हैं।

हुजूर साफ कपड़े पहन कर यह काम करने में शर्म लगती है। मैं उस वक्त साफ कपड़े पहन कर आऊँगा।

डॉरोथी हंस दी। जैसे वह सोच रही थी।

हुजूर मैं आपका गुलाम हू।

डॉरोथी एक बार मुस्कराई फिर चली गई। इशरत गद्‌गद् सा खड़ा रहा। पगचाप सुन कर उसने आँख उठाई। एक घबराई सी लड़की ने प्रवेश किया। इशरत सावधान हो गया।

तुमने यहाँ लड़की ने हाँफते हुए कहा— एक आदमी को देखा ?'

बीबी ! यहाँ आदमियों के अलावा सिर्फ औरत आती हैं। आप किसे पूछ रही हैं ?

मेरा मतलब बालकृष्णन् से है। वह मुझ से रास्ते में कह कर गया था कि अभी आता हू। सो अभी तक नहीं आया।

तो वह अब आवेगा भी नहीं। इशरत ने सिर हिला कर कहा— 'वह आपको छोड़कर भाग गया है। कौन था ?

'वह मेरा पति होने वाला था। लड़की का मुख विवर्ण हो चला था।

होने को तो मैं भी जाने क्या होने वाला था। लेकिन आज कुछ भी नहीं हूँ।

हाय! अब मेरा क्या होगा न इधर की रही न उधर की मेरा तो कहीं भी कोई न रहा

लड़की बैठ कर रोने लगी। उसके मुँह से अस्फुट शब्द फूट रहे थे जिन्हें शायद दाब सकने में वह अब असमर्थ हो गई थी—अब मैं दुनिया को अपना मुँह कैसे दिखाऊँगी। कहाँ जायगी तू कमैला?।

वेटर ने आवाज सुनकर प्रवेश किया। कठोर दृष्टि से इशरत को घूरते हुए कहा—इशरत? क्यों छेड़ रहा है शरीफ औरत को? होटल की इज्जत का सवाल है।

मैं क्या कर रहा हूँ इशरत ने द्वार की ओर हटते हुए कहा—तुम जानो तुम्हारा होटल। बीबी कह रही थीं कि अब वे कहीं की नहीं रहीं। बेकार घर छोड़ कर भाग आईं।

भाग आईं? वेटर ने चौंक कर कहा।

शरीफ औरत है इशरत के मुख पर मुस्कराहट काँप उठी।

भाग जा बदमाश वेटर ने तड़प कर कहा—क्या देख रहा है खड़ा खड़ा। रंडियों का दलाल। साले तू सड़ सड़ कर मरेगा।

तेरी तरह नौकर तो नहीं हूँ? इशरत ने ताना मारा।

निकल यहाँ से। वेटर ने फुत्कार किया।

अरे जा तो रहा हूँ बूढ़े। क्यों खाये जा रहा है।

लड़की को घूरते हुए वह चला गया। वेटर के होंठ घृणा से काँप उठे। उस नीरवता में लड़की का रुदन गूंज उठा।

—२—

वेटर ने लड़की के पास जाकर पूछा—तुम कौन हो?

मैं मैं पापिनी हूँ लड़की ने रोते हुए कहा हाय मैं कहीं की भी नहीं रही। क्यों नहीं फट जाती यह धरती? जो औरत का जनम लेकर अब भी जी रही हूँ

वेटर किंकर्त्तव्यविमूढ़ सा खड़ा रहा। लड़की रोती रही। इसी समय कृष्णन् घबराया सा भीतर घुस आया।

वेटर! उसने तेज़ी से कहा।

सर!

हमारा मनीबेग कहाँ है? एक तीव्र दृष्टि ने अपनी कुर्सी के ऊपर नीचे देखा और मुड़ कर कहा—कहाँ है बताओ?

वेटर चुप खड़ा रहा। जैसे कोई बड़ी बात नहीं हुई। फिर धीरज से पूछा—आपने बाहर दाम नहीं दिये?

बिल तो उस लड़की ने चुकाया था न? वह लड़की रास्ते में एक जरूरी काम बताकर मुझे छोड़कर मोटर से उतर गई। दूर पहुंच कर मैंने जेब में हाथ डालकर देखा पर्स नहीं था स्वर भिंच गया। वेटर ने मुस्करा कर पूछा—वह लड़की कौन थी? क्या आपकी होने वाली बीबी

कृष्णन् चिल्ला उठा—चुप रहो। बवकुफ।

बाबू वेटर ने हाथ से इशारा करके कहा—बेवकूफ तो वह आपको बना गई।

बना गई? कृष्णन् ने भौं सिकोड़ कर कहा—तुम सब बदमाश हो। तुमने होटल के नाम पर चकला खोल रखा है। मैं यह कभी बर्दाश्त नहीं कर सकता। कम्पनी ने मुझे हजारों रुपया औरतों के पीछे फूंकने को नहीं दिया था। आज तक कई लड़कियाँ मिलीं लेकिन ऐसी कोइ नहीं थी।

वेटर ने मुस्करा कर फिर पूछा—आपको उसने कुछ नहीं दिया?

दिया? कृष्णन् ने गुर्रा कर कहा—क्या देती वह मुझे? रंडी किसी को क्या दे सकती है? उसमें नौ सौ रुपये थे नौ-सौ।

स्वर में दृढ़ता थी। वेटर ने चौंक कर दुहराया—नौ सौ!

तुम सोच भी नहीं सकते क्यों? कृष्णन् ने होंठ चबा कर कहा—

तुम होते तो तीन जगह गश खाते और अभी तक तो दम तोड़ दिया होता। भिखमगे। लेकिन मैं शादी करने वाला हू। आज मुझे एक नेकलेस खरीदने जाना था। और अब मुझसे मनीबेग खो गया है। क्या कहूगा मैं चन्मखि से? कितनी खुश होती वह उस नेकलेस को पाकर

वेटर को जैसे होश आया। उसने कहा—सर आप पुलिस

कृष्णन् ने काट कर पूछा—क्या वह लड़की यहीं की रहने वाली है?

वेटर ने निराश स्वर से कहा— मुझे नहीं मालूम।

कृष्णन् कराह उठा — उफ! जाऊ! कहाँ जाऊँ? क्या करू? कुछ भी समझ में नहीं आता।

लड़की ने सिर उठा कर कहा—आपका तो सिर्फ रुपया खोया है लेकिन मेरा तो सब कुछ खो गया है

आपका? क्या खो गया आपका शुभ नाम?

कमला। लड़की ने कठिनता से कहा।

कमला! कृष्णन् चौंका। फिर पूछा— आपका दोस्त कहाँ है?

वह छोड़ गया बाँध टूट गया। लड़की फिर रोने लगी।

आप उस बदमाश के साथ भाग क्यों आई? कृष्णन् ने तिक्त स्वर से कहा— मुझे आप से हमदर्दी है। लेकिन मैं आपकी कोई मदद भी तो नहीं कर सकता? आप सचमुच नादान हैं। आपने अपने ही पैरों में कुल्हाड़ी नहीं मारी अपने माँ बाप की इज्जत खाक में मिलादी

कमला ने हाथों में ग्लानि से मुह छिपा लिया। मैं क्या करूँ?" वह रोते हुए कह उठी— वह बड़ी-बड़ी बात करता था। एकदम धोखा दे गया

मैं अपना भोगूँ, आप अपना भोगिये। कृष्णन् वेग से चला गया। कमला ने अत्यन्त करुण कंठ से कहा—चला गया। यह तक न

पूछा कि क्या करेगी। कितना निष्ठुर है यह संसार। कोई सहारा नहीं कोई ठिकाना नहीं

वेटर ने धीरे से कहा—बीबी!

वेटर!

बीबी वेटर ने उपेक्षा से कहा— यहाँ पुलिस आ सकती है। आप चली जाए तो अच्छा हो।

पुलिस!! कमला भय से काँप उठी। लेकिन मैं कहाँ जाऊँ वेटर? मेरा तो कोई नहीं है।

आप अभी ब ची हैं। घर लौट जाइये। माँ बाप कैसे भी हों। आखिर माँ बाप हैं। वैसे काम तो आपने ऐसा किया है कि गला घोट कर मार डालना चाहिये।

वृद्ध का स्वर काँप उठा। लड़की ने रोते हुए ही कहा— हाँ मैंने पाप किया है। पर पाप ता सब ही करते हैं। फिर फिर मुझे ही क्षमा नहीं किया जा सकता?

आप औरा हैं वृद्ध का स्वर कठोर हो गया और औरत का पाप कोई क्षमा नहीं करता। औरत की जात ही अगर ंङ्ग से नहीं रहेगी तो मर्दों का क्या होगा?

तो जाऊ? कमला ने आद्र कंठ से कहा— क्या कहू घर जाकर? वेटर तुम बूढ़े हो। तुम मेरे बाप के बराबर हो। घर कैसे जाऊँ? वे लोग मुझे मारते थे। यह देखो वेटर यह देखो तुम समझते हो वे लोग आदमी हैं।

वृद्ध ने देखा। हाथा पर नील पड़ी थी। उसने धीरे से कहा— लेकिन तुम्हारी माँ फिर भी तुम्हारी म है?

माँ मैं नहीं जानती संसार में सब माँ को इतना अच्छा क्यों मानते हैं। मैं तो अपनी माँ को फूटी आँखों भी नहीं सुहाती। मेरे मरने से शायद उसे जितनी खुशी होगी उतनी और किसी चीज़ से नहीं।

वह तुम्हारी असली माँ है।

नहीं वह तो देवी थी। मुझे बहुत प्यार करती थी। यह मेरी दूसरी माँ है।

वृद्ध चुप होकर सोचने लगा। लड़की हाथों में मुंह छिपाये भीतर ही भीतर सिसकने लगी। एकाएक द्वार पर कोई दिखाई दिया। वृद्ध उधर ही चला। अशोक और सारंगपाणि घबराये हुए भीतर घुस आये। उनके होंठ सूख रहे थे।

क्या फायदा ऐसे प्रेम से अशोक ने सारंगपाणि को बैठते हुए देखकर कुर्सी खींचकर उत्तेजित स्वर से कहा— न आप रहा न दूसरों को ही कुछ दे सका। क्या कहेगी अब उसकी माँ?

मरना ही था तो सारंगपाणि ने भौं उठाकर कहा—कमबख्त ने ऐसी हिम्मत ही क्या की? तब तो आँखों में ऐसे डोरे पड़े कि सब कुछ गुलाबी दिखने लगा!

कोई बात हुई! एक लड़की भगा लाये। जब हिम्मत नहीं हुई तो उसे कहीं छोड़कर मोटर के नीचे गिरकर आत्महत्या कर ली। वेटर! चाय!

वेटर भीतर चला गया।

तुम उसकी लाश के पास भी नहीं गये?

अजी जाओ! ऐसे कायर के पास जाना तो क्या उसको देखना भी प्रेम जैसी पवित्र वस्तु का अपमान करना है

अशोक का मुख विकृत हो गया। सारंगपाणि ने सोचते हुए कहा— प्रेम वस्तु तो नहीं अशोक। एक भावना अवश्य हो सकती है।

और अपना एक उदाहरण और छोड़ गये!

सारा अपराध तो बालकृष्ण का नहीं। कुछ तो कमला ने ऐसा अवश्य किया होगा। ऐसी लड़कियाँ जो प्रेम का स्वाँग करती हैं गोली

मार देने क़ाबिल होती हैं लेकिन अशोक। बालकृष्णन् कायर था बिल्कुल कायर!

अशोक ने दृढ़ता से पूरा किया—परले सिरे का।

अपना नाम सुन कर लड़की ने सिर उठाया। अशोक कहता गया—कमला के साथ जो उसने किया है वह बिल्कुल अनुचित है। अब वह लड़की कहाँ रहेगी?

एकाएक सारंगपाणि लड़की को देख कर चिल्ला उठा—कमला तुम यहाँ भी? क्या एक की हत्या से मन नहीं भरा। भर भरके उसके कान तुमने माँ बाप का इकलौता बेटा उनसे छुड़वा दिया और अब उसका सर्वनाश करके यहाँ रोने का बहाना कर रही हो?

लड़की के नेत्र गम से फट गये। उसने कहा—क्या क्या वे।

अशोक ने संवेदना से कहा—मोटर के नीचे जाकर दब गया।

लड़की जोर से चिल्ला पड़ी—हाय! मेरे भगवान्! यह तूने क्या किया? राह की भिखारिन बना दिया मुझे। मर गये? सच कहो तुम झूठ तो नहीं कहते?

झूठ नहीं कमला अशोक ने उदास स्वर से कहा—मैं ठीक कह रहा हूँ। तुम्हारा होने वाला पति मर चुका है।

और सारंगपाणि ने कठोर स्वर से कहा—मर चुका है वह जो तुम्हारे पीछे कुछ भूल कर अंधा हो गया था। जिसने उनकी परवाह की जिन्होंने अपना पेट काट कर उसे इतने दिन तक पाला था।

चुप रहो लड़की चिल्ला उठी—मैं पागल हो जाऊँगी। वह नहीं मर सकते वह इतने कायर नहीं हो सकते। उन्होंने कहा था वे जीवन भर मेरा साथ देंगे मर गये? मैं शादी से पहले ही विधवा हो गई हूँ। मेरा कोई नहीं? सारा संसार मेरे दिल में आग लग रही है मैं नहीं मैं नहीं कितना! कितना!

कमला मूर्छित होकर गिर गई। अशोक और सारंगपाणि विस्मित

से खड़े हो गये। प्रवेश करके वेटर ने धीरे से कहा—सर मैं बूढ़ा हू अगर आप बुरा न मानें तो यहाँ से चले जाए।

क्यों? अशोक ने चौंक कर पूछा।

यहाँ पुलिस आने वाली है।

पुलिस!!! दोनों बोल उठे।

जी। वेटर ने सिर झुका लिया।

चलो अशोक सारंगपाणि ने घबराये स्वर से कहा—जो होना था सो गया। अब क्या होगा! बेकार की झंझट में पड़ने से फायदा?

लेकिन कमला? अशोक ने पूछा।

एक तो मर ही चुका। अब क्या दो को जेल भी जाना चाहिये? चलो। यहीं रह कर क्या होगा?

अशोक उठ खड़ा हुआ। वेटर ने टोक कर कहा—सर! आपने चाय का आर्डर दिया था। चाय तैयार है। ठंडी हो रही है।

सारंगपाणि ने जल्दी में एक रुपया उसके हाथ पर रखते हुए कहा—आज सब ठंडा हो रहा है वेटर। आदमी के भीतर की यह गर्मी ही सारी आफतों की जड़ है

वेटर ने रुपया मुट्ठी में दबा कर सलाम किया। दोनों चले गये। वेटर देर तक मूर्छित कमला को देखता रहा फिर भीतर चला गया।

जब काफी देर बाद कमला को होश आया उसने इधर-उधर देख कर करुण स्वर से कहा—कोई नहीं। इस अबला की रक्षा के लिये कोई नहीं?

उसने सुना—मेरे साथ चलो। बइज्जत जिन्दगी को इज्जत के धोखे में बिता दोगी मैं सिर्फ इतना कर सकता हूँ

देखा। द्वार पर इशरत खड़ा था।

अधूरी मूरत

मैं जिस छोटी सी दूकान में नौकर था वह दूकान शहर के उस हिस्से में बसी हुई थी जो बहुत ही पुराना था। बड़ी सड़कों की रौनक वहाँ घुस ही नहीं सकती थी क्योंकि उनके लिये हाथ पाँव फैलाने की कोई गुंजाइश ही नहीं थी। इसी से यह सोचना कोई कठिन काम नहीं है कि वहाँ कितने आराम चैन से काम होता था।

मुहल्ला क्या था! एक जमाने में वहाँ के लोगों के सामने बड़े बड़े मुसा बर घुटने टेक देते थे। किताबों के ढेर में हिसाब लिखते लिखते जब मैं सिर उठाकर बाहर देखता तो उस सामंतीय युगीन नगर के पुरानेपन की वह स्नेहमयी सान्त्वना मेरे हलचल से भरे हृदय में एक थकियात संतोष बन कर उतर जाती। मुझे लगता यह उस जीवन का एक खंडहर है जिसके विषादों के ऊपर किसकी ममता की एकाकिता है जिसके धुंधल के ऊपर किसी की प्रतीक्षा में जलते हुए दीपक का कोमल प्रकाश है जिसकी दासता में भी सुहागिन का छोह भरा प्यार है।

और फिर पत्थर की मूर्त्तियाँ बनाने वाले दस्तकारों का वह अथक परिश्रम जैसे उस पृष्ठभूमि में एक बहुत ही करुण तन्मयता थी जिसकी विवशता ही जीने की इच्छामात्र का वरदान बन कर अपने आप ही पत्थर पर तेज आरी बनकर घिस घिस कर काटा करती थी।

बूढ़ा हरचरन सामने ही बैठता। उसके दो जवान लड़के एक दस बारह बरस का नाती बगल में कमरे के जंगले से बँधी गाय जो कभी बैठकर जुगाली करती या उठकर सानी में रह रह कर मुह चलाती। पत्थर सफेद मटमैले। हरचरन की श्वेत दाढ़ी के बाल उसके वक्षस्थल को ढँक देते सिर प्राय गंजा हो चुका था और आँखों पर काले फ्रेम का चश्मा

लगाकर वह चुपचाप पत्थरों की मूर्ति को आखिरी उस्तादी हाथ लगाता लड़के मूर्तियां गढ़ते नाती अभी केवल प थर ही काटता। उस घर में स्त्रियाँ भी हैं छोटे छोटे ब चे भी हैं जैसे गाय के साथ बछड़ा भी है और एक अनवरत धार सा चलता यह जीवन जैसे समय एक तेज आरी है जो जीवन के कठोर प थर को काट देती ह और फिर मनुष्य प्रयत्न करके उन टुकड़ों को नवजीवन देने का प्रयत्न करता है।

आज मुझे नौकरी करते अनेक दिन बीत गये हैं मुझे अपने जीवन से उतना ही असंतोष है जितना इस पथ को मोटरों का अभाव है भेद है तो केवल इतना कि यह पथ जानते ही नहीं कि मोटर है क्या और मैं दुर्भाग्य से कल्पना भी करने का आदी हो चला हू।

वृद्ध हरचरन ने मुझे स्नेह से देखा था और कहा था—जब मन करे तब चले आया करो बाबू।

और मेरा दफ्तर जिसे अपनी तपस्या का गर्व है कि वह भी सघष के इस विराटचक्र से अपना दाँत गडा कर अपना आस्ति व बता देना चाहता है और हरचरन की वह दूकान जिस पर एक सुबह की किरन आती है दिन भर कमरे में रंगती है और साँझ हुए भारी कोहरे में ऐसे छिप जाती है जैसे गहरे कपड़ों में कोई गोरा बदन लाज से लिपट कर मुँह छिपा लेता है।

बूढ़ा हरचरन पुकार कर कहता—बाबू! क्या हो रहा है?

क्या बना रहे हो? मैंने उस दिन केवल बात बदलने के लिये पूछा।

'कुछ नहीं बाबू वृद्ध ने उठ कर आगे आते हुए कहा— वह हैं न सक्सेना बाबू अमरीकनों के दफ्तर में नौकरी कर ली है न? सो एक तस्वीर दे गये हैं कि ऐसी मूरत बना दो। किसी गोरे को देंगे। वह ही बना रहा था।

उठ कर मैंने देखा। तस्वीर अमरीका की प्रसिद्ध आज़ादी की ति थी। हाथ में मशाल उठाये।

बनाई कुछ ? मैंने पूछा।

चेहरा तो बनाया है।

देखा। वह मुख स्पष्ट ही भारतीय था। मैंने हस कर कहा—लेकिन चेहरा तो हिंदुस्तानी है।

वृद्ध अप्रतिभ होने लगा। मेरे मुख से निकला—तो क्या हुआ ? हिन्दुस्तानी आज़ादी की मूरत यही।

वृद्ध ने सुना फिर धीरे से कहा—लेकिन बाबू यहाँ लेगा कौन ? शब्द मेरे कानों में वज्र की कड़क-की भाँति गूँज उठे। और एक क ा कार कह रहा था ॥

दोपहर का वक्त था। जाड़े की धूप की वह नीरव तन्द्रा मध्य कालीन संस्कृति की मुझे बार बार याद दिला देती थी। इसी समय मेरा ध्यान टूट गया। अजनबी के स्वर ने यासे दिल का तार छुआ। और गूँज झनझनाती हुई फैल गई। मैंने देखा वृद्ध बैठा अपना सितार टुनटुना रहा था। उस दलित जाति के उस दरिद्र कलाकार को देखकर न जाने क्यों मेरा मन भीतर ही भीतर रो उठा। युगों की संस्कृति को किस राख ने ढँक दिया है आज जो उसके भीतर के शोले को बुझा देना चाहती है किन्तु यह उस कंडे की आग है जो धूप में सूख कर कड़े हुए शरीर में तपिश बन कर समाई हुई है जो बझेगा नहीं नहीं बुझेगी धुआँ देती रहेगी सुलगती रहेगी।

सितार पर वह उँगलियाँ चल रही हैं मुझे लग रहा है कि सामने रखा पत्थर का टुकड़ा अब शीघ्र ही गा उठेगा। और वृद्ध मग्न होकर गा रहा था—

प्रभु मोरे अवगुन चित न धरो,
समदरसी है नाम तिहारो
चाहे तो पार करो

स्वर चढ़ता है स्वर उतरता है। उस अरोहन अवरोहन में न जाने मनुष्य की कौन सी पीड़ा कसक कसक कर रो रही है कि मेरी इस नीरसता की आधुनकता को आज भारत की युग युग की सस्कृति आ मा का रोदन बनकर बार बार कँपा रही है जैसे वृद्ध की उँगलियाँ उस तार को और दोनों की वह अज्ञात पुकार शू य के निर्मल प्रसार में धीरे धीरे घुली जा रही है मिली जा रही है।

मेरी आँखों के सामने उस शांति का म य चित्र खिचता जा रहा है जिसमें अपनी सी मत तृष्णा ही सन्तोष बनकर दीपक के नीचे का अँधेरा बनकर सिमट कर रह गई थी।

गीत रुक गया। वृद्ध ने मुस्करा कर कहा—क्यों मियाँ करीम ?

एक मुसलमान हाथ में साइकिल लिये द्वार पर खड़ा था। हैंडिल में दो थैले लटके थे।

आगंतुक ने कहा—वह तो खूब बिकी कल।

कौन सरस्वती ? वृद्ध ने सिर उठा कर पूछा।

खूब बनाई है गुरू करीम ने कहा—कल तो आफताब साहब भी फड़क उठे देख कर। पहले कहा करते थे कोई मुसलमान मूरत लाओ क्या रोज रोज हिंदू मूरत ले आते हो। गुरू मैं कहता था कि मुसल मानों के यहाँ रिवाज ही नहीं है। और फिर पत्थरों में क्या हिंदू, क्या मुसलमान

वृद्ध गर्व से मुस्कराया जैसे उसके हाथ में प थर भी किसी संस्कृति का द्योतक है। मैंने अनुभवमात्र किया। नहीं जानता वृद्ध क्या सोच रहा था। उसने धीरे से कहा—करीम मिंयाँ ! यह हवा बदली जा रही है। हम तो ताजमहल भी बनाते हैं। सोचते ही नहीं कि यह किसी मुसलमान जगह की मरत है।

करीम ने कहा—बकने दो गुरू ! करीम को तो हिंदू मरत पैसा देती हैं।

और वृद्ध ने हँस कर कहा—न कहोगे हरचरन ताज पर पलता है। दोनों हसे।

तो करीम ने सोचते हुए कहा—

तीन और देना वैसी।

वृद्ध ने नाती की ओर देखा। नाती उठा। तीन सरस्वती की छोटी छोटी मूर्तियाँ निकाल लाया अलमारी से। करीम ने उन्हें सहेज कर थैले में रख लिया और कहा—फिर मिलगे इन्शा अल्ला

वृद्ध ने सितार फिर उठा लिया और गा उठा—

समदरसी है नाम तिहारो गीत अपने आप में पूर्ण है क्यों कि मन की अतृप्ति उसका अधार है क्याकि जो टीस है वही रागिणी है जो ूज है वही उसका प्रसार है

एक नदी है एक नाला है जिसमें मैला नीर भरा है किन्तु जब दोनों मिल जाते हैं तब उनका नाम सुरसरि धार पड़ जाता है

और मेरे अतीत की वह आम विह्वलता आज विश्वास बनाकर गरज उठना चाहती है क्याकि यह मनु य की उस सतह की बात है जहाँ मनुष्य अपने संकोचा में पड़कर मनु य ने मनु य की तो क्या अपने सम्बन्धों में आये पत्थर तक से घृणा नहीं की क्योंकि दोनों के मनुष्यत्व को कायम रखने वाली रोटी का सवाल है ूख के सम्राट के अश्वमेघ को रोकने का युद्ध ह

मैंने एक अंगड़ाई लेकर अपनी उदासी को दूर करने का प्रयत्न किया। वृद्ध उस समय गंभीर होकर कुछ सोच रहा था। उसकी उस भव्य आकृति को देखकर मुझे कुछ क्षण के लिए मनु य की केवल एक झलक दिखाई दी, जिस सिर को काटकर थाल म रख दिया जाये तो पता भी न चले कि यह किसी प्राचीन ऋषी का है या किसी प्रेम विह्वल सूफी का, या मनुष्य की अपराजि चेतना के प्रतीक गुरुदेव का

सामने वही अधूरी मूरत रखी है। वही भारतीय मुख है। धीरे धीरे

ऊपर उठा हाथ बनता जा रहा है। एक दिन इसमें मशाल बन जायेगी और फिर आज़ादी की यह मूरत

किसी ने कहा—बाबू!

देखा। एक औरत है। जवान है। लेकिन मन नहीं किया देखने को। उसकी जवानी उसकी बाद सी वृद्धावस्था के हाथों में एक धरोहर मात्र है जैसे महाजन के पास किसान का वह खत जो है किसान के ही नाम लेकिन जिनकी फसल पर उसका अपना कोई अधिकार नहीं है।

वह पैसा माँग रही है देख रही है इधर उधर किसी को न पाकर जैसे मेरी जवानी पर रहम खाकर मुस्करा रही है, फिर माँग रही है किन्तु कोई उत्तर न पाकर चली जा रही है वैसी ही जैसे कि यहाँ कहीं से इसी तरह या किसी की ठोकर खाकर गाली खाकर चलती चली आ रही है और आने जाने की मेहनत पर आत्म सन्मान हीनता का मुलम्मा चढ़ाने के कारण ही जिसके पेट के भीतर की सापिन को रोटी नाम का वह जहर मिलता है जिसको चर के निगल के वह फुंकारती है और इंसानयत के घमण्ड करने वालों की सभ्यता पर बार बार फन मारती है, पटकती है।

चलते-चलते उसका हाथ उठ रहा है वह उसकी ओर दिखा रही है जिसके लिये पूर्वजों ने लिखा था कि वह हर जगह है लेकिन वास्तव में जो कहीं नहीं है। उसका वक्षस्थल खुल गया है क्योंकि कपड़े उसके शरीर को जीवितावस्था में भी नहीं ढंक सकते जैसे कि मुर्दे को कफन

और वह मुझ लगा जैसे वह भी हाथ में मशाल उठाये एक अधूरी मूरत थी जिसको लेने को कोई तैयार न था क्योंकि इसके भी एक भारतीय चेहरा था

मैंने देखा। वृद्ध ऐसा बैठा है जैसे वह किसी घोर चिन्ता में पड़ गया है। उसके सफेद बालों पर धूल का एक छोटा सांधे में से छनता गोला चमक रहा है। लड़कों के पाँव घुटनों तक पत्थर के बुरादे से सफेद

हो चुके हैं नाती का मुँह तक सफेद लग रहा है और सामने अधूरी मूरत रखकर कलाकार कुछ सोच रहा है कुछ देख रहा है और न वह कुछ सोच ही पाता है न देख ही क्योंकि वह शायद भूल गया है कि उसे प थर काटना ? पिघला ा ाहीं है ग्लाना नहीं है

सांझ हो गई थी। मैं बस्ती के पिछवाड़े के एक तालाब के पास की छतरी में नैठा था। देखा बू । हरचरन साझ की उठती धूलि में धीरे धीरे ग थर की उन दसियों बरस पुरानी सीढ़ियों पर टहल रहा था। उतरते अंधकार में पीछ बसे कु हारों के कच्चे मकानों के छ परों में छन छन करता सा धुआँ मिलकर सारे गगन को उदास उदास सा कर देता था। *बगल में एक फूल वाटिका है ऐसी जैसी राजपूत म ाल मिश्रित* चित्रकला का कोई नमूना हो जिसके बीच बारहद्वारी एक शिवालय एक कुआँ और फिर उसमें कोई एकांत बस्ती। तालाब का पा ी गंदला है।

वही भिखारिन वहाँ चुल्लू से भर भर कर पानी पी रही है। इस समय वह एक आवारे के साथ है जो उसे बच्चे के रूप में शायद भीख माँगने का एक नया बहाना रात उतरते ही सीढ़ियों पर ही दे जायेगा और भिखारिन समझगी कि इक्के वाला सिर्फ दुअन्नी दे गया है बाकी तो सब परमात्मा की देन हैं।

मैंने देखा वृद्ध उ मा सा घूम रहा था। मैंने कहा—क्यों गुरू कैसी रही ?

वृद्ध ने मुझ चौंककर देखा। कहा—बदल गया बाबू। जमाना उनके हाथ नहीं रहा जिन्होंने उसे पाल पोस कर इतना बड़ा किया था।

म नहीं समझा। वृद्ध छतरी पर आ बैठा। उस प्रशांत संध्या की नीरवता में पक्षियों की लौटती गुंजार का कलरव फिर अनंत आकाश के प्रसार का वह दाहक सूनापन और अंधकार के थपेड़ों में कांपता निस्वन प्रकाश—जिसके सामने वह भ ्य वृद्ध जिसकी उदासीनता युग की

गुरूह उलझन के समान मुझे ही विह्वल कर उठी जैसे एक दिन नचि केता यम के सामने उस जीवन और मृत्यु के प्रश्न करते समय अपने भाग्य से व्याकुल हो उठा होगा।

वृद्ध ने कहा—एक दिन हम इसी ताल पर खले हैं यहीं जवानी में हमने भङ्ग घोटी है देवी के पाठ किये हैं नौटंकियाँ हुई हैं। जब यहाँ चाँदी की पाड़ें बाँधी थीं रात रात भर भगत होती थी

और एक दीर्घ निश्वास।

कहाँ गई वे सब गुरू? मैंने पूछा।

कहाँ गई? वृद्ध ने धीरता से कहा। वही तो तुम नहीं समझ सकते बेटा। वह तुम्हारे पैदा होने के पहले ही गोरा मालिक ले गया। तुम तो कीचड़ में पैदा हुये हो

मुझे लगा जैसे मैं उस गंदे जल पर भन भनाने वाला केवल एक मच्छर हूँ और वृद्ध वह पुराना पेड़ है जो अपनी अनेक जटाओं को लटका कर जल पर छा रहा है।

वह दूर कैसी रोशनी है? वृद्ध ने पूछा।

वहाँ आज कोई नेता जेल से छूटकर आये हैं। सेठ ने दावत दी है। मैंने कहा।

मगर सेठ तो लड़ाई के एक ठेके में लाखों कमा गया। अच्छा ही है। बड़े नेता पैसेवालों को ढूँढ रहे हैं जो पैसे देगा वही ताकत पायेगा।

मैंने देखा बूढ़ा एक बहुत बड़ा सत्य कह रहा था। लेकिन मन नहीं माना। नेता तो हमने बनाया है। सेठ तो कल सरकार के साथ था मुँह से लड़ाई की निन्दा करता था छिपकर रुपये कमा रहा था लड़ाई के बल पर खुलकर हमीं तो कल भी नेता के लिये तड़प रहे थे। नेता हमारा है आज तक हम से लिया है। फिर लें ले। आज तक हमने अपना खून दिया है। आज हड्डियाँ देने को तैयार हैं। सेठ तो साह नफ

देगा जो उसने मजदूरों का पेट काटकर बचाया है चोर बाजारी करके निकाला है। हम पैसा दगे हमारी सरकार बने गी।

वृद्ध ने फिर कहा—बाबू! दिन बड़े खराब आ रहे हैं।

मैंने कहा—गुरू बुरा न मानना। जब से होश सभाला है तब से बु जुर्गा को यही कहते सुना है। न जाने अच्छे दि न कब आयेंगे?

वृद्ध ने अ यमनस्क होकर कहा—यही तो रोना है कि अब वे शायद कभी नहीं आयेंगे।

मैंने देखा। आकाश और पृथ्वी पेड़ छतरी ताल मैं वृद्ध सब अंधकार में डूब गए थे। सबको जैसे समदरसी ने एक कर दिया था। किन्तु कैसी साम्रा यशाही सी है यह समदरशिता जिसके लिए इतने अंधकार की आवश्यकता है। क्या हम अभी तक केव ल एक मैला नीर भरा नाला हैं क्या हमारा नाम कभी भी सुरसरि नहीं पड़ेगा क्या सदा ही जीवन ऐसे विभक्त होकर बहता रहे गा?

और फिर कुम्हारा की बस्ती से किसी औरत के रो ने की आवाज। वह आवाज ऐसी चौंका गई जैसे एकदम अंतरा ल में काँप कर दीपक फक करके बुझ जाये और मनु य को लगे कि वह आकाश से पृथ्वी पर गिर गया है।

मैंने कहा—गुरू कौन रोती है?

वही होगी वृद्ध ने विचलित स्वर से कहा—मुलुआ की माँ! मुलुआ कटौती के खिलाफ मिल के हड़ताली मजदूरों में था न? आज पुलिस ने गोली चलाई। जख्मी हुआ था। मर गया होगा।

जैसे यह मौत का बयान उस घोर विवशता का दूसरा रूप है जिसे क्लाइव और वारेन हेस्टिंग्ज़ की देशभक्ति कह कह कर गोरे हष से ताली पीटते हैं।

मैंने देखा। पूछा—पुलिस को बुलाया आपस में समझौता नहीं किया? इससे तो अपना नुकसान है न?

बीच में हिन्दू मुसलमान का सवाल उठा दिया' वृद्ध ने रोककर कहा।

मैं काँप उठा। कहा—लेकिन गुरू यह तो फूट का रास्ता है। हम सब तबाह हो जायेंगे।

वृद्ध ने कहा—और मैंने कहा ही क्या है मेरे दुधमुहें। तेरा वक्त था कि तेरी हथेलियाँ गुलाबी रहतीं और देखता हू आज हिन्दुस्तान की जवानी की हालत तो मन करता है नाखूनों से सीना फाड़कर बाहर नाली में फेंक दू कि मैं यह सब नहीं देख सकता नहीं देख सकता

सीढ़ियों पर शायद कुछ हलचल है। अंधेरा है भिखारिन है इक्केवाला है

और रात है वृद्ध का हृदय इसलिये रो रहा है कि मैं जवान हू अब मुझे किसी लड़की से प्रेम करना चाहिये लेकिन मैं गुलाम हूँ और मेरा यह अधिकार भी छीन लिया गया है

और अँधेरा छा रहा है। क्योंकि समझौता करने का मतलब किसी के सत्ता स्वाथ पर चोट है और फिर हराम का बच्चा पैदा नहीं हो सकेगा पेट की भूख बाप न बनेगी औरत का माँ होना पाप होगा और वह बच्चा होगी गरीबी उस पर इंसानियत की झप मिटाने का ढोंग—भीख और अँधेरा गहरा होता जा रहा है।

दीपक का धुंधला प्रकाश कमरे की दीवारों पर काँप रहा था। दरवाजे जाड़े के मारे बन्द कर लिये थे।

मैं कुछ देर बैठा फिर धीरे से मैंने पूछा—तो गुरू मूरत तो अभी अधूरी पड़ी है। आखिर पूरी होगी भी या यों ही पड़ी रहेगी?

वृद्ध ने उदासीनता से कहा—हो जाएगी।

मैंने फिर कहा—अपने आप हो जाएगी?

वृद्ध चुप रहा। कमरे में सन्नाटा वैसे ही हिल उठा जैसे दीवारों पर छायाएँ हिल रही थीं। पत्थरों के कोने चमक रहे हैं उनमें एक उज्ज्वलता

जैसे मुस्करा रही है वे कुछ कहना चाहते हैं जैसे गुलामी भी जो कुछ कराहना चाहती है आज खिले होठों से क्योंकि हर एक आसूवही तपिश है जिसे निकाल कर इंसान ने आज एक दूसरे पर जुल्म करने के लिए परमाणु बम बनाया है और वह उसे पिघला कर फिर से आँसू नहीं बनाना चाहता क्योंकि उल्लुओं को जागीरें देने से कहीं कठिन है इंसान के लिए एक झोंपड़ी बना देना।

वृद्ध ने चौंक कर कहा—बाबू! मुझे नहीं मालूम मुझे क्या हो गया है लेकिन पूरी करने को मन नहीं करता।

यह प थर सफेद होता तो कहीं ज्यादा अच्छा लगता। कुछ मट मैला है। सफेद क्यों नहीं लेते?

वृद्ध ने मुझे घूर कर देखा। शब्द बहुत सध कर निकले—सफेद प थर गोरा मालिक अपने काम में लाता है तभी उसकी मूरत भी अच्छी होती है। वृद्ध चुप हो गया। भीतर कोई ब च्चा रो रहा है। बाहर सन्नाटे की लाश पर कफन बन कर कोहरा अपनी सिमटों को मिटाता जा रहा है क्योंकि लाश सड़ती जा रही है क्योंकि यह मुर्दापन भी किसी नये जीवन के लिए संघर्ष कर रहा है जिसमें यह मजबूरियाँ किसी उगने वाले सूरज का इ तज़ार कर रही हैं

मैंने कहा—लेकिन मूरत अधूरी क्या रहेगी?

वृद्ध ने खाँस कर कहा—अगर मूरत पूरी करने में रह जाऊँगा तो खाऊँगा क्या?

बात मुझे कचोट उठी। मैंने कहा तो क्या गणेश गणेश ही बनाते रहोगे? रटी रटाई चीजें सिर्फ इसलिए कि पैसा मिलता है?

वृद्ध ने मुड़ कर दूसरी ओर देख कर कहा बच्चे हो न तभी ऐसी बातें करते हो? मैं मजदूर हूँ। जो पैसा देगा उसका काम करूँगा।

मैंने मना किया? मैंने पूछा—लेकिन जिसका दाम सेठ और महाजन देगा वह सेठ और महाजन की चीज होगी। वही जिसमें तुम

सिर्फ रोटियों के गुलाम रहो उसकी हिम्मत पर और जिसके पक्ष पर तुम होगे वह तुम्हारी चीज होगी जिसके पीछे तुम्हारी वह कुर्बानी होगी जो किसी अखबार में नहीं निकालेगी लेकिन तुम उस अधूरी चीज को पूरा कर सकोगे जिसको यदि नहीं करोगे तो बेकार है तुम्हारे हाथों की वह मेहनत जिसके पीछे तुम्हारे ईमान की कसम है।

वृद्ध ने मेरी ओर तीव्र दृष्टि से देखा और कहा—हिम्मत नहीं पड़ती।

मैं हस उठा। पूछा—तो क्या इस मूरत की हिंदुस्तान को कोई जरूरत नहीं! हिन्दू मुसलमानों में से कोई भी नहीं खरीदेगा?

वृद्ध चुप ही रहा। दीपक नहीं हिल रहा था पर हिलती लौ की हिलती छाया के कारण दीपक तो क्या लगता है जैसे सारा कमरा थर्रा उठा है।

वृद्ध का बदन एक बार सिहर उठा जैसे वह कुछ भी नहीं सोच पा रहा था।

मैंने कहा तो क्या तुम्हारी कला तुम्हारे हुनर के मुह से यही आवाज निकाल रही है?

वृद्ध कुछ नहीं बोला। उसने अपनी दाढ़ी पर हाथ फेरा। आज शायद वह एक क्षण अपनी लम्बी यात्रा का एक अल्प चरित सिंहावलोकन कर रहा था—समय की वह धूप जिसमें इंसान का सारा कालापन आज दुखों में पक पक कर सफेद हो चुका है पवित्र स्निग्ध

मैंने उठते हुए कहा—एक बार गोरा मालिक देखता कि जिसका हकदार वह अपने को समझता था आज हम उसी के घर में उसी को ललकार रहे हैं।

लेकिन घर तो हमारा लुट रहा है कहते हुए वृद्ध ने कांपते हाथ से मेरा हाथ पकड़ लिया। देर तक मुझे देखा और वृद्ध के आकुल कंठ से निकला—लेकिन मूरत अधूरी नहीं रहेगी

और भीतर बच्चा हस रहा था।

कुछ नहीं

२७ मौनीगली
कूचा लाला माधोलाल

प्रिय प्रकाश

तुम्हारा पत्र आया। और यह भी समझ लिया कि भाभी से तुम्हारी बिल्कुल नहीं पटती। लेकिन यह भी समझ में नहीं आता कि विवाह का आखिर मतलब क्या है? कहने को तो तुम बहुत कुछ कह जाओगे और मैं बिना दिलचस्पी लिये भी सुनूँगा ही, लेकिन बात इतने ही से सुलझने से रही। विवाह की कहानियाँ यदि कोई सुनाने बैठ जाय तो भूतों की कहानियाँ भी इतनी अ छी नहीं लगेंगी। कुँवारी लड़कियों का लड़कों से प्रेम प्रेम को ही सब कुछ समझ ने का पागलपन या पति प नी का सम्ब ध न जाने कितनी उल्टी सीधी बातें हैं और जो कहीं छिपा चोरी किसी की पत्नी या किसी के पति का सम्बन्ध हो तो भला क्या कहने! एक पूरा चिट्ठा ही समझो।

लेकिन हाल में एक घटना हो गयी है। हि दू धर्म खतरे में पड़ गया है। मेरी राय में बेचारा हिन्दू धर्म नो क्या दुनिया का कोई धर्म नहीं जो इस हरकत से लड़खड़ा न उठा हो। मेरी नज़र में बात एक मामली सी है। फिर भी तुम्हारे जीवन में नया कोण उपस्थित हो सके इसकी सम्भावना से ही तु हें लिख रहा हू। तुम जानते हो मैं लड़कियों को कोई अजीब चीज़ समझने से हमेशा ही इन्कार करता रहा हू।

परसों मैं शाम को घूमने जा रहा था। राह में देखा एक औरत खड़ी रो रही थी देखने में वह किसी क्लर्क की पत्नी लगती थी। और थी भी वह सचमुच ही वही जो मैंने सोचा था। मैं रुक गया। लोगों

से पूछने पर पता लगा कि उसका पति उसे रोज़ मारता है और घर से निकालना चाहता है। इस लिए वह उसे पागल करार देना चाहता है। स्त्री कहती थी वह बादमाश है झूठा है। सचमुच स्त्री उन्माद में थी। शक्ल की बुरी रङ्ग की काली और तुर्रा यह कि वह गर्भवती भी थी। सोच सकते हो कितनी भद्दी होगी? खैर हम कुछ लोग मिलकर उसके पति के पास गये। पति एक क्लर्क था। कुछ पढ़ रहा था। हमने जाकर दरवाजा खटखटाया।

स्त्री को देखकर मुझे यही विस्मय हुआ कि वह कितनी उन्मत्त थी। देखने में उसका कामातुर रूप वास्तव में असन्तुष्ट सा हाहाकार कर रहा था। पुरुष का शरीर उसके मूल्य का मापदण्ड नहीं होता। नारी का अपना शरीर ही इस समाज में उसका एकमात्र सहायक है। सौन्दर्य और वासना का मेल ही यह संसार सह सकता है। वह स्त्री जो विवाह के बन्धन में पति को सब कुछ अर्पित कर देती है उसका आधार ठोस और भौतिक है। कल्पना की सुन्दरियों से प्रेम करने वाले अपने नैतिक व्यभिचार को छिपाने के लिए ही संसार को माया कहते हैं। स्त्री की वह अतृप्ति ही कदाचित् उसके नारीत्व का एक सत्य था जिसे वह खोलने में झपती हुई अपने पति के यहाँ दासीत्व का अपना अधिकार माँग रही थी। हमारा समाज उसे वह भी नहीं दे सकता क्योंकि उसके पास कुछ भी नहीं है। वह स्वयं कंगाल है किन्तु उसे अपनी दुर्गन्ध पर ही भीषण अभिमान है।

सामने खड़खड़ हुई। उसके पति ने दरवाजा खोलकर हम लोगों को बिठा लिया और अंगरेजी में बातचीत करने लगा। औरत इस पर क्रोध से पागल होकर ऊलजलूल बकने लगी कि मैं तेरा खून पी जाऊँगी मैं तुझे जान से मार डालूगी। तू कमा-कमा के रंडियों का पेट भरता है तभी मुझे निकालना चाहता है। मैं तेरा भण्डा फोड़ दूँगी। आदि

आदि। पति ने सुना और मुस्कराकर मुझसे अङ्गरेजी में कहा— आपने सुना? क्या यह औरत आपको पागल नहीं लगती?

तुम बताओ प्रकाश मैं क्या जवाब देता? न मैं पति को जानता था न पत्नी को। पति की तरफ से बोलता तो सब कहते मर्द कुछ करे कोई कुछ नहीं कहता और स्त्री की तरफ से उठता तो पच्चीस उगलियाँ उठतीं कि औरत मिली और झट उसके साथ हो लिये। जैसे उसका पति कुछ है ही नहीं।

उस रात स्त्री ने अपने आपको उसकी दया पर पलने वाली भिखारिणी कहने में जो संकोच किया उसे देखकर मुझे विश्वास हो गया है कि नारी भी नर की भाँति ही अपना स्वाभिमान रख सकती है। युगान्तर से जो उसे पुरुष की छाया बना दिया गया है उससे वह अपना अस्तित्व अपनी मर्यादा भूल गयी है। यह तो जीवन का कोई कार्यवान् रूप नहीं कि दोनों का एक दूसरे की उपेक्षा करना ही उनकी सत्ता की पूरी परख है। मैं जानता हूं यह संघर्ष केवल इसीलिए है कि विश्वासों का अहाता ऐसी शान्त जगहों से बाँधा गया है जिसने तारतम्य और सामंजस्य को जगह जगह अनुचित रूप से काट दिया है। किन्तु जिसके पास लागत नहीं है वह कभी नया घर नहीं बना सकता। परन्तु इतिहास ने कभी पाँव को रोका नहीं।

लड़-झगड़कर अन्त में स्त्री ने एक कोठरी बन्द करके भीतर से ताला लगा लिया क्योंकि उसे भय था कहीं सबके चले जाने पर वह उसे फिर मारे नहीं। भीतर से वह गालियाँ देती रही और पति ने मुस्कुराकर कहा— आपकी सेवाओं के लिए धन्यवाद। मैं तो उसे निकालता नहीं। जब उसे छिर्द उठती है तब भाग जाती है आपने अच्छा किया कि मेरी पत्नी फिर मुझे सौंप दी।

मुझे उसकी आकृति पर कुटिल रेखा सरकती दिखायी दी। मैं

लौट आया। उस रात भर स्त्री पुरुष के स बन्ध का घोर विवेचन जीवन में इतनी तन्मयता से मैंने पहली बार किया।

दूसरे दिन घर लौटते समय एक अजीब बात फिर देखी। तुम्हें याद होगा अमरनाथ एक अधेड़ आदमी है। सब उसका मज़ाक उड़ाते थे कि अभी तक उसका याह ही नहीं हो सका था। योरप में क्वाँरा रहना एक गर्व की बात समझी जाती थी। हमारे देश में स्त्रियाँ उसे आदमी नहीं समझतीं जिसके कोइ पत्नी न हो। पुरुष जब तक स्त्री को अपने अधिकार में नहीं रख सकता स्त्रियाँ उस पर हसती हैं। जङ्गली पशु को ज़ंजीरों से बाँधकर ही पालतू बनाया जाता है। हमारे देश में एक समझ ार वर्ग भी है जिस वर्ग के सदस्य सिर झुकाकर हारकर समझौता करने को सदैव त पर रहते हैं। उ होने देखा है कि जिन आधारों पर व खड़े हैं वह केवल अपनी सत्ता मात्र रखता है। यदि उसमें परिवत्तन किया जा सकता है तो वह चित्र ही मिट जाता है जिसका रूप अभी तक वे अपने मस्ति क में चरम स य के रूप में ग्रहण किये हुए हैं। जब तक मनुष्य समाज को रिश्वत नहीं देता तब तक उसे भीख का अधिकार भी नहीं मिलता। अब संसार कहता है उसके क्या नहीं हुआ। पारसाल उसकी शादी हो गयी। मुहल्ले में एक लड़की थी करीब सोलह सत्रह वर्ष की। एक उसके छोटा भाई था। माँ बाप मर चुके थे। चाचा ने पाला था। चाची कर्कशा थी। बचपन से ही लड़की भूखी रखी गयी। किसी ने उसकी चिन्ता नहीं की। मुहल्ले के आवारे लड़कों ने उसे पहले से भाँ रखा था। इधर वह चौदह की हुइ नहीं कि यारों ने उसके सामने मिठाइ के दोने सजा दिये। आजतक की जितनी सतियों की कहानियाँ मिलती हैं उनमें व स्त्रियाँ या तो राजघराने की थीं या पू य ब्राह्मणों की रिश्तेदार। कभी तुमने बचपन से ही ग़रीब और अपमानित लड़की को भी सती होते सुना है? हुआ वही जो होना था। लड़की का तो इस तरह पेट मज़े से

भरने लगा। बात धीरे धीरे मुहल्ले में फैल गयी। चाचा झक मारते रह गये कल तक भतीजी को भूखा मारने में जिनकी आत्मा न तनिक भी कसक नहीं लायी आज उनकी मांस की नाक के मौजूद रहते भी इज्जतवाली नाक कट गयी। यह नाक तब नहीं कटी जब अफसरों के सामने उन्होंने उसे रगड़ दिया। इसलिए कि यदि वह यही नहीं करते तो उनका पेट कैसे भरता। पेट है तो उन्हीं का है। लड़की को उसे भरने के लिए कोई भी अधिकार वे नहीं दे सकते। देश की स्वतन्त्रता बेचकर वे अपना ईमान बनाये रखना चाहते हैं। कहां है ऐसी पददलित नारकीय सत्ता का न्याय? कहां है मनुष्यता का अपना सहेजा परम्परा का दुलार? कुछ नहीं केवल पराजय झूठ एक दूसरे को धोखा देने की छलना। गँदले पानी में रहने वाले मेंढक क्या जानें कि पानी का स्वच्छ प्रवाह क्या है? आँख खुले से मुँदे तक जिनका जीवन एक वास्तविकता को दूर रखने का पाखंड है वे दीवाल तोड़कर खिड़की क्या बनायेंगे? और लड़की तन भी नहीं बेच सकती? उनकी स्त्री ने और किया ही क्या है? एक दासीमात्र ही तो है वह। वही चाची भी शर्मा कर चुप हो गयी। लेकिन लड़की को तो ब्याहना था। क्या जाने किस दिन चाचा नवासे का मुँह देखते और जमाई का पता नहीं चलता। उन्हीं दिनों अमरनाथ दिल्ली से आगरे आया था। चार साल बाद जब वह लौटा तो चाचा ने उससे दोस्ती की। हम उम्र थे कुछ देर भी नहीं लगी। घर ले गये लड़की दिखायी। वह बेचारा पसन्द नापसन्द क्या करता? उसे तो क्वाँरपन तो मिटाना था। तैयार हो गया। शादी हो गयी। मुहल्ले के लोगों ने उसे खूब भड़काया भी मगर वह यही समझता रहा कि मुझे क्वाँरा बनाये रखने के लिए बदमाशों ने गिरोह बाँधकर षड्यन्त्र रचा है।

विवाह के समय वह पैंतालीस साल का था। बाल सफेद होने लगे थे, बल्कि महाशय आगे से गंजे भी थे। शरीर की गठन लटक

गयी थी। बीबी सोलह एक की जिसका यौवन इतना लुटकर भी अग णित रत्नों से भरे कोष के समान था। समय अपने हाथों से जिसे लूट रहा हो उसे मनुष्य यह निर्बल ज तु क्या छीन सकेगा? पुरुष अपने को स्वामी बनाकर भी जब अपनी प्राकृतिक वासना से उसके सामने धिधियाता है तब उससे बढ़कर कौन सा प्राणी है जिसे तुम घृणित समझ सकने क असम्भव काम कर सकते हो?

आज वह सोलह वष की लड़की अपनी जवानी का जवानी से संतु लन नहीं कर सकती। दान का पशु ऋधा रहने का है जैसे कोइ ।ाऽ। जब मालिक की मर्ज़ी हुई गाभिन करा ली अन्यथा कुछ नहीं का यह अभिशाप हमारे सस्कारों का सबसे ब । मोल है। गर्म गर्म वासनाओं पर ठंडा पानी डालकर उससे कहा गया है कि भाप नहीं निकलनी चाहिए क्योंकि भाप में शक्ति होती है जो इस्पात को फाड़कर बाहर निकल जाती है।

और लड़की चुपचाप सब मानकर अपने कर्मों को पाप समझकर ग्लानि से दबी जाती थी। मुहल्ले का हर लड़का उसे देखकर किच किचाता था और अब वह सबके सामने आँख झुकाती थी। उसका छोटा भाई फिर भी सड़क पर मारा मारा घूमता था और किसी ने दो पैसे दिये नहीं कि वह उसी का खत बहिन के हाथ पर रख देता। बहिन पीटती वह रो देता और फिर सड़क पर भाग आता। छोटा सा बच्चा है सात आठ साल का।

मुहल्ले में गज्जू नाम आज से नहीं सात साल से मशहूर गुण्डों में लिया जाता है। उसने उस लड़की को कहीं भी देखा नहीं कि बकना शुरू कर देता। अब भूल गयी है महारानी? कल तक तो हमने नहीं देखा तो खाँस खाँस के बुलाया करती थी।

वह सुनती और सर झुकाए चली जाती। शादी के पहले उसको । दो प्रेमियों को लड़ा देने में खास मज़ा आता था। किसी भी धर्म के

हिसाब से वह पाप था। क्योंकि धर्म का आधार नारी की शारीरिक पवित्रता है। यह पवित्रता वास्तव में पुरुष का कुटुम्ब बनाये रखने का मूलमन्त्र है। जब स्त्री उच्छृंखल हो उठती है तब शृंखलाएँ तड़तड़ाकर चटक जाती हैं। किन्तु जहाज जब समुद्र में अकेला चल निकलता है तब उसे पानी की अधिक शक्ति सहनी पड़ती है। मैं उन लोगों को भी जानता हूं जो कहते हैं कि नारी ने आराम से रहने के लिए पुरुष को इतने अधिकार दिये हैं। हिन्दुस्तानियों ने भी आराम से रहने के लिए ब्रिटिश साम्राज्य पर इतना भार छोड़ दिया है। सभ्यता सिखाने की आड़ बनाने वाले यह अंधकार के प्रेत वास्तव में एक दूसरे का गला घोंट सकते हैं क्योंकि उनमें उनके स्वार्थ लिप्त रहते हैं। और कुछ नहीं। यह कुछ नहीं मुझे पागल बना रही है क्योंकि शून्य पर टकटकी लगाकर साधना करने के व्यक्तिगत मोक्ष से मैं घृणा करने लगा हूँ। धार्मिक रूप और रीति से सती बनी रहने के लिये उसे जीवित रहने का कोई साधन ही न था। मैं पूछता हूं क्या जवानी बेचना पाप है या कुत्ते की तरह निरीह खा पीकर मर जाना? तुम कहोगे रूखा सूखा खाकर और पवित्र रहना ही मनुष्य का सदाचार आचरण है। लेकिन जो ऐसा उपदेश देते हैं वे न भूख की व्यथा जानते हैं न यही समझते हैं कि सुख को जो अनुचित प्रेरणा होती है उसमें उचित साधनों से प्राप्त आनन्द से कहीं अधिक बल और उत्तेजना होती है।

और फिर वही गज्जो यहीं कहीं ताक लगाये बैठा रहा होगा। लड़की घर में अकेली थी। अमरनाथ कहीं गया था। जबर्दस्ती गज्जो उसके घर में घुस गया और उसे दबाने लगा। पहले तो लड़की मना करती रही लेकिन बाद को जब वह यह धमकी देने लगा कि तमाम पुराना किस्सा खोल देगा तो वह कांप गयी। समझती थी कि अमरनाथ को कुछ भी नहीं मालूम। अब उसे शोक होता क्या दुख सहकर भी उसने इस चादर को कोरा रखा? हिन्दू समाज में बहुत-सी जवान

विधवा नहीं होतीं ? यदि अमरनाथ जान जायगा तब वह क्या करेगा ? वह उसे घर से लात मारकर निकाल देगा। और संसार कहेगा ठीक है। ठीक तो शायद वह स्वयं कहेगी। परम्परा का मैल क्या शीघ्र ही जा सकता है ?

आज यदि वह पवित्र बनने का प्रयत्न भी करे तो उसे स्वीकार करने को तैयार नहीं होगा। सारे पाप धुल सकते हैं एक यही पाप नहीं धुल सकता ? यद्यपि इसका पीछे कोई चिन्ह तक नहीं रहता। क्षण भर का वह शारीरिक आनन्द ही जिसकी चरम अभिव्यक्ति है वह आत्मा का पाप कैसे हो सकता है।

गज्जो ने धमकी दी कि वह उसकी पहली पालों का काला चिट्ठा सब के सामने छपवा कर बटवा देगा। वह झुक गयी। गज्जो के दोस्तों को मालूम था ही। इस जतन से कि गज्जो फिर गोता मारकर मोती निकाल लाया उन्होंने बाहर से कुण्डी चढ़ा दी। हाल के हाल में मुहल्ले वाले बिरादरी वाला की भीड़ इकट्ठी हो गयी।

परसों वाला क्लर्क भी आ गया। आखिर दरवाज़ा खोला गया। गज्जो निकला। अब क्या था ? घर घर खबर बिजली की तरह फैल गयी। औरतों के झुंड के झुंड आने लगे। क्लर्क साहब ने आगे बढ़कर उस लड़की का अपराध सब के सामने खोल दिया। क्लर्क साहब का चरित्र अच्छा समझा जाता था। इसी समय अमरनाथ भी लौट आया। उसने भी सुना और क्रोध से पागल हो उठा। तीर की तरह भीतर घुसा जैसे जान से मार डालेगा। मगर भीतर घुसकर देखा तो चुप रह गया। लड़की निस्सहाय सी बैठी थी। अमरनाथ ठिठक गया। उसने देखा जैसे वह लड़की बिजली से चोट खाकर स्तब्ध सी सुन्न पड़ गयी थी। एक बार उसने अपनी ओर देखा एक बार उसकी ओर। मुहल्ला बाहर इकट्ठा हो गया था जैसे इससे बढ़कर स्त्री के लिये कोई पाप नहीं हो सकता।

हमारा पाप पुण्य परखने का नैतिक ज्ञान इतना कलुषित और संकुचित हो गया है कि एक स्त्री पुरुष के मौन सम्बंध पर ही धर्म की दीवार खड़ी करते हैं। अमरनाथ को एक एक कर याद आया। मुहल्ले की चार भाभियाँ एक बार जब वह क्वाँरा था तब उसकी क्या न थीं? और आज भी कोई गज़ों से कुछ नहीं कहता। फिर इस लड़की ने ही ऐसा क्या अपराध किया है। आखिर बचपन में ऐसी भूल कौन नहीं करता?

उसने देखा वह फूट फूट कर रो रही थी। उसने उससे कुछ भी नहीं कहा। जाने क्या उसका मन पसीज उठा। इतने दिनों में वह उस लड़की के बारे में सब कुछ सुन चुका था। घृणा के स्थान पर उसे सदा उस पर करुणा ही आयी।

बाहर लोगों ने तय किया कि अमरनाथ को अगर बिरादरी में रहना हो तो वह उस लड़की को घर से निकाल दे। अमरनाथ बाहर आया और उसको देखकर क्लर्क साहब ने घोषणा को दुहरा दिया। मुन्नू की बूढ़ी बूआ है न उसका कथन देव वाक्य की तरह स्त्रियों में चलता है। उसने सीधे-सीधे शब्दों में अमरनाथ से उन्हीं शर्तों को दुहरा दिया। लेकिन अमरनाथ ने थोड़ी देर तक कुछ भी उत्तर नहीं दिया। उसने सिर उठा कर देखा। लोगों के मुख पर घृणा तिरस्कार, और विक्षोभ के चिन्ह थे। वह तनिक भी विचलित नहीं हुआ। इतनी बड़ी बात उस पर ऐसे फिसल गयी जैसे चिकने घड़े पर से पानी। आज उस पर अधिकारी होने का दायित्व था। उसकी बुद्धि पर एक लड़की का जीवन था। क्या उसका मान एक स्त्री के वेश्या होने पर जीवित रह सकेगा? जब वह गर्मी और सूजाक में तड़प तड़प कर जान देगी उस समय किस मुख से वह स्वर्ग की सीढ़ी पर चढ़ सकेगा? संसार की कोई स्त्री उससे विवाह करने को तत्पर न थी। वह एक फस

गयी ही सी जो उस पर आश्रित है उसे वह कुचल दे क्योंकि उसे इसका अधिकार मिल गया है ?

सामने क्लर्क खड़ा था। अमरनाथ जानता था कि इस लम्पट के भीतर का विष ही ऊपरे पुण्य के ये झाग बरसा रहा है। इन घड़ों के मुँह इतने सँकरे हैं कि भीतर हाथ देकर अच्छी तरह इन्हें मांजा भी नहीं जा सकता। और वह खड़ा रहा जैसे कुछ नहीं हुआ। सने कहा—जो हो गया सो हो गया। अब अपने अपने घर जाइये।

नहीं बूआ गरजीं तुझे उस कुलटा को निकालना पड़ेगा। ऐसी भी लुगाई की क्या गुलामी ?

किन्तु अमरनाथ ने कड़क कर कहा—जाओ जाओ घर जाओ अपने समझीं! जब तुमने मुझ बूढ़े से इसकी शादी करायी थी तब वह जायज था ? और अब इस छोटी-सी गलती पर इसे मैं निकाल दू तो इसका क्या होगा ? दर दर मारी मारी न फिरेगी ? जाओ जाओ। वह मेरी बहू है किसी का क्या लेन-देन है ?

इस पर सबने दाँतों से जीभ काट ली। मगर क्लर्क साहब बोल उठे—चलो ठीक है। तुम बूढ़े हो तुम्हें तो रसोई दारिन चाहिए थी सो मिल गयी। बीबी की सब इच्छायें पूरी करने के लिए तुमने व्याह ही कर किया था!

पाप की यह पुकार एक षड्यन्त्र है। इसमें हमारा खोखलापन सारे आदर्शों को ठोकर मार कर नङ्गा नाचने लगता है। आये कोई और अपनी प्रशस्ति के रक्त लिखित गीत सुनाये। आज मानव का सम्पूर्ण पतन हो गया है। इस वेदी पर नरबलि के अतिरिक्त किसी की भी प्रशंसा नहीं की जा सकती।

अमरनाथ ने सुना और भीतर ही भीतर वह लज्जा ने सिकुड़ गया। जिस पौरुष पर बच्चा पैदा भर करने को गर्व करके भारतीय डींग मारते हैं उसका आजकल एक मात्र उपयोग समझते हैं वह भी उससे छीन

लिया गया था। जिसके बल पर नारी मुह खायी सी भालू की तरह उसके पीछे दौड़ती है उस पर ही इस क्लर्क ने घोर प्रहार किया था।

सामने यह एक विचित्र व्यक्ति था जो पाप को घर में देखकर भी उसे पालकर बढ़ा रहा था जैसे उस लड़की ने कुछ नहीं किया।

जन समाज ठठा कर हस पड़ा। लोग अपने अपने घर जाने लगे। उनकी इच्छाएँ पूरी नहीं हुईं। शाम तक सब के मुह पर यही बात रही। भगवान् राम तक यह नहीं कर सके थे। भीष्म पितामह तक के पुरुषार्थ को शिशुपाल ने नपुंसकता कहा था।

तुम क्या सोचते हो? इस दाम्पत्य जीवन का प्रेम कहां है? यदि प्रेम दया है अथवा बांट तौल है तो वह न रहस्य है न कोई अद्भुत कल्पना। क्या अमरनाथ बनना कठिन है या क्लर्क साहब? मैं तो दोनों को ही कोई बड़ी बात नहीं समझता। हमारे पास कुछ हैं ही नहीं जिससे हम मन बहलाय अतः यही एक चक्कर है जिसमें निरंतर दौड़ते रहते हैं मगर बाहर नहीं निकल पाते और अपनी ही पग ध्वनि से डर कर बार बार मूर्छित हो जाते हैं।

लिखते लिखते थक गया हूँ, फिर कभी लिखूँगा। भाभी से नमस्ते कहना। मेरी राय है तुम पहले प्रेम न करके कैदियों की तरह ही सही साथ साथ रहने लायक समझौता कर लो वर्ना छोड़छाड़ दोगे तो जानते ही हो क्या होगा! प्रेम तो एक लाचारी का मसविदा है। अब नहीं है तो कल हो जायगा और कुछ नहीं है तो वही करना होगा। थोड़े दिन बाद तुम्हारे अनुसार प्रेम की नयी परिभाषाएँ बन जायँगी।

शेष सब कुशल है। एक बात अवश्य है। कैसा भी माननीय समझौता हो वह परोक्ष रूप में होता पराजय ही है। उत्तर देना।

तुम्हारा ही
सोमनाथ

धर्म का दाव

मुल्लाजी ने हाथ उठाकर चिड़ियों को उड़ाने के लिए किया—श ! श !

चिड़ियों ने कोठरी में दो चक्कर लगाये और फुर्र हो गयीं। खोम्चे वाले गबदू ने हसकर कहा—क्यों मुल्लाजी तुमने घर नहीं बसाया तो जमाने में किसी को भी नहीं बसाने दोगे ?

उसके स्वर में व्यंग था।

अमा भला क्या कोई बात है ? जब देखो तब ली जरा सी रुई और उड़ गयीं घोंसले की तरफ। इतना ही नामा होता तो खुद न गिरस्ती बसाते ! जी जी करके तो लड़ाई काटी है उसका नाम यहाँ इन्हें दिल्लगी सूझी है !

तो क्या हो गया ? गबदू ने एक नजर बगल में रखे खोम्चे पर मारी और फिर छज्जे पर घिसी ईट से खाने काढ़ने लगा।

मुल्लाजी ने देखा। मतलब है हम अपने रोजगार को थोड़ी देर के लिये टाल रहे हैं लिहाजा आप भी आइये।

हाथ की रुई वहीं छोड़ दी और खांस कर बाहर आ बैठे।

गबदू ने गिट्टियाँ बाँट दीं।

देखो मुल्लाजी गबदू ने कहा—तुम्हारी लाल रहीं न ?

अबे हमें क्या बता रहा है ! हमने तुझे खेलना सिखाया है।

भगवान् कसम ! ये अच्छी दिल्लगी है।

खेल शुरू हुआ। गबदू ने कहा—अब तो जाड़े आ गये हैं मुल्लाजी ! खूब काम चलता होगा ?

"चलता ही है। हमारा काम भी कोई काम है। दुनिया की गरज

रखते हैं। मुल्लाजी हँसे और हाथ बढ़ाकर भीतर से हुक्का खींचकर बाहर धर लिया और दो कश खींचे।

तुम ने सुना? गबदू ने चिलम को हाथ पर उ ाते हुए कहा।

क्या?

'यही कि कारखाने टूट रहे हैं?

अभी नहीं!

'क्यों लड़ाइ तो खतम हो गई है। यह सरकार अब हाथी क्यों पालेगी?

'तो क्या हो ा?

मजदूर निकाले जा रहे हैं। बड़े साले मस्ता रहे थे। अब देखेंगे क्या होता है?

उसके स्वर में एक व्यग मिश्रित प्रसन्नता थी। एकाएक किसी ने पीछे से कहा—मुल्लाजी राम राम।

राम राम भैया मुड़ कर देखा। गोवि द खड़ा है। कंधे पर तीन साल की लड़की चिपकी है।

आओ बैठो। मुल्लाजी छज्जे की ओर इंगित करके कहते हैं। क्यों क्या बा ा है? अमा! लुगाइ से हो गई?"

गबदू हसा। भला कोई बात है?

क्यों? आखिर कुछ बात भी तो हो। यह मुर्दनी? यह जवानी? कोई बात भी होगी ही।

बात तो कुछ नहीं मुल्लाजी गोवि द छज्जे पर उखरू बैठकर बोला। गमछे से मुँह का पसीना पोंछा। लड़की ने तग कर रखा है।

क्यों? क्यों? मुल्लाजी ने उ सुक होकर पूछा। ब ची के गाल फूले फूले थे, ऐसे जैसे कि उस उम्र के बच्चा के नहीं होने चाहिये। लेकिन बाप त दुरुस्त है एक झलक एक रोज माँ की भी देखी ही है। [illegible] तो क्या [illegible]?

बालिका ने उल्टे हाथ से आँखों को मसला मिचमिचायी और नीचे का ओठ जैसे अपने आप खदक उठा।

क्या बात है बेटी बिन्नो ! मल्लाजी चुमकार कर पूछते हैं। हम तुमको मिठाई देंगे। रोती क्यों है बता न ?

बस ब च्ची ने जोर से रोना शुरू कर दिया। मुल्लाजी नहीं जानते बालका का दिमाग कैसा होता है। चक्कर में पड़कर उधर देखा। गबदू ने कहा कहो गोवि द जमेगी ? परसों दिवाली है न ?

अब के तो जरूर खलूगा भैया नहीं तो काम कैसे चलेगा। अब रोजगार खतम ही हो गया। तब इसकी मैया ने रोज रोज इसे जलेबी की आदत डाल दी थी। अब सूखी रोटी की बात है। गले के नीचे राँड़ के उतरती ही नहीं। बस दिन रात रें र लगी रहती है। कुछ भी हो अब के तो किस्मत अजमानी ही होगी।

मुल्लाजी ने फिर सोलह कौड़ी पर नजर जमायी। गबदू हँसा। बोला पक्की ?

पक्की। गोवि द ने उत्तर दिया। मुल्लाजी ने उपेक्षा से कहा अब चलोगे भी ?

गबदू फिर खल पर झुक गया।

—२—

घर घर में दीये जल रहे थे। सड़क जगमगा रही थीं। यह इस साल की दूसरी दिवाली थी। पहली जर्मनी की हार पर मनवाई गई थी दूसरी अब धर्म के कारण मनाई जा रही थी। सड़कों पर लोग रोशनी देखने के िए घूम रहे थे।

मुल्लाजी की कोठरी में जुआ हो रहा था। पांसा फका जा रहा था।

गबदू ने जोर से फेंक कर कहा पौ बारह।

ठिक्के। गोविन्द ने अँगूठा दिखाकर कहा—देख बेटा। मैं जानूँ अभी पूरी तरह से तो नहीं फूटीं ?

मुल्लाजी ने झुक कर देखा और कहा—दुग्गी।

गबदू का हाथ काँपा। गोविन्द ने हाथ पसार कर कहा—बड़ा ईश्वर।

दबा लिये पैरों के नीचे पैसे। और आँख मींचकर फिर पांसे को उठाकर कहा—हार जाऊँ तो एक न एक खूा होना लाजमी है। पौ बारा !

स्वर जब लौटकर पांसे पर आ टिका सचमुच पौ बारा था।

गोविन्द की आँखों के सामने एक बार पत्नी का चित्र घूम गया। आज वह उसकी खँगवारी गिरवी रखकर रुपये लाया था। लेकिन अब वह तीन बनवा सकता है। मन ही मन सोचता—मजाल है कि हार जाऊँ। पंडित का भेजा फोड़ दूगा सालेका। सीधा दिया है चार आने दच्छिना के धरे हैं। कोई दिल्लगी है? हार कैसे जाऊगा। पंडित न कहा था कि दौज तक मिट्टी को छूले तो सोना हो जायेगा और उसके बाद

उसके बाद की ऐसी की तैसी। उसके बाद जुआ खेला तो चूल्हे में जला दूगा उस हाथ को। बैठी होगी बेचारी बड़ी आस से। जै माँ लच्छमी

मुल्ला और गबदू हारे बैठे थे। उदास होकर मुल्ला ने गबदू की ओर देखा। गबदू खिसिया रहा था। बोला—बस ? बटोर के चल दिये ? जैसे दिवाली खतम हो गयी।

कसम है गोविन्द ! दगा मत करना। यारी में खलल आ जायेगा। यारों के बिना जहान सूना है। समझ लो लुगाई का क्या भरोसा। पेट भरोगे गहना दोगे तब तक रहेगी नहीं किसी और के जा बैठेगी।

गबदू ने ताव से कहा—अजी हो ली मुल्लाजी। हमें न मालूम था

वरना हम नहीं आते तुम्हारे यहाँ। सौगंध है नत्था के यहाँ जाते तो कलेजा भी तर रहता।

अब रोता क्यों है? गोविन्द ने आगे सरक कर कहा—मैंने तो सोचा कि यारों क ज्यादा चूना नहीं लगाना चाहिये। कहीं और जाकर खलो। मेरा तो भाग जाग गया है कसम से। एक भी दाँव हारा हू?

नहीं तो—गबदू ने काँप कर पूछा।

मैंने पंडित से पूछा था।

तो तू आज शहर के बड़े सेठों में क्यों नहीं गया? वहाँ तो छक्के छुड़ा देता।

एक बार आशा काँप उठी। क्या यह नहीं हो सकता?

मगर मुल्लाजी ने कहा—उसने कौन देगा? शुरू में भी तो हजार दो हजार होने चाहिये?'

देवा कसम' गबदू ने तैश में आकर कहा—तुम भी चुगद हो मुल्लाजी। वह प्रातःकाल जब खोंम्चा लगा कर बचता है तो आकर्षित करने के लिए जलेबी गरम के स्थान पर आवाज देता है—जलेबा गरम। इसी से जोश में उसके मुँह से 'देवी' की जगह देवा निकल गया।

पल भर को गोविन्द की आँखों के सामने समा बँध गया। वह कपड़े बदलकर सेठों में घुसा है और जुआ हो रहा है। फिर याद आये किस्से। एक बार एक बाबू सेठ के यहाँ गया सेठ बैठा कुछ सोच रहा था। पूछा—क्या आये हो बाबू?

'जुआ खेलने।

अण्टी में क्या है? सेठ ने पूछा।

पाँच हजार।

सेठ हिकारत की हँसी हसा। जूती उठाकर बोला—शर्त बदते हो? जुआ तो इसके बाद होगा।

किसकी? बाबू ने सहम कर पूछा।

बोलो कल जापानी बम पड़ेंगे कलकत्ते पर कि नहीं ?

पड़ेंगे।

तो देखो कल पड़ गये तो पन्द्रह हजार ले जाना नहीं तो पाँच हजार दे जाना।

जूती उलग्गी पड़ी तब तो पड़ेंगे।

कहते हैं बम नहीं गिरे और बाबू भी नहीं लौटा।

वह मन ही मन काँप उठा। कहीं उसके साथ भी नहीं पड़े तो वह क्या खाकर लौटेगा ?

सेठों को क्या दस हजार की रिश्वत देते हैं एक लाख इधर से उधर करते हैं।

उसी समय गबदू ने फिर कहा— उसका नाम हो जायेगा और ठाठ हो जायेंगे। लड़ाई नहीं रही न सही मगर कण्ट्रोल तो नहीं हटा। पौ बारा

गोविन्द काँप उठा। यह नहीं हो सकता। बाहर नौकर ही नहीं घुसने देंगे। सेठ की क्या बेइज्जती नहीं है कि वह हमसे खेलेगा ?

मुल्लाजी को कोई दिलचस्पी नहीं थी। रुई के पेशगी रुपये ले लिये क्या किया जाये ?

गबदू की बात से गोविन्द का हृदय बल्लियों उछला। मोटरें चलगीं भगवान् का क्या ठीक। कब छप्पर फाड़ दे। दो ही दिन की बात है फिर वही अँधेरा। अब के असली दिवाली आयी है। कमबख्त लड़ाई जरा और चल जाती तो उसने भी लाखों कमा लिये होते। लाखों

वह स्वयं अपनी वास्तविकता भूल गया। मल्लाजी ने अन्तिम दाव मारा। कहा—अब के आ जाओ ?

देखो ! समझ लो।

समझ लिया सब।'

मर्जी तुम्हारी। बीच में नहीं उठने दूँगा। पूरा खेलना होगा। सारी रकम लगा दी है तुमने। दूकान धरते हो!

रुकते स्वरसे मुल्लाजी ने कहा—अच्छा।

अच्छा अच्छा नहीं। पहले कसम है। रहम का काम नहीं। पहले सोच लो।

मुल्लाजी ने सिर हिलाया।

गोविन्द ने पासा फककर कहा—मारा है। पौ बारह।

झुककर देखा। विश्वास नहीं हुआ। बना हुआ हाथ मुल्ला ने पीछे खींच लिया।

देख लो फिर कहोगे मैंने छू दिया है।

देखा। गोविन्द ने आँख फाड़कर देखा। फिर उठाया। हाथ काँप रहा था। गबदू ने उछलकर कहा—सौ रुपये। बेटा एक नहीं ले जाने दूँगा। फिर दुग्गी? मुल्ला और गबदू ठठाकर हँसे।

निकाल दे सब खोल दे अंटी।

मारा जाऊँगा कसम से बहू की खंगवारी है। मर जायेगी। गबदू देख लौंडिया भूख से तड़प तड़प कर मर जायेगी।

लेकिन गबदू हँसकर पैसे गिन रहा था।

क्रोध से व्याकुल होकर गोविन्द ने कहा—मैं पण्डित का खून कर दूँगा।

दोनों ठठाकर हँस पड़े। मुल्लाजी ने कहा—फाँसी चढ़ जायेगा। फिर तेरे बीबी बच्चों का क्या होगा?

गोविन्द को चक्कर आया और अपनी सल्तन के खंडहर पर अपने आप बेजान सा बैठा रहा।

मुल्लाजी कह रहे थे—गबदू! जा बे दो आने के दीये तो ले आ लक्ष्मी माई ने आज जान बचाया है। दिये तो जला दूँ।

गबदू रुपये अंटी में खोंस रहा था। बोला—मारो गोली मुल्लाजी। इस भगवान का भी क्या भरोसा!

—३—

दीये बुझ चले थे। चारों तरफ फिर सन्नाटा छा गया था।

मुल्लाजी बराबर धुन रहे थे। रुई उड़ उड़कर इधर उधर छितर रही थी। उन्होंने द्वार बन्द कर लिया था। एकाएक द्वार पर किसी ने आहट की। आवाज दी—कौन है?

कोई नहीं बोला। मुंह पर का कपड़ा उतार कर दरवाजे का कुंडी उतारी। बाहर देखा—कुछ नहीं। कुत्ता पीठ खुजा रहा था। उफ! क्या सोचा था क्या हो गया। गोविन्द नहीं आयेगा।

लौटकर फिर मुँह और नाक पर कपड़ा बाँधा। और धुनने में लग गये। आवाज झुर्र झट झट झुर्र झट झट करके कोठरी में गूँजने लगी और रुई का छितरी हुई मुलायम रुई का ढेर सामने बढ़ता ही चला जा रहा था।

दिवाली भी हो गयी। दीये भी बुझ गये। मिठाइयाँ भी खतम हो गयी होंगी। लोग सो रहे हैं

झुर्र झुट झुट झुर्र झुट झुट

एकाएक हाथ रुक गया। लेकिन गोविन्द की दिवाली? कैसी मनी होगी उसकी दिवाली?

हृदय में एक टीस हुई। अपने ऊपर एकाएक एक विक्षोभ हुआ। किसलिए चाहिये उन्हें वह पैसा? भूखी होगी बेचारी बिल्लो। रो न दिया होगा माँ का दिल आज बेचारी बच्ची को दो बताशों के लिए तड़पता हुआ देखकर!

किन्तु हाथ फिर चलने लगा। मन का भार एक रुई है जिसे आज वह धुन देना चाहता है क्योंकि उसका अन्त जानकर भी अपना माध्यम वे नहीं समझ पाये हैं।

मुल्लाजी ने व्यथित होकर हाथ फिर रोक दिया। एक बार बाहर आ गये। आसमान में तारे अब भी छिटक रहे थे जैसे किसी ने मुट्ठिया में भर भर कर खील छिखेर दी हो। याद न आयी होगी उस बेचारी ब च्ची को कि भगवान ने आसमान तक में आज खील बिखेरी है फिर हमारे ही घर ने क्या बिगाड़ा है? क्या कहा होगा गोवि न्द ने घर जा कर। कैसे घुसा होगा वह भीतर।

और फिर मुल्ला की चेतना में किसी ने गर्म लोहे का स्पर्श किया। किन आँखों से देखा होगा उस औरत ने अपने शौहर की बरबादी को? किस अरमान से उतारी होगी उसने अपने गले से वह खँगवारी। नहीं दिया अल्लाह ने कहर गिरा दिया। पिघले हुए सीसे से भी भयानक होंगे उसके आँसू जिसमें इंसान की नफरत और औरत की कसम और वह माँ की ममता सब मिलकर चिल्ला उठे होंगे। वही जिन्हें यारों के पत्थर दिल ने ऐसे कुचल दिया जैसे कसाई के हाथ जिन्दी मुर्गा का गला उमेंठकर आधा काटकर तड़फड़ाने के लिए फेंक देते हैं और स्वर न गले से निकलते हैं न बदन में इतना खून ही रहता है कि कुछ नहीं तो कमबख्त आँसू ही बनकर लहराता हुआ घुमड़ आये अर मान का मवाद बनकर वह निकले।

मुल्लाजी भीतर लौट गये। गिनकर देखे। ३२ रुपये थे। उठाकर मुट्ठी में बाँध लिये। एक बार हाथ खोलकर नजर डाली दीये की धुँधली रोशनी में भी कैसे चमक रहे हैं? कैसी तड़प है! कितना पानी! सारी बीमारियों की एक मात्र दवा! सारे दुख दूर हो जाते हैं। स्नेह से फिर मुट्ठी बाँध ली जैसे बाबर ने हुमायूं के लिये अपनी जान की कुर्बानी देने तक में हिचक नहीं दिखायी थी।

पड़ोस में किसी बालक के रोने का शब्द सुनाइ दिया। याद आ गई फिर वह दो मुलायम नजरें। कितनी मासूम भोली व निर्मल।

मुल्लाजी की मुट्ठी ढीली पड़ गयी। सामने ही रुई पड़ी है—सारी

जिन्दगी बीत गयी। फिर यह रौनक कितने रोज की है? इस दफीने का क्या होगा जिस पर किसी की बेबसी का साँप अपना जहर उगल रहा है।

रात के उस सूनेपन में जब मुल्ला ने दरवाजे पर थपकी दी भीतर जागने के स्पष्ट लक्षण थे।

एक औरत ने द्वार खोला।

कौन है?

मैं हूं। गोविन्द है?

क्या है? औरत ने रूखे स्वर से पूछा।

यह रुपये दे देना उसे। कहना मुल्ला को जुए के रुपये नहीं चाहिये। यह कोई बनिया नहीं है कि दूसरों का गला काट कर चिराग जलाये। गोविन्द की बच्ची भूखी रहे और मुल्ला खुशियाँ मनाये यह नहीं हो सकता।

लेकिन उन्हें आ जाने दो। तभी रुपये दे देना।

कहाँ गया है?

'जुआ खेलने। स्वर में भयानक करुणा का अथाह—त्रस्त विश्व रूदन कसक रहा था।

'जुआ खेलने? मुल्ला ने विस्मय से पूछा—पैसा?

अब के मेरी बिछिया ले गये हैं।

परवर दिगार! मुल्ला का स्वर गिड़गिड़ा उठा। स्त्री देखती रही। मुल्ला लौट पड़ा। उसे हाथ में रुपये ऐसे लग रहे थे जैसे उसने जलते तवे पर हाथ रख दिया हो और छुड़ाये न छूटता हो। उसका हृदय तेजी से धड़क रहा था।

एकाएक मुल्ला चिल्ला उठा—गोविन्द!

सड़क पर पड़े हुए आदमी में तनिक भी चेष्टा नहीं हुई। मुल्ला ने देखा उस समय गोविन्द के मुँह से बू आ रही थी। उन्हें ऐसा लगा

जैसे वह आज सारे जीवन का जुआ हार चुके हों। रुपया चुपचाप उसकी जेब में रख दिये और सिर झुकाये हुए बढ़ गये जैसे जवानी में वेश्या के कोठे से उतर कर झेंपते हुए चल जाते थे।

मृग तृष्णा

ईद की बहार में जीवन का दुख जैसे समाप्त हो गया। चारों ओर ऊधम सा मच उठा। वृद्ध सत्तार अपनी कोठरी से बाहर निकल आया। उसके सिर पर पटटे कढ़े हुए थे। शरीर पर पुराना सिकुड़नेदार मैला सा कुर्ता था।

पड़ोस में खाँ साहब का मकान था। बगल में ही राशनिङ्ग के दारोगा थे। मैदान बाजार के पिछवाड़े से घिरा हुआ था। उधर जीवन बिकता है बराबर शोर होता है यहाँ तक कि हाहाकार में आदमी अपने को आदमी समझना छोड़ देता है इधर सन्नाटा। उस सन्नाटे में मैले कुचैले कपड़े पहनने वाले ताशेवाला का सूखा पंजर ताशों के घोर अट्टहास में अपने आपको पीटे चला जा रहा है। समझ नहीं आता कि यदि यह कोलाहल भी उसके जीवन की हलचल नहीं है तो फिर किस मर्यादा के चरणों पर सिर कटा देने के लिए समस्त अभिलाषाएं अभी जीवित हैं? और स्वर प्राचीन मुगलिया दीवारों से लौट कर उठता है और मैदान के ऊपर गुम्बज सा छा जाता है। बच्चे खेल रहे हैं। उनके कपड़े अत्यन्त चमकदार हैं। उन्हें आज सिमइयों के प्राप्त करने की खुशी हो रही है। वह मिहतरानी हिन्दू है तो क्या सिमइया के लिए प्रात से ही अपने बच्चों को खाँ साहब के द्वार पर छोड़ गई है।

सत्तार के जीवन ने भी कभी हलचल देखी होगी। आज अब उसे

भूल गये हैं। अब सत्तार की सत्ता का एक मात्र अपेक्षणीय अन्त है—मृत्यु।

वृद्ध सत्तार खाँस उठा। बालकों में कैसा उन्माद है। उसके शरीर में बहते गर्म रुधिर के लिए इसी कोलाहल की आवश्यकता थी क्योंकि उनके मन का कोई भी भाग जर्जर नहीं है। सब कुछ चाहिए यह सारी दुनिया उन्हीं के लिए है। और सत्तार ने महसूस किया कि वह उस कुत्ते के समान है जो घूरे पर से उठकर चाँद की ओर देखकर भूक भी चुका है किन्तु जिसका कोई परिणाम नहीं निकला। स्वर एक तीर की भाँति देखते देखते उठकर कहीं अपने आप खो गया।

वृद्ध बड़बड़ा उठा— पहले । फिर मन ही मन दोहराया—

पहले आती थी हाले दिल पर हँसी अब किसी बात पर नहीं आती।

वृद्ध ने आँख पोंछ लीं। कभी कभी वह शोर थम जाता फिर मचने लगता। उस अनवरत बहती घुटन में जैसे एक कशमकश थी जैसे किसी की गर्दन दाबने पर वह तड़पती हुई पंजे फेंकती है या कि छिपकिली की कटी हुई दुम अपनी जिन्दगी के पाप के कारण असह्य रूप से छटपटाती है।

वृद्ध उठकर कोठरी में गया। आबखोरे से पानी पिया। बाकी को फिर सुराही में डाल दिया। नल तो दूर है। बुढ़ापे में पानी भर कर लाना कोई हसी ठठ्ठा नहीं। जितनी देर चल जाये उतना ही अच्छा। उसने ठंडक महसूस की। अपनी पुरानी वासकट पहन ली।

बाहर आकर देखा मैदान में एक कुर्सी पड़ी है जिस पर दारोगा साहब बैठे हुए गरज रहे हैं और सामने चपरासी एक बहुत ही गंदे मरियल आदमी को लिए खड़ा है। उस आदमी का चारखाने का तहमद है, दाढ़ी है सिर घुटा हुआ। बदन पर बनियान है। और कुछ नहीं।

दारोगा साहब ने कहा— हाँ जी क्या कहा? फिर मुड़कर उस आदमी से बोले— तो गोया हम भख मारने के लिए तैनात किये गये हैं। आपकी यह तो है हुलिया जिस पर चोर-बाजार भी करेंगे और नफ़ाखोरी भी। सपने तो रानियों के देख रहे हैं साहबजादे अश्फाक!

जी हुजूर। चपरासी ने झुक कर कहा।

चालान करो इसका।

हुजूर! उस दूकानदार ने कहा— दो पैसे ही की तो बात है। दलियों में मेरा गला न कटाइये। ईद का दिन है अल्लाह आपको

दारोगा साहब ने कर्कश स्वर से कहा— हरामजादे! जानता नहीं यह तू ने जेल जाने का काम किया है?'

माई बाप वह व्यक्ति गिड़गिड़ा कर बोल उठा— मारा जाऊँगा हुजूर! बाल बच्चे भूख मर जायगे।

दारोगा साहब ठठा कर हँसे। जोर से पलट कर कहा— सुना आपने खाँ साहब?

आराम कुर्सी पर लेटे हुक्का गुड़गुड़ाते हुये खाँ साहब ने कहा— क्या हुआ जनाबमन गरीब से कुछ खता हुई?

वल्लाह! दारोगा भारी स्वर से हँसे— ईद के दिन बेईमानी कर रहा था।'

कौन है?

अपने आपको मुसलमान कहता है तिस पर

शैतान की मार हो ज़ालिम पर। खाँ साहब ने तुनुक कर कहा। फिर उनकी खाँसी का कठोर स्वर गूँज गया।

दारोगा साहब फिर जोर से बोले— कहता है बीबी बच्चे भूखे मर जायेंगे।

खुदा न करे, दारोगा साहब! सरकार ने आपको इन्साफ करने के

लिये इंसपेक्टर बनाया है । फिर खखार कर थूकने का शब्द । तब तक दारोगा साहब की सुनने में न मयता।

ईद का दिन है। आपकी तालीम का कायल हूं ।

आप उम्रदराज हों । मैं एक अर्ज करता हूं । ईद के दिन जिसने बेईमानी की अल्लाह उसे माफ न करेगा फिर कमबख्त अपने घर को भी खींचकर फसा लेना चाहता है। उन्होंने क्या जुर्म किया है ?

खाँ साहब ! बूढ़े सिद्दीक ने कहा — छोड़िये भी ।

और फिर बात बदल गइ । दारोगा साहब उठकर खाँ साहब की बैठक में चले गये । कसाई जैसी गठीली देह वाले उनके चपरासी ने उस दूकानदार को चटाक चटाक दो चाटे जड़ दिये ।

छोटी बच्चियाँ ऊपर से झाँक रही थीं । एकाएक खिल खिला कर हँस पड़ीं । एक की पुकार एक दम गूंज उठी— अम्मीजान ! बेचारे को मारा है ।

कहने वाली बच्ची उतर कर जल्दी जल्दी नीचे आ गइ और खड़ी देखने लगी ।

बढ़े सत्तार ने एक सद आह खींची और आसमान की तरफ देखा यह भी देखना था । अल्लाह ! दादाजान गोदी में बैठा कर सुनाते कि तब मुगलों का राज्य था तब फिरङ्गी सिर्फ सौदागर थे और सन् ५७ में हिन्दू मुसलमान एक हो उठे थे कि अङ्गरेजों के पैरों के नीचे से धरती खिसक गई थी । उसे एकदम क्रोध हो आया । क्यों नहीं फिर से एक हो जाते ? बावले ! भूले

और देखा दूकानदार अब भी काँप रहा था । पिटकर भी उसे क्रुद्ध होने का अधिकार नहीं है । ईद के दिन ! कितना मैला !

चपरासी ने कहा— बोल क्या कहता है ?

बच्ची ने पूछा—तेरा नाम क्या है ?

शमशीर, बीबी ! उसका गला भर आया जैसे बालिका में उसे

अपनी बच्ची की प्रतिकृति दिखाई दे गई हो जो गंदी होगी गलीज़ होगी जिसमें सड़ाँध होगी और जो यदि घर बनी तो बनी अन्यथा बाजार से कुल्हड़ में खरीद लाएगी और तब तक चाट चाट कर सब सिमई समाप्त करके मानेगी जब तक कि नाखून सफ़ेद न पड़ जाय और फिर किसी के घर के आगे बजते ताशे के सामने शोर सुनने को जा खड़ी होगी—ऐसे ही जैसे यह बच्ची खड़ी थी ।

शमशीर ! बालिका ने कहा । उदास हो गई और बूढ़े सत्तार के पास जाकर कहा— बड़े मिया ! तुम तो कहते थे कि शमशीर का चलना खेल नहीं जब चलती है तो दोनों तरफ रास्ता साफ हो जाता है ?

वृद्ध सत्तार ने स्नेह से बालिका के सिर पर हाथ फेर कर कहा—मेरी बच्ची ! ईद मुबारक हो ।

मुबारक हो मुबारक हो । बच्ची ने हँसते हुए ताली पीट कर कहा । वह अपनी बात भूल गई ।

वृद्ध ने उसकी बात का उत्तर देना ठीक नहीं समझा । वह जानता था कि यही सरकारी चपरासी पुलिस से पहले रिश्वत खाकर शहर में दंगे मचा दिया करता था । इसी ने एक बार एक शिया औरत पर हमला किया था । और यह वह शमशीर भी कहाँ जो चले ? चले तो वह जिसकी धार पर पानी हो जिसकी लचक में फौलाद की झनझनाहट काँपा करे ।

फिर कहा— हमारी अच्छी कुलसुम ने यह बालों में नीला फीता कैसे बाँधा है ?

यह ? कुलसुम ने कहा— हमें रशीद मियां ने लाकर दिया है । वे बड़े अच्छे हैं ।

लेकिन बेटी यह तुम्हें अच्छा नहीं लगता ।

क्यों ? बालिका ने उदास हो पूछा ।

इसलिये कि तुम एक ऊँचे खानदा न की हो। यह तो फिरंगियों की नकल है। तु हें तो सोना पहनना चाहिए।

ओहो बड़े मियाँ ।

फिर कठोर स्वर सुनाई दिया—

सुअर के ब च्चे चला जा यहाँ से।!

मुड़ कर देखा चपरासी साइकिल पर बैठा शमशीर को पैर से हटा रहा था। और सच ही शमशीर बैठा रहा। चपरासी चला गया था।

कुलसुम ने कहा— देखो बड़े मियाँ एक बात कहूँ ?

कहो बेटी!

एकाएक भारी स्वर सुनाई दिया— बीबी कुलसुम कहाँ चली गई तुम? इधर आओ।

कुलसुम ने भयभीत दृष्टि से इधर उधर देखा और फिर आसमा न में उड़ते हवाई जहाज को देखती हुई सहमी सी भीतर लौट गई।

वृद्ध ने माथे पर हाथ फेर कर एक बार जैसे यादगारों को उभड़ने से रोकने का प्रय न किया और चुप होकर नीचे देखने लगा।

शमशीर ने देखा और जब कोई नहीं दिखा तब सत्तार के पास आ बैठा।

वृद्ध ने ऊबी हुई दृष्टि से देखा। वह जानता था यह भी एक नई दुख की कहानी होगी जिसका अन्त पेट की आग से होगा। न होता पेट न शमशीर आज मि नी के मानि द चटकती। और न टूटे कुल्हड़ की तरह उसे कूड़े पर फका ही जाता।

शमशीर रो रहा था। उसने कहा— बाप मानि द हैं आप। क्या यह इन्साफ है?

सत्तार मन ही मन हँसा—हिकारत की हँसी। कैसा बेवकूफ ह! इतनी हिमाकत कि इसे भी इन्साफ की जरूरत है? इन्साफ को झेलने

के लिये बादशाह की सूरत जिस चाँदी पर जिस कागज पर हो उसकी जरूरत है।

इसी समय एक मोटे से आदमी ने आवाज दी—दारोगा साहब! ईद मुबारक। आप कहाँ छिपे बैठे हो?

आगन्तुक कोई सेठ था। सफेद कपड़े पहने सिर पर खद्दर की टोपी लगाये। गले में सोने की जंजीर एक लड़ी दो लड़ी

भीतरसे आवाज आई—मुबारक हो आपको भी। आया सेठसाहब।

सेठ भीतर चले गये। कौन नहीं जानता कि वे सैकड़ों हजारों का माल हाथ की सफाई से इधर से उधर करते हैं और दारोगा साहब से उनकी पक्की दोस्ती है। पहली छोटी तनख्वाह देकर सरकार डाँट मारती है मगर अधिकार सौंपती है। दूसरी तनख्वाह देकर सेठ जी दारोगा की खुशामद करते हैं और यदि अधिकार नहीं दे सकते तो उन्हें दारोगा की जगह डिप्टी कलक्टरों के ठाट देते हैं। और आज ईद की मुबारकबादी देने आये हैं।

सत्तार फिर हँसा। सारा जमाना एक जाहिल और कमीनी झूठ की बुनियाद पर खड़ा है। वह रोज कालेज के होस्टलों में जाकर झूठ बोलता था। इसी बीच एक बहुत ही मैले कपड़े में रोगन भर कर कहता है—हुजूर के दरवाजे खिड़कियों पर पालिश

नहीं नहीं आगे जाओ

और फिर सत्तार गिड़गिड़ा कर कहता—मालिक बच्चे भूखे हैं।

मिल ही जाता कुछ न कुछ। कहाँ हैं इस कोठरी में बच्चे? शायद चूहे के भी न होंगे। मगर बच्चों के नाम पर ही तो थोड़ी सी इन्सानियत बाकी बची है वरना बूढ़ों को खुदकुशी कर लेनी चाहिए। अगर अल्लाह का नाम कुछ नहीं दे सकता तो बच्चों का ही सही

और उसने कहा—अमाँ! बात क्या है?

बात तो मालिक कुछ नहीं शमशीर [illegible] सड़क पर बैठता

हूँ। टुकड़े बेचता हू यह चपरासी आया। मुझ क्या खबर थी? दो पैसे ज्यादा दाम बता दिये। अल्ला कसम तुमसे झूठ कहूँ तो ईद के दिन दोजख मिले। पेट नहीं भरता कसम से। सो यह यहाँ पकड़ लाया। अब कपड़े जा मुहर लगा दी है और अब पैसे माँगते हैं नहीं तो मुकदमा

तो सत्तार ने कहा—तू भी तो रिआया का गला काटता है?

खुदा की मार हो शमशीर ने कहा—बड़े बड़े सेठ भूखा मारते हैं तब दारोगा कुछ नहीं कहते। यहाँ दो डबल पर ही इन्साफ की तलवार झूल गई।

अबे वे साढ़ हैं एक दूसरे के समझा? वे भी बच्चों का रुपया खर्च करते हैं।

वे तो मुसलमान हैं?

होंगे! मगर इस्लाम से रोटी नहीं मिलती। रोटी सरकार और सेठ देते हैं। वे और हैं हम और हैं। और बेटा तू कौवा होकर हंस की चाल चलेगा तो यही होगा।

शमशीर उदास सा चला गया। उसकी वह विषाद सिक्त श्वास बाजार की विराट दीवारों के बीच से ऐसे निकल गयी जैसे छोटे पटाखे अपना ऊपर का बख्तर छोड़ कर निकल जाते हैं—जगमगाते हुए और फिर आसमान में जाकर फूट जाते हैं लय हो जाते हैं।

वृद्ध सत्तार ने टूटा मोढ़ा एक और खिसका लिया और देखा सामने औरत खड़ी लड़ रही थीं। वह हँसा। उस हसी में कितना व्यङ्ग था कितना विषाद जैसे आज सब कुछ लड़ रहा था। दो दिन से वह गेहूँ नहीं पा सका था। राशन की भीड़ में घुसना उसके लिए असम्भव था। लेकिन यह भूख भी पार करनी है क्योंकि जीना है क्योंकि सल्तनतों का उजड़ना एक मजहबी बात है जैसे भरते भरते घड़ा फूट जाता है और वह फिर गुनगुना उठा—

पहले आती थी हाले दिल की हँसी ।
[आँख उठाकर देखा जैसे अब सब पर आ रही थी ।

देवोत्थान

भोर हुई जागरण हुआ। नन्दन वन में सुरभित समीर अलसाकर गूँज उठा। मादक परिमल की हिलोर से स्निग्ध प्रकाश झिलमिला रहा था। शतदल शय्या पर इन्द्राणी अँगड़ाई भर उठी। सहसा उन युगों की शांति को घरघराहट की भीषण ध्वनि ने तोड़ दिया। चौंककर मेनका उठ बैठी। इन्द्राणी ने उसकी ओर देखा और भयभीत सी दोनों इन्द्र के वक्ष से चिपक गयीं।

देव वृत्र आ रहा है।

देवराज ठठाकर हँस पड़े। बोले देवी यह वृत्र नहीं बर्बर फासिस्टों के वायुयान द्यावा के वक्षस्थल को चीर कर गरज रहे हैं।

ओह प्राणों को धैर्य ने आश्वासन दिया। सिंहद्वार पर दुन्दुभी बजने लगी। गन्धर्वों ने वीणा के तारों पर उँगलियाँ फेरीं। वही अजस्र विलास का महानद उमड़ पड़ा।

इन्द्र ने वज्र को उठाते हुए कहा—देवी एक दिन यह वज्र अभेद्य था, पर न जाने मानव ने इससे भी अभेद्य अस्त्रों का आविष्कार कैसे कर लिया। यह त्याग का वरदान आज न जाने मुझे जीवन से इतनी दूर कैसे खींच लाया ?'

दो काली छायाएं आकर इन्द्र के चरणों पर लेट गयीं।

एक ने कहा—'देव मैं अभी तक आपके शासन का प्रतिनिधित्व कर रहा था।

दूसरे ने कहा—देव मैं आर्थिक रूप से इसकी सहायता कर रहा था।

उर्वशी मुसकराइ। उसनें पूछा— तुम कौन हो इतनें जजर ?

एक ने कहा— मैं अंधविश्वास हूं। अपनी अपनी कमर में डोर बाँधकर दूसरा छोर मानव विश्व में बाँधकर यहाँ तक उड़कर आये हैं।

दूसरे ने कहा— देव मैं साम्राज्यवाद हूं। जर्जर विह्वल हो गया हूँ। अब रहा नहीं जाता। मेरी रक्षा करिए। मेरे अ त के साथ आप का भी तो नाश है।

इन्द्राणी बोल उठी— किन्तु तुमने हमारे नाम पर शोषण और अ याचार क्यों किया ?

साम्रा यवाद पुकार उठा— देव यह मानव तो अब पुरानी लीकों को बिल्कुल छोड़ देना चाहता है। महाराजाधिराज इन अनीश्वरवादी राक्षसों को समाप्त क्यों नहीं कर दिया जाता ?

वरुण ने दौड़कर यम से कहा— चलिए वहाँ कुछ लोगों को दण्ड दीजिए।

यम ने कहा— मगर यह तो कलियुग है। मेरी शक्ति तो क्षीण हो गयी है। क्या करूँ गुस्सा तो बहुत आता है। रुद्र से कहो न कि वे ध्वंस करें !'

देवताओं ने समवेत स्वर से आवाहन किया— हे मृ युञ्जय नृत्यकरो !

महारुद्र ने चरण उठाया कि तु युद्ध की भीषणता से काँपती पृथ्वी पर उनका चरण काँप गया। पार्वती दौड़कर उनके गले से लग गयीं। बोलीं— रहने दो। तुम्हीं एक भोले भाले मिल जाते हो सबको ! यह क्या पाँव लहूलुहान हो गया ?

रक्त से पाँव लाल था।

यम ने कहा— यह तो मृत्युलोक में मानव का बहा हुआ रक्त है।

सरस्वती बोलीं— ओह मेरी वीणा का नाद कोई नहीं सुनता !'

स्वर्ग में कोलाहल मच उठा। त्राहि माम् त्राहि माम् के स्वर से इन्द्र भी विक्षुब्ध हो गये।

उनके मुख से सहसा निकल गया— यह क्या ?

देव ! चीत्कार हुआ । स्वर्ग पृथ्वी से दूर हो चला है ।

अन्ध विश्वास और साम्राज्यवाद क्रोध और भय से काँपने लगे ।

वे बोले — महाराजाधिराज कोई इस डोरी के मानव विश्व में बंधे छोर को काट रहा है ।

लौट जाओ ! लौट जाओ !! इन्द्राणी चिल्लायीं ।

इन्द्र ने कहा— चलो मैं पहुंचा आता हूं । वरुण और सूर्य्य भी साथ चले । इन्द्र ने एक जर्मन वायुयान में बैठने के लिए बुलाया किन्तु उसी समय रूस के ऐन्टी एयरक्रैफ्ट गन के वार से वह हवाई जहाज गिरकर जलने लगा । वरुण काँप उठे । बोले— बाल बाल बचे ! अरे इन्द्र कहाँ आ गये ? कमबख्त लड़ते हैं लड़ने दो ! कौन अपना नुकसान हो रहा है ? पूजा के समय खाने आ जायगे ! चलो ।

इन्द्र ने कहा— नहीं सूर्य्य तपो तपो ! कि यह अनीश्वरवादी भस्म हो जायँ । सूर्य्य लाचारी के स्वर में बोल उठे— क्या बताऊँ ? आप कहेंगे कि पौरुष नहीं रहा । मगर सृष्टि का नियम ही ऐसा है कि मैं दिन पर दिन ठंडा हुआ जा रहा हूँ और उधर रूस की बर्फ पर मेरा कुछ असर भी नहीं होता ।

यह कौन मंत्रोच्चारण कर रहे हैं ? इन्द्र ने पूछा ।

साम्राज्यवाद ने कहा— आर्य्यपुत्र हिटलर और सूर्य्यपुत्र जापान पूजा कर रहे हैं ।

और यह क्या है ? वरुण ने पूछा । साम्राज्यवाद ने खिसिया कर कहा— श्रीमान् यह स्तालिनग्राद है । नाक रगड़ कर मर गये मगर इसे नहीं जीत पाया । यहाँ लोक शक्ति इतनी प्रबल है । समझ के परे की-सी बात है । मुझे कभी-कभी संदेह होता है कि आप तो कहीं इन्हें सहायता नहीं दे रहे ।'

अजी राम भजो भाई साम्राज्यवाद !' इन्द्र ने कहा— यह क्यों

कह रहे हो ? देवताओं पर अविश्वास ! तब तो तुम्हारा नाश अवश्यम्भावी है।

मेरे साथ आपके साम्राज्य का भी तो नाश है।

यह सुनकर इन्द्र असमञ्जस में पड़ गये। वरुण ने इधर उधर देखा। सहसा वह पुकार उठा— इन्द्र वह देखो स्वर्ग कितना धुँधला संकुचित और क्षीण होकर न जाने कहाँ दूर उड़ता चला जा रहा है ?

इन्द्र ने देखा।

वरुण ने फिर कहा— अब अपना स्वर्ग सम्हालियेगा कि यह पृथ्वी ?

इन्द्र ने कहा— चलो।

इन्द्र और वरुण उड़ चले। सूर्य ने रथ को बढ़ाया। साम्राज्यवाद चीख उठा— मौके पर दगा दे रहे हो ?

दूर से आवाज़ आयी— बाज़ आये तुम्हारी दुनिया से।

साम्राज्यवाद पुकार उठा— मैं तो लुट गया !

देवताओं का क्षीण उत्तर सुनायी पड़ा—'मानव जन शक्ति अपार है।

साम्राज्यवाद ने शोर उठायी— यह सिंहासन यह महल यह मदिरा यह अप्सरा

शब्द हवा में तैर उठे— किसान मजदूरों के मुँह कौन लगे !

साम्राज्यवाद गरज उठा— मेरी रक्षा करो

प्रतिध्वनि वायु में विलीन हो गयी— हमें अपनी इज्ज़त प्यारी है। आज से 'तुम्हारी' दुनिया से नाता ही टूट गया'

अन्धविश्वास अब तक चुप था। अब सूर्य्य से बोल उठा— कहाँ जा रहे हो ? सुनो तो !

सूर्य्य ने कहा—'प्रातः सन्ध्या मैं जिस भारत भूमि से अर्घ्य पाता हूँ उसका क्या हाल है ?'

साम्राज्यवाद किटकिटाकर बोला— वह गुलामी में जकड़ी है। भूख या बलात्कार और नङ्गापन मेरा साम्राज्य चला रहे हैं।

सूर्य ने विस्मित होकर पूछा— भीम और अर्जुन के देश में?

साम्राज्यवाद ने कहा— वे तो मर गये। अब वहाँ आपसे भी अधिक मेरा राज्य है?

सूर्य्य ने रथ बढ़ाते बढ़ाते पूछा— यह कब हुआ?

अन्धविश्वास ने कहा— तब देवता सो रहे थे।

सूर्य्य ने कहा— तो क्या चाहते हो?

जापान और जर्मनी का नाश। और गुप्त रूप से चाहते हैं कि रूस भी अधिक न बढ़ने पाए।

सूर्य्य बोला— यह क्या? कहते हो कि बराबरी के लिए धर्म के लिए मानवता के लिए लड़ते हैं और हिन्दुस्तान को आज़ाद नहीं करते? यह कैसी स्वार्थ और अन्धकार भरी बात है?

साम्राज्यवाद बोल उठा— हाँ तुम भी चले जाओ। जब तक जान रहेगी तब तक गुलामी को रखगे

एक हथिया नीचे से आकर अन्धविश्वास के लगा। वह गिर गया। सहसा नीचे से भीषण गरज उठी। उस हुंकार से साम्राज्यवाद काँप उठा।

सूर्य्य ने दूर से पूछा— यह क्या हुआ?"

हिन्दुस्तान में एका हो गया। अब कहाँ बचूं? उन्होंने गुलामी की जंजीरों को तोड़ दिया है।

पृथ्वी से भीषण जनगान ध्वनि उठ रही थी—

हम मज़लूमों की मेहनत से
था स्वर्ग बना साम्राज्य बना
है आज लिया बदला हमने
ऐ झंडे लाल सलाम तुझे।

साम्रा य्याद के पैर लड़खड़ाये और वह मूर्छित होकर गिर गया। आकाश झंडा फहर फहर पूछ उठा—सुना करते थे यहाँ कोई स्वर्ग था? कहाँ है वह स्वर्ग? पृथ्वी से भी अच्छा वह स्वर्ग कहाँ है?

ऐयाश मुर्दे

फकीर चुपचाप चला जा रहा था। यमुना में पानी भयंकर वेग से घोर नाद करता हुआ बह रहा था। आकाश में रेगया रङ्ग छाया हुआ था। शाह के मजार पर रुक कर फकीर बैठ गया। दूर कहीं अल्ला हो अकबर अल्ला हो अकबर का शब्द गूंज उठा। उसके बाद जल्लाहान या अल्लाह तेरा नाम सच्चा है का दूसरा गंभीर लहराता बिनादित स्वर सुनाई पड़ा। शब्द टकरा कर यमुना की भीषण खादरों में लय हो गया और समीरण का तीव्र निश्वास हरे भरे पेड़ों और झाड़ियों में खेल उठा। फकीर ने सुना कोई कह रहा था—दुनिया अजीब है और आदमी उससे भी ज्यादा अजीब! कल का शाहंशाह आज धूल है ताज की मलका मुमताजमहल आज साढ़े तीन हाथ के महल में बन्द है। वह नूरजहाँ जिसके इशारों पर दुनिया हिलती थी रेगिस्तान की वह अनाथ बालिका आज जमीन में कैद है। कोई उसे छुड़ा नहीं सकता मर्जिये अल्लाह।

फकीर के हृदय में एक अशांति जाग उठी। दुनिया एक दौड़ सी लगाती चली जा रही है। लड़ती झगड़ती लेकिन कोई चैन लेने का नाम नहीं लेता। परवर्दिगार! तेरी यही मर्जी है। तू नहीं चाहता वह खुश हो। खुश होकर शायद यह नाचीज़ तुझे भूल जायगा। इसीलिये तो तूने इतने दुःख इतने दर्द दुनिया में फैला दिया है।

दो तीन औरतें बुर्का ओढ़े आईं और मज़ार की परिक्रमा करके

दिया जला कर कुछ मिठाई रख कर ठहर गई। आड़ में से निकल बूढ़े रहमत फकीर ने उनके सर पर हाथ रखकर उन्हें दुआ दी। औरत गई। बूढ़ा रहमत नमाज़ पढ़ने लगा।

फकीर उसी तरह चुप बैठा रहा। दूर एक डोंगी चली जा रही थी। कोई आदमी उसे खे रहा था और सामने एक सुन्दर सी स्त्री बैठी थी। फ़कीर ने मुँह फेर लिया। बूढ़ा रहमत नमाज़ समाप्त कर चुका था। फकीर ने देखा रहमत के मुख पर दिव्य ज्योति उतर आई थी। उसने फिर भी कुछ नहीं कहा। बूढ़े ने खाँसकर कहा—मेरे अजीज! तू जवानी में ही जिन्दगी से क्यों मुँह मोड़ उठा?

फकीर ने धीरे से कुछ कहा। बूढ़ा उसे सुन नहीं सका।

रहमत ने फिर कहा—तू पाक परवर्दिगार की गोद में आ गया है। मैं कहता हू कि अभी से इस राह पर न आ क्योंकि जवानी दीवानी है। फिसल जाने पर खुदा का दिया लिबास बदनाम हो जाता है। देख वह तूर का जलवा।

बूढ़े ने फुर्ती से हाथ का इशारा किया। फकीर चुप बैठा रहा। हिला नहीं। बूढ़े ने कहा—देखा नहीं नादान?

फकीर ने कहा—रसूले खुदा मज़ाक करना पसंद नहीं करते। तूर क्या है? यह दुनिया खुद तूर है।

बूढ़े ने कहा—शाबाश! इस मजार पर मुझे औरतों और बच्चों को गंडे ताबीज देते हुए बरसों हो गये लेकिन मेरे चेले सादुल्ला और रज्ज़ाक ने ऐसी बात कभी भी नहीं कही। यहाँ हर तरह की औरत आती है मनौती मानती है दुआ करती है लेकिन वे दोनों कभी पाक बातें नहीं करते। तू कौन था।

फकीर ने कहा—मैं एक रफ़ूगर का बेटा हूँ। घर में कोई नहीं बचा। दिल उचट गया। तभी से फकीर हू। जामा मस्जिद की छाया में सोता हू, राह चलते मुझे खाने को दे जाते हैं।

रहमत ने कहा—चल अब तू यहीं रहा कर और खैरात किया कर।

फकीर ने सुना और देखा की बूढ़ा रहमत गाता हुआ एक ओर चल पड़ा। फकीर सुनता रहा और फिर वहीं लेट गया।

बूढ़े का गाना अब भी सुनाई दे रहा था—अगर तुझे नाज़ है तो सुन कि महल आज वीरान खंडहर बने पड़े हैं। हमने राजा और भिखारी को मरघट में साथ-साथ जलते हुये देखा है। पागल! आग से खेल कर कब तक बचा पायेगा? यह मेला केवल दो साँसों का है नादान! यह बुखार भी उतर जायगा।

बुढ़ापे की वह करुण भर्राहट धीरे धीरे दूर होती होती शून्य में लय हो गई। फकीर ऊँघने लगा।

[२]

रज्जाक ने एक बार सादुल्ला की तरफ आँख मारी और फकीर से कहा—अमाँ तुम तो एकदम साईं बन गये। इतने दिनों में तो अल्लाह कसम फरिश्ते भी बोल पड़ते।

सादुल्ला ने टोककर कहा—चुप बे। हाँ तो नहीं। सुनाते दे उ हैं।

फकीर ने कहा—तुम दोनों को हमेशा मज़ाक सूझती है।

सादुल्ला ने कहा—आप कह रहे थे आपकी वालदा बड़ी अच्छी हैं। फिर आप उनके पास तो कभी नहीं जाते।

फकीर ने उत्तर दिया—क्या जाऊँ? दुनिया में जितना पैर रखोगे उतना ही फँसोगे। दूर ही दूर रहना अच्छा है। वालिद ने मुझे रफू का काम सिखाया था मगर उनके गाहक हमेशा कहते थे—मियाँ क्या रफू किया, यह तो सब फट चला? वालिद हँसकर कहते थे—अरे बाबू साहब रफूगर तभी तो दर्जी से कम समझा जाता है वर्ना आप भी नया ही न सिलवा लेते?

रज्जाक ठठा कर हँस पड़ा। उसने कहा—अल्लाह क़सम! क्या बात कही है॥ यह न होता तो क्या हमारे पुराने पीर तुम्हें गद्दी दे कर

जाते ? भला करे उसका जिसने तुम्हारे आने के लिये यह रास्ता दिखाया। आज से हम तुम्हारे ग़ुलाम हैं।

फकीर के होठों पर एक फीकी सी मुस्कराहट तैर गई। रज़्ज़ाक और सादुल्ला मजार के पीछे की ओर जाकर सोने लगे। फकीर चुपचाप बैठा रहा।

एक औरत आकर कुछ दुआ माँगने लगी। उसने अपना मुंह खोल दिया। फ़कीर ने देखा। उसके गोरे मुँह पर काली ज़ुल्फ काँप रही थीं। फ़कीर का दम घुटने लगा। औरत दुआ माँगकर चली गई। फकीर इस औरत को आज तीन दिन से इसी तरह आता देख रहा था। वह आकर कुछ दुआ माँगती और चली जाती। फकीर प्राय निर्विकार सा बैठा रहता किन्तु आज उसका मन हिल उठा। जैसे शमा की लौ हिलते ही चारों तरफ का अँधेरा हिलकर उसे खाने दौड़ता है उसी प्रकार आज उसके मन में वासना गूंज उठी। फ़कीर उसे देखता रहा तब तक जब तक कि वह दूर झाड़ियों के पार नहीं हो गई।

उसके बाद वह उद्विग्न सा टहलने लगा। उसके हृदय में बेचैनी सी भर गई। उसने बैठकर वहीं नमाज़ पढ़नी शुरू कर दी।

[३]

फकीर को देखकर उस स्त्री ने बुर्का मुंह पर खींच लिया वह एक दम सकपका गई। फकीर ने गंभीर स्वर में पूछा—तू क्यों आती है यहाँ रोज़ ?

औरत ने धीमे स्वर में कहा—बाबा! मनौती मानती हूं।

फ़कीर ने पूछा—किस लिये दुआ करती है तू ?

औरत ने उत्तर दिया—बाबा! मैं औलाद चाहती हूँ मेरे कोई औलाद नहीं होती।

औलाद ! फकीर ने बैठते हुए कहा औलाद के लिये किस्मत चाहिए।

मैंने बड़ी मनौतियाँ मानीं ! दर्जनों कब्रों पर दीपक जलाये ताज़ियों का साया किया पीरों के मज़ारों पर लोहबान दिया। मगर कुछ भी नहीं हुआ। कल्लन की माँ ने कहा था कि शाह के मज़ार जा वहाँ एक फकीर हैं जो गीली मुल्तानी में आग लगा दें पानी पथर कर दें।

इस मज़ार पर तो मैं हूँ। फकीर ने सिर उठाकर कहा—लेकिन मैं तो कभी गंडा तावीज़ नहीं बाँटता ?

आप नहीं जानते ? स्त्री ने उत्सुकता से पूछा।

फकीर का दिल धड़क उठा। उसने कहा—जानता ? जा-जा अपने घर जा। यहाँ कोई एसा काम नहीं होता। समझी ? अल्लाह की दुआ कर। अपनी अपनी किस्मत ! या परवर्दिगार

उसने यान में मग्न होकर आँख बन्द कर लीं। स्त्री मन ही मन प्रसन्न हो गई। उसने आगे बढ़कर फकीर के पैर पकड़ लिये। फकीर ने कहा—क्या है ? तू गई नहीं ?

औरत ने घिघिया कर कहा—आप मालिक हैं अगर आप अपने बंदों पर रहम नहीं खायगे तो हमारा हम गरीबों का और कौन है ?

फकीर देखता रहा। औरत फिर कहने लगी—क़सम है मेरे सिर की मेरे रसूल ! वह तो चुड़ैल मुंतो है जो मेरे मरद पर डोरे डाल रही है। मैं कहीं की न रहूगी मेरे मालिक ! अगर मेरे बच्चा नहीं हुआ। वह मुझे छोड़कर मुंतो को बसा लेगा। फिर तो यह एक वक्त की रोटी भी न मिलेगी। आप पर खुदा का हाथ है अभागों पर उसका साया पड़ जाय तो सारी तकलीफें मिट जाय।

फकीर फिर भी चुप रहा। वह कुछ सोचने लगा। पाप और पुण्य का भीषण संघर्ष उसके हृदय में उथल पुथल मचा रहा था। उसने सिर उठा कर देखा स्त्री की आँखों में आँसू छलक आये थे। फकीर ने गंभीर स्वर में कहा—तो दिया बले आ जाना।

स्त्री सिर झुका कर चली गई। फकीर बौराया सा इधर-उधर घूमने

लगा। मजार के चारों तरफ तो चक्कर लगा कर देखा सादुल्ला और रज्जाक कोई भी वहाँ नहीं था। उसने सन्तोष से एक लम्बी साँस ली और फिर वहीं लौट आया।

[४]

रात हो गई। चारों ओर अंधकार छा गया। फकीर ने फूक मार कर मज़ार पर जलते चिराग को बुझा दिया। हवा धीरे धीरे काँपती हुई भाग रही थी। आसमान में अनेक तारे निकल आये थे। बढ़ती अंधकार में यौवन की सुलगान कूक उठी थी। फ़कीर आतुर सा देख रहा था। एकाएक वह उठ खड़ा हुआ। स्त्री सामने खड़ी थी। फ़कीर अंधकार में उसको घूरने लगा। स्त्री ने कहा—बाबा? मैं आ गई हूं।

फ़कीर ने धीरे से कहा— यहाँ बैठ कर दुआ माँग।

स्त्री घुटने के बल बैठ गई और प्रार्थना करने लगी। फकीर देखता रहा। जब वह उठ खड़ी हुई फकीर ने कहा—अब यह बुर्का उतार दे। अल्लाह चाहेगा तो तू जल्द ही माँ हो जायगी।

स्त्री का मन पुलक उठा। उसने निःशंक होकर बुर्का उतार दिया। फ़कीर ने देखा बुर्का एक कफ़न था जिसमें उसे जिन्दा ही लपेट दिया गया था। भीतर वह केवल कुर्ता और पाजामा पहने थी। फ़कीर ने कहा—उधर चल।

स्त्री कुछ भी नहीं समझी। वह फ़कीर के पीछे-पीछे मज़ार के पीछे चली गई। सड़क ओट में आ गई।

अंधकार में सहसा फकीर ने उसका हाथ पकड़ लिया। स्त्री काँप उठी। उसने भर्राये स्वर से कहा—आप साईं! आप?

फ़कीर पागल हो रहा था। उसने उसे अपनी ओर खींच कर उसे अपने शरीर से लगा कर भींच लिया। स्त्री छटपटाने लगी। उसके मुँह से निकला मैं तुम्हारी बेटी हूं बाबा! यह क्या कर रहे हो?

फ़क़ीर ने कुछ नहीं कहा। वह पशु सा उ मत्त हो गया था। स्त्री ज़ोर से चिल्ला उठी और दोनों हाथों से उसने फकीर के मुँह को नोंच लिया। फक़ीर उसे लेकर पृथ्वी पर गिर गया।

इसी समय पास ही में पैरों की आहट हुई। किसी ने जोर से हँस कर कहा—अबे र ?क। रात तो ऐसी है कि बजार चलते! यहाँ क्या है कमबख्त!

फकीर ने सुना। स्त्री चिल्ला उठी—बचाओ! बचाओ! यह मरदुआ मुझे

फकीर ने जोर से उसका मुह दाब दिया। स्त्री की आवाज़ घुट गई। पग ध्वनि जल्दी जल्दी पास आने लगी। फकीर ने देखा और भय से वह काँप उठा। पलक मारते वह पृथ्वी पर से उठा और मज़ार पर चढ़कर कूद गया।

स्त्री ने उठकर देखा उसके कुर्ते के बटन टूट गये थे और जगह जगह से फट गया था जिसके भीतर से उसका गोरा बदन झाँक रहा था और दोनों तरफ दो आदमी कुत्तों की तरह उसे घूर रहे थे। वह बड़े जोर से चिल्ला उठी किन्तु उसकी आवाज निर्जन से टकरा कर विलीन हो गई। सादुल्ला और रज्जाक ठठा कर हस पड़े।

रज्जाक ने कहा—अबे सादुल्ला शाबाश। फकीरों की मौत के बाद भी अच्छी कटती है! कहाँ तो ये जिंदे हैं कि कभी कोई नहीं आई और यहाँ इन मरों के ऐश हो रहे हैं।

सादुल्ला ठठा कर हँस पड़ा और उसने उस स्त्री का हाथ पकड़ लिया। स्त्री भय से काँप उठी। उसका श्वास रुद्ध हो गया।

उस समय रात गहरी हो गई थी। और शाह का मजार सो रहा था।